''महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन''

(बलिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में)

पीएच.डी. (समाजशास्त्र)

विषय में उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबंध

सत्र–2024

शोधार्थी

अजय कुमार विक्रम

नामांकन संख्याः 161590514156

शोध निर्देशिका

प्रो.(डॉ.) महालक्ष्मी जौहरी

प्रो0समाजशास्त्र विभाग

पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (मध्यप्रदेश)

पी0 के0 विश्वविद्यालय,शिवपुरी(मध्य प्रदेश)

प्रो.(डॉ.) महालक्ष्मी जौहरी
प्रोफेसर, समाजशास्त्र

समाजशास्त्र विभाग,
पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

प्रमाण–पत्र

यह प्रमाणित किया जाता है कि अजय कुमार विक्रम द्वारा ''महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (बलिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में)'' शीर्षक पर मेरे निर्देशन में शोध प्रबन्ध पूर्ण किया गया।

प्रस्तुत शोध प्रबंध की सामग्री मौलिक है। यह सम्पूर्ण या आंशिक रूप से किसी परीक्षा के लिये प्रयोग नहीं की गयी है। यू.जी.सी. विनिमय 2018 के अनुसार शोधार्थी का शोध कार्य किसी अन्य शोध प्रबन्ध की अनुकृति नहीं है।

इन्होंने मेरे निर्देशन में 240 दिन से अधिक उपस्थित होकर शोध पूर्ण किया है। मै संस्तुति करती हूँ कि यह शोध प्रबन्ध इस योग्य है कि मूलयांकन हेतु विश्वविद्यालय को प्रस्तुत किया जाये।

प्रो.(डॉ.) महालक्ष्मी जौहरी
प्रोफेसर समाजशास्त्र
समाजशास्त्र विभाग
पी.के. विश्वविद्यालय ,शिवपुरी (म.प्र.)

अजय कुमार विक्रम
शोधार्थी

समाजशास्त्र विभाग,
पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)

घोषणा–पत्र

मैं घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध–ग्रन्थ मेरे स्वयं के द्वारा किया गया वास्तविक कार्य है। यह कार्य मैंने परम श्रद्धेय शोध निर्देशिका **प्रो.(डॉ.) महालक्ष्मी जौहरी** के निर्देशन में सम्पन्न किया है। यह शोध ग्रन्थ..... से ..... अवधि तक शोध निर्देशिका **प्रो.(डॉ.) महालक्ष्मी जौहरी** के निर्देशन में शोधार्थी द्वारा लिखा गया है। मैंने शोध केन्द्र पर शोध निर्देशिका के पास 240 दिवसों से अधिक की उपस्थिति दर्ज कराई है।

मैं यह भी घोषणा करता हूँ कि मेरी पूर्ण जानकारी के अनुसार शोध प्रबंध में कोई ऐसा भाग नही है जो इस विश्वविद्यालय या किसी अन्य विश्वविद्यालय में बिना उचित दृष्टांत प्रस्तुत किया गया है।

दिनांक :

शोधार्थी

अजय कुमार विक्रम

Ajay Kumar Vikram

पी.के. विश्वविद्यालय  शिवपुरी (म.प्र.)

FORWARDING LETTER OF HEAD OF INSTITUTION

The Ph.D Thesis entitled, ''महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (बलिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में)''submitted by Ajay Kumar Vikram (Enroll. No. 161590514156) is forwarded to the university in six copies. The candidate has paid the necessary fees and there are no dues outstanding against him/her.

Name……. Seal……..

Date ……...

Place …….

(Signature of Head of Institution where the Candidate was registered for Ph.D degree)

Signature of the Supervisor

Date ……

Place ……..

Address……...

पी.के. विश्वविद्यालय  शिवपुरी (म.प्र.)

कॉपीराइट अतंरण प्रमाण पत्र

शोध शिर्षकः **''महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (बलिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में)''**

शोधार्थी :**अजय कुमार विक्रम**

नामांकन संख्या : 161590514156

कॉपीराइट अतंरण

एत्द द्वारा अधोहस्ताक्षरी विद्यावारिधि उपाधि के लिए प्रस्तुत किये गये अपने शोध ग्रन्थ के कॉपीराइट का अधिकार **पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी (म.प्र.)** को सौपता हूँ।

दिनांक–

शोधार्थी का नाम : अजय कुमार विक्रम

ह0 शोधार्थी : Ajay Kumar Vikram

टिप्पणी – यद्यपी लेखक स्वयं या अन्य को अधिकृत कर सकता है कि वे शोध ग्रन्थ के व्युतपादित सामग्री को लेखक के निजी उपयोग के लिए लेते हुए स्रोत व विश्वविद्यालय के कापीराइट सूचना का उल्लेख करें।

आभार

वर्तमान युग में मानव सभ्यता ने विकास के नये–नये कीर्तिमान बनाएं हैं एवं सफलताएं प्राप्त की हैं लेकिन मानव सभ्यता आज भी महिलाओं के साथ न्याय नहीं कर पाई है। मानव सभ्यता के इस विकास में मानव ने महिलाओं को आज भी कहीं पीछे छोड़ रखा है जिससे महिलाओं को लैंगिक भेदभाव एवं शोषण का सामना करना पड़ता है। आज भी महिलाओं को अपनी स्वतंत्रता, अधिकारों एवं आत्मनिर्भरता के लिए समाज के बंधनों से टकराना एवं जूझना पड़ता है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर एवं समस्याओं की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करने के लिए शोधकर्ता ने **"महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (बलिया जनपद के विशेष संदर्भ में)"** समस्या का चयन किया है।

प्रस्तुत शोधकार्य की निर्विघ्न सम्पन्नता के लिए सर्वप्रथम मैं परमपिता परमेश्वर को हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

मैं अपने परम् पूजनीय पिता जी **श्री रामू यादव** एवं पूजनीय माता जी **स्वर्गीय श्रीमती शारदा देवी** के चरणों में अपना शोध कार्य समर्पित करता हूँ जिनके आशीर्वाद से मुझे नवीन ज्ञान की प्राप्ति हुई एवं मेरे जीवन को नई दिशा मिली। मैं सदैव उनका आभारी रहूँगा।

मैं अत्यन्त आभारी हूँ, पी.के. विश्वविद्यालय, शिवपुरी, मध्यप्रदेश के माननीय कुलाधिपति **श्री जगदीश शर्मा जी** एवं सम्माननीय कुलपति महोदय **प्रो.(डॉ.) योगेश दूबे जी**, **डॉ. दीपेश नामदेव जी** (कुलसचिव), प्रशासनिक निदेशक **डॉ. जितेन्द्र कुमार मिश्रा जी**, डीन अकादमिक **डॉ. एमन फातिमा जी**, डीन रिसर्च **डॉ. भास्कर नल्ला जी** एवं पुस्तकालय अध्यक्षा **निशा यादव जी** एवं समस्त कर्मचारियों के प्रति जिनके सहयोग से शोध सामग्री यथा संभव उपलब्ध हो सकी। जिनके अमूल्य सुझावों एवं सहयोग से यह शोध कार्य पूर्ण हुआ।

प्रस्तुत शोधकार्य परम् श्रद्धेय **प्रो0(डॉ0) महालक्ष्मी जौहरी**, विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, पी0के0 विश्वविद्यालय के मार्गदर्शन, उत्साहवर्धन व सानिध्य में सम्पन्न करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसके लिए मैं स्वयं को भाग्यशाली समझता हूँ। आपके अमूल्य परामर्श, कुशल निर्देशन, कठोर परिश्रम एवं लगातार नियमित प्रेरणा के फलस्वरूप ही मेरा प्रस्तुत शोधकार्य समय पर प्रस्तुत हो सका। आपकी विद्वता, सौभाग्य विलक्षणता एवं प्रोत्साहित करने वाली प्रवृत्ति सदैव प्रेरणा देती रहेगी। अतः मैं हृदय से आपके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

साथ ही साथ मैं अपने अनुज **प्रमोद कुमार विक्रम**, दोनों बहिनों **श्रीमती ममता यादव** एवं **पूजा यादव** का भी आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने जीवन के हर मोड़ पर प्रेरणा और शक्ति प्रदान की है।

इस शोधकार्य में सहयोग एवं समय प्रदान करने हेतु मैं सभी उत्तरदाताओं के प्रति आभार एवं कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। उनके सहयोग के बिना यह कार्य सम्भव नहीं था।

प्रस्तुत शोधकार्य को पूर्ण करने में मैंने सम्बद्ध अनेकों, रचनाओं, पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन किया तथा दृष्टि प्राप्त की। जगह–जगह इनके महत्त्वपूर्ण चीजों को प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में समाविष्ट किया। अतः मैं उन समस्त लेखकों एवं सम्पादकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनकी रचनाओं का सहयोग लेकर इस शोध कार्य को पूर्ण किया है।

मैं अपने सहयोगी एवं मित्र **डॉ. संदीप सोनी**, **मुहम्मद इजहार खान** का भी आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने मेरा मनोबल सुदृढ़ किया एवं प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मेरा शोध कार्य पूर्ण करने में सहयोग प्रदान किया।

दिनाँक : **शोधार्थी**

अजय कुमार विक्रम

अनुक्रमणिका

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ट संख्या
	प्रमाणपत्र	
	आभार	
	प्रस्तावना	i–vii
	अध्ययन पद्धति	viii–xx
अध्याय–1	महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय के ऐतिहासिक एवं सामाजिक संदर्भ	1-46
1.1	उत्तर वैदिक काल में महिलायें	6-11
1.2	सूत्र काल में नारी	11-15
1.3	मनुस्मृति काल में महिलाओं की स्थिति	16-25
1.4	बौद्ध काल में महिलाओं की स्थिति	25-28
1.5	चोल काल में महिलाओं की स्थिति	28-35
1.6	सल्तनत काल में महिलाओं की स्थिति	35-42
1.7	प्राचीन काल से स्वतंत्रता प्राप्ति तक बलिया में महिलाओं की स्थिति	42-45
1.8	निष्कर्ष	45-46
अध्याय–2	भारतीय संदर्भ में महिलाओं का विकास एवं सामाजिक न्याय	47-135
2.1	पितृसत्तात्मकता और संरचनात्मक अवरोध	48
2.1.1	प्रधान पति, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व का संकट	49-50
2.1.2	रेलू श्रम, अर्थव्यवस्था	50-53
2.2	संवैधानिक एवं विधिक ढाँचा	53-54
2.2.1	मुख्य संवैधानिक व कानूनी प्रावधान	54-56
2.2.2	अपराध व संरक्षण क़ानून	56-57
2.2.3	महिलाओं के लिए पारित किये गए विभिन्न अधिनियम	58

2.2.4	अन्य प्रयास	58-60
2.3	न्यायिक प्रतिनिधित्व, न्यायिक सुधार और लैंगिक संतुलन	60-61
2.3.1	सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय और अधीनस्थ न्यायपालिका में महिलाओं की स्थिति	61-64
2.3.2	न्यायिक प्रतिनिधित्व	64-67
2.4	क्रियान्वयन चुनौतियाँ और संस्थागत बाधाएँ	67-68
2.4.1	महिला अपराध, न्यायिक पेंडेंसी और पुलिस व्यवहार	68-69
2.4.2	कानूनी साक्षरता और न्याय तक पहुँच	70-72
2.5	महिला शिक्षा और साक्षरता	72-77
2.6	ग्रामीण न्याय, **SHG**, और महिला स्वयं सहायता ग्रामीण	77-79
2.7	महिलाओं के मानवाधिकार	79-108
2.8	महिलाओं की प्रस्थिति	108-110
2.8.1	सत्ता और प्रस्थिति	111-113
2.8.2	समाज में महिलाओं की प्रस्थिति	113-116
2.8.3	प्रारम्भिक समाजों में महिलाओं की प्रस्थिति : समतावादी से पितृसत्तात्मक समाजों की ओर परिवर्तन	116-123
2.8.4	विभिन्न धर्मो में महिलाओं की प्रस्थिति	124-135
अध्याय–3	सामाजिक न्याय के माध्यम से महिलाओं के विकास की भूमिका	136-159
3.1	राजनीति के क्षेत्र में महिलाओं की वर्तमान स्थिति	135-145
3.1.1	बलिया जिले के संदर्भ में	145-149
3.2	भारत की नौकरशाही में महिलाओं की स्थिति	149-151
3.3	महिलाओं के समक्ष चुनौतियां	151-159
अध्याय–4	भारत में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति	160-193
4.1	महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता का वैश्विक परिप्रेक्ष्य	160-164
4.1.1	बलिया जिले में महिला सशक्तिकरण	165-166
4.2	भारत में महिला उद्यमिता का वर्तमान स्वरूप	166-170

4.2.1	बलिया जिले में महिला उद्यमिता का वर्तमान स्वरूप	172-173
4.3	श्रम क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति	173-179
4.4	बलिया में श्रम क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति	179-183
4.5	महिला श्रम का सामाजिक और आर्थिक योगदान	183-188
4.6	महिलाओं की समकालीन चुनौतियाँ और संभावनाएँ	188-193
अध्याय–5	सामाजिक न्याय द्वारा महिला विकास के अनुभवजन्य अध्ययन बलिया जिले के विषेश संदर्भ में	194-218
5.1	व्यावसायिक शिक्षा	200-201
5.2	शिक्षा एवं व्यवसाय के क्षेत्र में	201-203
5.3	महिला उद्यमिता	203-204
5.4	महिलाओं को राजनैतिक अवसरों की उपलब्धता	205-206
5.5	राजनीतिक अवसरों का लाभ	206-208
5.6	महिला उद्यमिता	208-209
5.7	शारीरिक हिंसा	209-211
5.8	मानसिक हिंसा	211-212
5.9	यौनिक हिंसा	212-218
	निष्कर्ष	219-223
	सुझाव	224-227
	सन्दर्भग्रन्थ–सूची	
	साक्षात्कार अनुसूची	
	प्रकाशित शोध पत्र–1	
	प्रकाशित शोध पत्र–2	

सारिणी–सूची

सारिणी क्र0	शीर्षक	पृष्ठ सं0
2.1	न्यायपालिका में महिला प्रतिनिधित्व	63
2.2	राज्यवार अंतर	69
2.3	कानूनी साक्षरताः राज्यवार स्थिति	70
2.4	महिला शिक्षा और साक्षरता	74
2.5	बलिया जिले में महिला शिक्षा की स्थिति	75
2.6	महिला स्वयं सहायता समूह	78
2.7	कुल केन्द्र	78
2.8	कानूनी साक्ष्रता	79
4.1	भारत में महिला उद्यमिता का क्षेत्रवार वितरण (2023–24)	167
4.2	भारत में महिला श्रम भागीदारी दर	171
4.3	महिला उद्यमिता से रोजगार सृजन	172
4.4	बलिया में महिला श्रम भागीदारी से संबंधित आँकड़े	177
5.1	महिला उत्तरदाताओं का सामाजिक वितरण	196
5.2	महिला उत्तरदाताआ की पारिवारिक संरचना	197

5.3	महिला उत्तरदाताओं की शिक्षा	197
5.4	रोजगार स्थिति	198
5.5	जातिगत पृष्ठभूमि	198
5.6	धार्मिक पृष्ठभूमि	199
5.7	वैवाहिक स्थिति	199
5.8	व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा की ओर उन्मुखता	200
5.9	शिक्षा एवं व्यवसाय में सम्बन्ध	202
5.10	शिक्षा एवं व्यवसाय में सम्बन्ध	204
5.11	राजनीतिक अवसरों की उपलब्धता	205
5.12	राजनीतिक अवसरों का लाभ	206
5.13	महिला के उद्यमिता से संबंधित आँकड़े	208
5.14	महिलाओं के प्रति शारीरिक हिंसा सम्बन्धी विवरण	210
5.15	मानसिक हिंसा सम्बन्धी आंकड़ों का विवरण	211
5.16	यौनिक हिंसा सम्बन्धी विवरण	212

P.K.UNIVERSITY
SHIVPURI (M.P.)

UniversityEstablished Under section 2F of UGC ACT 1956 Vide MP Government Act No 17 of 2015

CENTRAL LIBRARY

Ref. No. PKU/C.LIB /2025/PLAG. CERT./ 186 Date: 29.01.2025

CERTIFICATE OF PLAGIARISM REPORT

1. Name of the Research Scholar	:	Ajay Kumar Vikram
2. Course of Study	:	Doctor of Philosophy (Ph.D.)
3. Title of the Thesis	:	महिलाओ के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन (बलिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में)
4. Name of the Supervisor	:	Prof. (Dr.) Mahalaxmi Johri
5. Department	:	Art
6. Subject	:	Sociology
7. Acceptable Maximum Limit	:	10% (As per UGC Norms)
8. Percentage of Similarity of Contents Identified	:	8%
9. Software Used	:	Drillbit
10. Date of Verification	:	23.11.2024

29.01.25

(Librarian, Central Library)
P.K.University, Shivpuri (M.P.)

LIBRARIAN
P.K. University
Shivpuri (M.P.)

ADD: VIL: THANRA, TEHSIL: KARERA, NH-27, DIST: SHIVPURI (M.P.) -473665
MOB: 7241115902, Email: library.pku@gmail.com

प्रस्तावना

किसी भी सभ्य समाज की स्थिति उस समाज में स्त्रियों की दशा देखकर ज्ञात की जा सकती है। महिलाओं की स्थिति में समय–समय पर देश काल के अनुसार परिवर्तन होता रहा है। समय के साथ भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन हुये जिससे महिलाओं की स्थिति में दिन–प्रतिदिन गिरावट आती गई तथा गरीब महिलाओं पर इसका अधिक प्रभाव पड़ा, क्योंकि सैकड़ों वर्षों की परतन्त्रता के कारण भारतवर्ष विश्व के सबसे गरीब देशों में से एक है। समाज के निर्माण में महिलाओं की भूमिका उतनी ही प्रमुख है जितनी कि शरीर को जीवित रखने के लिये जल, वायु, और भोजन हैं। स्त्रियां ही संतति की परम्परा में मुख्य भूमिका निभाती हैं फिर भी प्राचीन समाज से लेकर आधुनिक कहे जाने वाले समाज तक स्त्रियां उपेक्षित ही रही हैं। उन्हें कम से कम सुविधाओं, अधिकारों और उन्नति के अवसरों में रखा जाता रहा है, इसी कारण महिलाओं की परिस्थिति अत्यन्त निचले स्तर पर है। भारतीय समाज की परम्परागत व्यवस्था में महिलायें आजीवन पिता, पति और पुत्र के संरक्षण में जीवन–यापन करती रही हैं। भारतीय संविधान में पुरूषों एवं महिलाओं को समाज दर्जा और अधिकार दिये जाने के बावजूद इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि विकास और सामाजिक स्तर की दृष्टि से महिलायें अभी पुरुषों से काफी पीछे हैं। भारतीय समाज में महिला आज भी कमजोर वर्गों में शामिल हैं। महिला परिवार की आधारशिला है और सामाजिक विकास बहुत कुछ उसी के सद्प्रयासों से सम्भव है। जिस समाज की महिलायें उपेक्षा और तिरस्कार का शिकार होती हैं वह समाज कभी प्रगति नहीं कर सकता।

महिलाओं के ऊपर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक, व्यवसायिक एवं अन्य अनेक ऐसी निर्योग्यतायें लाद दी गई हैं जिसके कारण उन्हें जीवन में आगे बढ़ने एवं व्यक्तित्व का समुचित विकास करने का अवसर नहीं मिलता। ये निर्योग्यतायें उनके लिए बहुत बड़ी चुनातियां एवं समस्यायें बनकर उभरी हैं । इन निर्योग्यताओं के कारण कार्य में दक्षता, योग्यता एवं कुशलता होने के बावजूद ये महिलायें न तो सार्वजनिक क्षेत्र में अपना योगदान कर सकती थी और न शिक्षा प्राप्त कर सकती थीं, न उच्च संस्थानों में नौकरी कर सकती थीं और न किसी प्रकार का धार्मिक कार्य

बिना पुरूष के सम्पादित कर सकती थीं। पुरुष वर्ग के साथ खानपान पर प्रतिबन्ध था। महिलाओं के लिये उच्च शिक्षा के दरवाजे पूर्णतया बन्द थे जिससे उन्हें विवशतापूर्ण जिन्दगी घर की चहारदीवारी के अन्दर व्यतीत करनी पड़ती थी। इन्हें पढ़–लिखकर नौकरी करने के अधिकारों से वंचित रखा गया था। महिलाओं की बदतर स्थिति के लिये मूलरूप से ही लड़कों, लड़कियों को संस्कार रूप में मिलने वाली सोच जिम्मेदार है, उसके बाद पारिवारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक परम्परायें, मूल्य तथा रीति–रिवाज इस दृष्टिकोण की ओर पुष्टि करते हैं। अत : इस सोच में बदलाव लाना महिला विकास की सबसे बड़ी चुनौती है।

महिलाओं की शिक्षा पर बल देते हुये विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948) के ये ऐतिहासिक शब्द भी ध्यान देने योग्य हैं, जो निम्न हैं–

> *"शिक्षित स्त्री के बिना शिक्षित पुरुष हो ही नहीं सकता। यदि पुरूषों और स्त्रियों में से केवल किसी एक के लिये सामान्य शिक्षा का प्रावधान करना हो तो यह अवसर स्त्रियों को दिया जाना चाहिए क्योंकि यह शिक्षा स्वयंएमेव अगली पीढ़ी को प्राप्त हो जायेगी।"*[1]

सन् 1963 के वनस्थली विद्यापीठ में भाषण देते हुये पं० जवाहर लाल नेहरू ने भी इसी तथ्य को दोहराया था कि लड़के की शिक्षा केवल एक व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु एक लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है।

उपरोक्त विवेचन से महिलाओं के लिये शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व स्पष्ट होता है लेकिन स्त्री शिक्षा इतनी आवश्यक होते हुये भी उपेक्षित है इसलिये महिलाओं के सामने यह एक जटिल समस्या एवं चुनौती के रूप में उभरकर सामने आयी है। शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी दृष्टियों से महिलायें अभी भी पिछड़ी हुई है। कानूनी और संवैधानिक दृष्टि से अनेक अधिकार प्राप्त होने और योजनागत विकास कार्यक्रमों के प्रावधानों के बावजूद महिलाओं की परिस्थिति सोचनीय ही है।

---

[1] डा0 केसरी, मार्डन हिन्दु लॉ, 2009, सी.एल.ए. प्रकाषन, पृ0 36

स्वामी विवेकानन्द के कथनानुसार कोई राष्ट्र तब तक अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता जब तक कि उसका प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के विकास में भागीदार नहीं बनता।

इस प्रकार स्त्री एक अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र का स्रोत होती है। विद्या से ही व्यक्ति संकीर्ण मानसिकता और रूढ़िवादिता की जंजीरों को तोड़ सकता है। यदि स्त्री शिक्षित है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है। शिक्षा ही हमें सामाजिक भेदभावों और ऊँच–नीच की भावनाओं से उबारने का काम करती है। इसलिये स्त्रियों का शिक्षित होना बहुत आवश्यक होता है क्योंकि उसके विचार ही उसके बच्चे होते हैं अगर वह अपने बच्चों को इन रूढ़िगत विचारों से दूर रखे और यह बताये कि कोई छोटा या बड़ा नहीं होता। व्यक्ति के कार्य और विचार ही उसे छोटा या बड़ा बनाते हैं। यदि माता अपने बच्चों में जाति–भेद और धर्म–भेद रहित विचारों का बीजारोपण करे तो आगे चलकर वह एक ऐसा वृक्ष बनेगा जिसमें सामाजिक–समरसता से पूर्ण फल लगेंगे जो बिना किसी भेदभाव के छाया भी प्रदान करेगा।

इस प्रकार एक शिक्षित स्त्री एक शिक्षित देश को जन्म देती है। यदि हम इतिहास पर नजर डालें तो हमें ऐसी बहुत सी विदुषी स्त्रियों के नाम मिल जायेंगे जिन्होंने अपनी विद्यता का लोहा मनवाया था और इस प्रकार इतिहास में अपना नाम अमर करवा लिया था। ऐसी स्त्रियों में अपाला, घोषा, गोपा, सावित्री, मैत्रेयी और गार्गी जैसी अन्य अनेक स्त्रियों के नाम मिलते हैं जिन्होंने विद्यार्जन कर स्त्रियों के अस्तित्व को गौरव प्रदान किया था। उनकी शक्ति थी उनकी विद्या, लेकिन बाद के कालों में उनकी यह शक्ति उनसे छीनी जाने लगी। उन्हें विद्या से रहित कर दिया गया और यही उनकी स्थिति की अवनत का कारण बना। देखा जाये तो आज भी वो स्थिति प्राप्त नहीं कर पाई है। हालांकि कुछ हद तक उसने अपने को उबारा है, लेकिन अभी भी पूर्णरूपेण उन्नति होना बाकी है। सामाजिक कुरीतियों का उसे शिकार बनाया गया। छोटी उम्र में विवाह प्रारम्भ हुये, उपनयन संस्कार से उसे वंचित किया जाने लगा, फलस्वरूप उसका व्यक्तित्व कुंठित हो गया है। बाल–विवाह के कारण शिक्षा उससे छिन गई और तब यह केवल संभ्रान्त परिवारों की स्त्रियों तक ही सीमित हो गई या पुरूष की संकीर्ण मानसिकता, स्त्री को शिक्षा से वंचित होना पड़ा जिसके

कारण वह पर्दा प्रथा, सती प्रथा, नियोग प्रथा आदि अनेक बुराईयों की बेड़ियां काटने में असक्षम हो गई क्योंकि उसका हथियार "शिक्षा" उससे छीना जा चुका था। शिक्षा जोकि सिर्फ सर्वांगीण विकास ही नहीं करती बल्कि हमें समाज में व्याप्त बुराईयों से लड़ने की शक्ति भी प्रदान करती है। वो हमें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करती है।

अनेक समाजशास्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का अनुभवात्मक अध्ययन किया है तथा अपने विश्लेषण के द्वारा महिलाओं की सामाजिक, व्यवसायिक गतिशीलता तथा पुरुषों के समान शैक्षणिक व सामाजिक अधिकार, परिवार में निर्णय निर्धारक भूमिका तथा प्रदत्त परिस्थिति को नकार कर, अर्जित प्रास्थिति द्वारा अपनी क्षमता के नये आयामों को उद्घाटित करना, के सन्दर्भ में विभिन्न मत प्रस्तुत किये गये हैं। यहाँ शोध समस्या से सम्बन्धित विभिन्न समाजशास्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों के साहित्य का अवलोकन किया गया है जिसमें इनके अध्ययन के निष्कर्षों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

मीनाक्षी मुखर्जी (1988) का मत है कि पुरूषों से स्वतन्त्र स्त्रियों की पहचान की अभिव्यक्ति वैचारिक दृष्टि से सम्भव है परन्तु व्यवहारिक तौर पर नहीं। एक पुरूष की अपेक्षा एक स्त्री के लिये सामाजिक अनुपालन अधिक आवश्यक है। सामान्यत : एक महिला की पहचान स्वयं और अन्य लोगों के द्वारा पुरुषों के साथ एक पुत्री, एक पत्नी और एक माँ के रूप में की जाती है।

मीनाक्षी का मानना है कि परिवार ही स्त्रियों को गुलाम बनाने वाली संस्था नहीं है। समाज की प्रकृति ही ऐसी है कि जिसमें स्त्रियों के साथ अनुदार रूप में व्यवहार किया जाता है।

माग्रेट कारमैक (1779)[2] ने विश्वविद्यालय की 500 छात्राओं के अध्ययन के दौरान पाया कि लड़कियां कॉलेज जाना और लड़कों से मित्रता करना चाहती थीं लेकिन वे ये भी चाहती थीं कि उनका विवाह उनके माता–पिता तय करें। वे अपनी नव स्वतन्त्रता का उपभोग भी करना चाहती हैं लेकिन साथ ही साथ पुराने मूल्यों को भी बनाये रखना चाहती हैं।

---

[2] Cormack, M. (1961). *She Who Rides a Peacock: Indian Students and Social Change*. New York: Frederick A. Praeger

गोविन्द केलकर (1981) ने अपने अध्ययन में पाया कि हरित क्रान्ति वाले क्षेत्र पंजाब में स्त्रियों को दिन–भर कामकाज के बाद पति की सेवा भी करनी पड़ती है। स्त्री द्वारा उलटकर जवाब देना, ठीक तरह से भोजन न परोसना या कभी–कभी पारिवारिक मामलों में बोलना उनका अपराध माना जाता है और इसके लिये उनकी पिटाई भी होती है।

कॉपर ने कानून की नजर में महिलाओं की स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इस अध्ययन के आधार पर महिलाओं की संवैधानिक स्थिति, प्रभुता, अधिकार, सम्पन्नता, कानूनी शक्ति इत्यादि को समझा जा सकता है।[3] वस्तुतः महिलाओं की परिस्थिति को उच्च बनाने की दृष्टि से इनके पक्ष में कानून निर्मित किये गये हैं किन्तु भारतवर्ष में पुरुष प्रधान समाज होने के कारण भारतीय महिलाओं का एक प्रमुख एवं विचारणीय भाग कानून के प्राविधान से अनभिज्ञ रह गया है फिर भी भारतीय समाज की उच्च वर्गीय महिलाओं ने इसका लाभ उठाकर अपनी सामाजिक परिस्थिति को उच्च किया है।

मिश्र (1981)[4] ने अपने अध्ययन के द्वारा यह बताने का प्रयास किया है कि जब तक सामाजिक–सांस्कृतिक बाधायें समाप्त नहीं होगी तब तक भारतीय महिलाओं का सर्वांगीण विकास सम्भव नहीं है। महिलाओं के प्रति पुरुषों की दृष्टि में परिवर्तन आवश्यक है।

आज भी बहुत से ऐसे ग्रामीणजन हैं जो वासनात्मक निषेध के कारण अपनी बालिकाओं को घर के बाहर नहीं जाने देते और बाल्यावस्था में ही विवाह कर देते हैं। वस्तुतः आज भी महिलायें पुरूष की नजर में महिला और मात्र महिला है, इसके अतिरिक्त वे कुछ नहीं हैं और पुरुषों का वासनात्मक लक्ष्य बनी हुई हैं। इस दृष्टि में परिवर्तन अपरिहार्य है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने रामचरित मानस के द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की है।

महिलाओं में अद्वितीय क्षमता पायी जाती है। इन्होंने भक्ति साहित्य, राजनीति, शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी, चिकित्सा, सेना इत्यादि सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में जाकर

---

[3] ooper, [G.]. (1974). *[The Legal Status of Indian Women]*. New Delhi:
[4] मिश्र, (1981). स्वतंत्र भारत में नारी की स्थिति. नई दिल्ली

अपनी अद्‌भूत प्रतिभा का अनोखा परिचय दिया है। आज महिलाओं को पहचानने की आवश्यकता है। ये सब कुछ कर सकती है। एक ओर बहुत अच्छी व्यवस्था कर सकती है तो दूसरी ओर समाज में क्रान्ति भी ला सकती हैं। पुरुषों की सेवा करने में सक्षम हैं तो पुरुषों को झुकने और उनसे अपनी सेवा कराने की क्षमता भी रखती हैं। यह सब कुछ कर सकती हैं।

विवाह मूलक परिवार में स्त्री की भिन्न–भिन्न परिस्थितियाँ होती हैं उदाहरण के लिए बेटी पत्नी, बहू, माँ इत्यादि। इन परिस्थितियों से सम्बन्धित भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है एवं प्रत्येक भूमिका निर्वाह के समय उनसे समपर्ण एवं भेदभाव की भावना की अपेक्षा की जाती है। वहाँ भी उसे निम्न परिस्थिति प्राप्त होती है एवं उनका कोई पृथक व स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। इस प्रकार स्त्रियों की परिस्थितियों में उतार–चढ़ाव पाया गया हैए परन्तु यह परिस्थिति सम्बन्धी उतार–चढ़ाव अचानक परिलिक्षित नहीं हुआ अपितु यह एक क्रमिक प्रक्रिया का परिणाम है। समाज में जैसे–जैसे परिवर्तन व बदलाव आते गये वैसे–वैसे स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन होते गये।

दूबे ने भारतवर्ष में पुरुषों और महिलाओं की विभिन्न भूमिकाओं को प्रकाशित करने का महत्वपूर्ण प्रयास किया है। जब व्यक्ति की भूमिकाएं अनेक हो जाती हैं तो उन भूमिकाओं में कभी–कभी संघर्ष की स्थिति आ जाती है व्यक्ति अपनी सभी भूमिकाओं का पूर्ण और यथोचित निर्वाह नहीं कर पाता जिन महिलाओं को घर के भीतर और बाहर कार्य करना पड़ता है वे न तो घर में और न ही घर के बाहर अपने दायित्वों का पूर्ण रूपेण पालन कर पाती हैं ।

शिक्षित महिलाओं की वैवाहिक समस्या का अध्ययन मित्र (1980)[5] द्वारा प्रस्तुत किया गया है। ग्रामीण समाज की शिक्षित लड़कियों के लिए उचित वर नहीं मिल पाता, जो मिलता भी है उसकी मांग इतनी अधिक होती है कि लड़की के पिता उन मांगों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं । वैवाहिक समस्या एक ज्वलंत समस्या है। आज की शिक्षित महिलायें जिसका शिकार हैं ।

---

[5] Mitra, A. (1980). *Marriage and Dowry in Rural India*. New Delhi

डा० कपूर के अनुसार, 'आज की पढ़ी–लिखी महिलायें भी ऊपर से तो स्वतंत्रता का झूठा लबादा पहन लेती हैं लेकिन अपनी ही आंतरिक स्वतंत्रता के बारे में बेखबर हैं। आंतरिक स्वतंत्रता का जज्बा तब तक उनका बाहरी तौर पर स्वतंत्र दिखना मायने नहीं रखता। अत : उसे अपने अधिकारों को समझकर सीमा में रहते हुए उनका सदुपयोग करना चाहिए। जब तक किसी महिला को अपनी जिंदगी के महत्वपूर्ण निर्णय लेने की आजादी नहीं मिलती, तब तक उसे स्वतंत्र नहीं माना जा सकता।

समाज शास्त्र में प्रायः महिलाओं की शिक्षा सशक्तीकरण स्वतंत्रता तथा अधिकार पर विगत वर्षों से शोध कार्य संपन्न किये जा चुके हैं और वर्तमान में भी जारी हैं, लेकिन भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्याओं से सम्बन्धित शोध कार्य कम ही है।

अतएव प्रस्तुत शोध समाज में महिलाओं की स्थिति पर आधारित है। महिलाओं में अपने अधिकार के प्रति, शिक्षा के प्रति जागरूक करने से सम्बन्धित व्यवहार का एक सामाजिक चित्रण है।

अतः यह अध्ययन इस दिशा में एक छोटा सा प्रयास है जिससे हम समाज में व्याप्त असमानता, असामाजिकता एवं महिलाओं की समस्याओं को समाज के सामने प्रस्तुत कर सकें।

अध्याय–1: **महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय के ऐतिहासिक एवं सामाजिक संदर्भ**

किसी समाज को जानने के लिए उस समाज में महिलाओं की स्थिति को जानना बहुत आवश्यक है, इससे उस समाज का विकास और सभ्यता का इससे भी ज्ञान हो जाता है। क्योकि एक स्वस्थ्य समाज के निर्माण में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। समाज व देश के आदर्शों और उच्चतम मूल्यों का संरक्षण भी उन्होंने अंत्यन्त सफलतापूर्वक किया है। साथ ही उनके उदार दृष्टिकोण के कारण समाजिक परम्पराएं एवं मान्यताए जीवित हैं। स्त्री समाज की आधारशिला है। पुरुष व्यक्तित्व का अंकुरण माता के अंग में ही होता है। वही उसकी पहली शिक्षिका है। बालक माता के जिन विशेषताओं से प्रभावित होता है, वही बाद में आगे चलकर उसके चरित्र का अंग बन जाती है। यदि माता पुरुष के चरित्र की भूमि है तो पत्नी सम्पन्न कराती थी एवं पत्नी के रूप में स्त्री पुरुष के हर सुख–दुःख में साथ चलती हुई उसके हर काम में सहभागि बन जाती है। उसके सामाजिक स्थिति में सम्पूर्ण समाज प्रभावित होता है। स्त्रियों की सामाजिक स्थिति के कारण काल विभाजन हुआ है। स्त्री की उन्नति से ही समाज की उन्नति होती है वह समाज के उन्नति का मापदंड हैं।

पूर्व वैदिक काल में "महिलाओं की स्थिति समाज में काफी सम्मानजनक थी और उन्हें अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। वे धार्मिक क्रियाओं में भाग लेने के साथ–साथ धार्मिक क्रियाएँ सम्मान कराने वाले पुरोहितों और ऋषियों का दर्जा भी उन्हें प्राप्त था" उस समय महिलाएं धर्म शास्त्रार्थ इत्यादि में पुरुषों की तरह ही भाग लेती थी। किसी विशेष आयोजन या बड़े कार्य में महिलाएं अपना सुझाव भी देती थी[1] जिस समाज में स्त्रियों को इतना अवसर मिलता है वह समाज उच्च कोटि का माना जाता है क्योकि वहाँ स्त्री, पुरुष और बच्चे सभी का दृष्टिकोण ऊंचा होता है। स्त्री को समृद्धि और संस्कृति की अधिष्ठात्री भी कहा जाता है। परा और अपरा शक्ति के रूप में तत्त्वज्ञानी हमेशा चर्चा करते रहे हैं। सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा आदि अनेक रूपों में उसकी आराधना होती रही है। इन्हीं शक्तियों का संयुक्त एंव मूर्तिमान रूप नारी है।

---

[1] पणिक्कर, 1995, पृ. 78

हिंदू समाज में स्त्री का सम्मान और आदर प्राचीन काल से ही आदर्शात्मक और मर्यादायुक्त था। परिवार और समुदाय में उनके द्वारा कन्या, पत्नी, वधू और माँ के रूप में किये जाने वाले योगदान का सर्वदा महत्व और गौरव रहा है। सरस्वती देवी, पतितपावनी, धनदायिनी, सत्य की ओर प्रेरित करने वाली, शिक्षिका और ज्ञानदात्री मानी गयी है।[2] इस काल में विशपला तथा मुद्गलानी जैसी तत्कालीन ख्याति प्राप्त नारियों का वर्णन भी प्राप्त होता है। शिक्षा, गृहस्त जीवन, यज्ञ–अनुष्ठान में स्त्रियों का सम्मानप्रद स्थान प्राप्त था। विधवाओं का पुनर्विवाह भी प्रचलित था। वैदिक कालीन नारी की जब हम बात करते हैं तो हमें उसके विभिन्न रूपों और कार्यों का अवलोकन होता है। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। नववधू को श्वसुरगृह की साम्राज्ञी माना जाता था पति के साथ मिलकर याज्ञिक कार्य सम्पन्न कराती थी। वैदिक युगीन नारी स्वछन्द एंव मुक्त थी परन्तु उसे सामाजिक मान सम्मान प्राप्त था। वैदिक युग में स्त्री शिक्षा अपनी उच्चतम सीमा पर थी। ऋग्वैदिक पंडिता स्त्रियों यथा–रोमशा, अपाला, उर्वशी, विश्ववारा, सिकता, निवावरी, घोषा, लोपामुद्रा आदि ने अध्ययन–अध्यापन के साथ–साथ अनेक ऋचाओं का भी प्रणमन किया था। उच्च शिक्षा प्राप्त स्त्री को विवाह योग्य अत्यधिक उत्तम माना जाता था। वैदिक कालीन स्त्रियाँ ब्रह्मचर्य धर्म का पालन करते हुए उपनयन संस्कार भी कराती थी तब शिक्षा ग्रहण करती थी[3]। ब्रहमयज्ञ में जिन ऋषियों की गणना की जाती है उनमें सुलभा, गार्गी, मैत्रेयी आदि विदुषियों के भी नाम संम्मानपूर्वक लिये जाते हैं जिनकी प्रतिष्ठा वैधिक ऋषियों के समान थी। वैदिक ज्ञान के साथ–साथ ललित कलाओं में भी पारंगत होती थी। सहारीक्षण पद्धति के अन्तर्गत ही छात्र–छात्राएँ एक साथ शिक्षा ग्रहण करते थे। पूर्व वैदिक कालीन अपाला ने अपने पिता को कृषि कार्य में सहयोग प्रदान किया था जो स्त्री ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का उदाहरण प्रस्तुत करता है। वैदिक कालीन स्त्रियाँ गाय दुहना (दुहिता), सूत कातना, बुनना और वस्त्र सिलना भी जानती थी। तत्कालीन स्त्रियाँ नृत्य कला में भी निपुण थी और साथ ही ऋचाओं का गान भी करती थीं। इस प्रकार वैदिक कालीन स्त्री

---

[2]अथर्ववेद, कांड 11, सूक्त 7, मंत्र 18
[3] मनुस्मृति, 9/77

वैदिक शिक्षा के साथ–साथ नृत्य, संगीत, गान, चित्रकला आदि विषयों की भी शिक्षा ग्रहण करती थीं। स्त्री अपना सर्वागीण विकास करने हेतु, तत्पर रहती थी। "ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्" इस वाक्य से ज्ञात होता है कि कन्याएँ ब्रह्मचर्यपूर्वक गुरुकुल में निवास कर शिक्षा पूर्ण करने के अनन्तर ही युवा पति से विवाह करने की कामना करती थीं । विवाह के अवसर पर पति–पत्नी दोनों ही कतिपय प्रतिज्ञायें करते थे, जिनका प्रयोजन एक दूसरे के प्रति कर्तव्यों का पालन करते हुए जीवन बिताना होता था। प्राचीन भारत में सभी स्त्रियाँ विवाह करके गृहस्थ जीवन ही व्यतीत नहीं करती बल्कि बहुत सी स्त्रियां नृत्य, वादन, संगीत द्वारा जनसाधारण का मनोरंजन का भी कार्य करती थीं। ऐसी स्त्रियों को समान में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।

वैदिक काल में प्रचालित विवाह संस्कार के अनिवार्य अनुष्ठान आजतक वैसे ही चले आ रहे हैं। वैदिक युग में स्त्री को सम्पत्ति अधिकार प्राप्त थे। वैदिक मंत्रो में संकेत मिलता है कि सन्तान न होने पर पति के पश्चात् पत्नी ही सम्पत्ति की स्वामिनी होती थी। पुत्र न होने पर पिता की सम्पत्ति की उत्तराधिकारी मानी जाती थी। कभी–कभी स्त्रियाँ अपने सम्पत्ति विषयक आधिकार हेतु न्यायलय भी जाती थीं। इसका तात्पर्य यह है कि वैदिक स्त्री अपने अधिकारों के प्रति भी जागरूक थी[4]। वैदिक युगीन नारी स्वतंत्र और स्वछन्द भी थी। उस समय परदा या अवगुंठन का कोई प्रचलन नहीं था। तभी सहशिक्षा का वातावरण था साथ ही ऋग्वैदिक वर्णन बताते है कि नववधू सभी आगतों को दिखायी जाती थी।[5] यह प्रदर्शित करता है कि वैदिक युगीन नारी नैतिकता, चारित्रिक सोष्ठाय, निष्ठा सुसंस्कृतता की प्रतिमूर्ति थी। तत्कालीन स्त्री वैदिक समाज का एक आदर्श उदाहर थी तथा यह आशा की जाती थी कि वह अपनी वृद्धावस्था तक जनसभाओं में बोल पाएगी तथा लोगों को समझ पाएगी। वैदिक कालीन नारी विदथ (सभा और समिति) तथा समन (उत्सव और मेला) में स्वछन्दतापूर्वक साम्मलित होती थी।[6] वृद्धावस्था तक नारी अपने घर में प्रभुता रखती थी। वैदिक ग्रंथों के अध्यनोपरान्त ज्ञात होता है कि तत्कालीन नारी की दशा

---

[4] नारद स्मृति, 12/97
[5] अथर्ववेद, कांड 11, सूक्त 7, मंत्र 18
[6] यजुर्वेद, 20/9

अत्यन्त उन्नति और परिष्कृत थी तथा हिंदू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह समान रूप से आदृत और प्रतिष्ठित थी। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक कालीन नारी का समाज में सम्मानीय और गरिमामय स्थान था। वैदिक कालीन नारी में अनेकानेक गुण थे। जिसके कारण समाज में देवी और श्री के रूप में आदृत और सम्मानित थी। वैदिक युगीन स्त्री अपनी अस्मिता, अस्तित्व को बनाए रखने हेतु कृत संकल्प रहती थीं। तत्कालीन नारी हर क्षेत्र में अपना योगदान दे रही थी।

वैदिक वर्णनों से परिलक्षित होता है कि तत्कालीन नारी अपने योगदान दे रही थी। वैदिक वर्णनों से परिलक्षित होता है कि तत्कालीन नारी अपने विकास हेतु जागरूक थी। वैदिक साहित्य में कुछ ही ख्याति प्राप्त महिलाओं के वर्णन से ज्ञात होता है कि ये तत्कालीन समाज में विशेष ख्याति प्राप्त स्त्रियाँ थी। वैदिक काल में स्त्री को उच्च स्थान प्रदान किया जाता था और उसे वरिष्ठ माना जाता था तथा उसे देवी की उपमा दी जाती थी। वर्तमान में महिलाओं ने ऐतिहासिक उद्धरणों के अध्यनोपरान्त अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मजिलें, नये रास्तों का निर्माण किया है। महिलाओं की स्थिति में सुधार ने देश के आर्थिक सामाजिक एवं राजनीतिक मायने ही बदल गये हैं। आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में महिलायें अपने आधिकारों के प्रति पहले से सचेत हैं। नारी उत्थान में ही भारत के उज्जवल भविष्य की सम्भावनायें सन्निहित है।

पूर्व वैदिक काल में महिलाओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। ज्ञान और शिक्षा में वे किसी भी प्रकार से पुरुषों से कम नहीं थी, हम यहाँ तक कह सकते हैं कि महिलाओं के प्रति समाज का दृष्टिकोण अच्छा था। ऋग्वैदिक काल में पुत्र की तरह पुत्री का उपनयन संस्कार होता था। ऋग्वैदिक काल में नारी को ऋषि बनने की भी पुरुषों की तरह ही छूट थी, इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शिक्षा के प्रति पुत्र और पुत्री में कोई भेद–भाव नहीं किया जाता था। बालिकाओं को भी गुरुओं के आश्रम में रहकर ब्रहमचर्य का पालन कर विद्या अध्ययन करती थीं। क्षत्रिय स्नियां धनुर्वेद अर्थात युद्ध विद्या की भी शिक्षा ग्रहण करती थीं।

शतपथ ब्राह्मण में यह महत्वपूर्ण उल्लेख मिलता है कि श्रीराम के गुरु वशिष्ठ के गुरुकुल में संगीत और पर्यावरण संरक्षण जैसे विषयों का शिक्षण उनकी विदुषी पत्नी

अरुन्धति ही देती थीं, जो प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में स्त्रियों के सक्रिय योगदान को दर्शाता है। हारीत संहिता के अनुसार, वैदिक काल में स्त्री शिक्षा के दो मुख्य स्वरूप थे। पहली थीं सद्योवधू, वे स्त्रियाँ जो विवाह से पूर्व ही आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर लेती थीं, तथा दूसरी थीं ब्रह्मवादिनियाँ, जो जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए ज्ञानार्जन में लगी रहती थीं; सद्योवधू वर्ग की कन्याएँ, जिन्हें कभी–कभी सद्योहा भी कहा जाता था, उन सभी चौसठ कलाओं और समग्र विधाओं का शिक्षण लेती थीं जो उन्हें एक सद्गृहिणी बनने में सहायक होती थीं, जिसमें वेद अध्ययन के अतिरिक्त गीत–संगीत, नृत्य, चित्रकला, शिल्प व शस्त्रविद्या आदि शामिल थे। यह उल्लेखनीय है कि ये उपनिषद् कालीन ब्रह्मवादिनियाँ आज भी भारतीय समाज के विद्वत् वर्ग में प्रकाश स्तंभ के रूप में पूजी जाती हैं, जो उनकी गहन मेधा और तपस्या का प्रमाण है। ऋग्वेद स्वयं गार्गी, मैत्रेयी, घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, अदिति, इन्द्राणी, लोपामुद्रा, सार्पनराज्ञी, वाक, श्रद्धा, मेधा, सूर्या व सावित्री जैसी अनेक वेद मंत्रद्रष्टा विदुषियों का उल्लेख करता है, जिनके ब्रह्मज्ञान से सम्पूर्ण ऋषि समाज आह्लादित था, और इनकी गहन मेधा का परिचय इनके द्वारा रचित विभिन्न वैदिक सूक्तों से मिलता है; उदाहरण के लिए, ब्रह्मवादिनी विश्ववारा आत्रेयी ने ऋग्वेद के पंचम मंडल के 28वें सूक्त, घोषा काक्षीवती ने दशम मंडल के 39वें व 40वें सूक्त, सूर्या सावित्री ने दशम मंडल के 85वें सूक्त, अपाला आत्रेयी ने अष्टम मंडल के 91वें सूक्त, शची पौलोमी ने दशम मंडल के 149वें सूक्त, तथा लोपामुद्रा ने प्रथम मंडल के 179वें सूक्त की रचना की थी। ज्ञातव्य है कि ब्रह्म के चिंतन–मनन के अतिरिक्त ये ब्रह्मवादिनियाँ शिक्षिकाओं के दायित्व का निर्वहन भी अत्यंत कुशलता से करती थीं, जैसा कि आश्वलायन के गृहसूत्र में गार्गी, मैत्रेयी, वाचक्नवी, सुलभा, वडवा, प्रातियेयी आदि शिक्षिकाओं के नाम मिलते हैं, जिन्हें आदरपूर्वक श्उपाध्यायाश का संबोधन दिया गया है, इस प्रकार जो लोग यह झूठ प्रचारित करते हैं कि प्राचीन भारत में स्त्रियाँ अशिक्षित थीं, उन्हें इन ठोस ऐतिहासिक साक्ष्यों को देखकर यह समझने की आवश्यकता है कि वैदिक काल की महिलाएँ यदि दर्शन, तर्क, मीमांसा, साहित्य आदि गूढ़ विषयों की ज्ञाता न होतीं, तो वे इतनी विपुल मात्रा में मौलिक वैदिक साहित्य का सृजन करने में कदापि सक्षम न हो पातीं।

1.1 उत्तर वैदिक काल में महिलायें

उत्तर वैदिक सभ्यता में जाति व्यवस्था में भारी भिन्नताएँ देखी गई। जैसे कि पारंपरिक चार–जाति प्रणाली वर्ग जिन्हें आमतौर पर क्षत्रिय, ब्राह्मण, शूद्र और वैश्य के रूप में जाना जाता है और आधुनिक काल में भी मौजूद हैं। हालाँकि, ऐतिहासिक चार जातियों के अलावा कई उप–जातियाँ उभरीं। उत्तर वैदिक काल के दौरान जाति व्यवस्था के संबंध में, महिलाएं ऋग्वैदिक काल की तुलना में अपने लिए उच्च स्थान पाने में असमर्थ हैं। उत्तर वैदिक काल के दौरान महिलाओं को धार्मिक गतिविधियों में भाग लेने और प्रदर्शन करने की अनुमति नहीं थी। उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को बुनियादी समानता का आधार नहीं था और वे अपने घरेलू जीवन का आनन्द लेने में असमर्थ थीं । उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को बहुत कम आधिकार और निम्न श्रेणी का दर्जा दिया जाता था। एक महिला को पुरुषों की पत्नी के रूप में नहीं, बल्कि वासना की संतुष्टि के लिए एक पदार्थ के रूप में माना जाता था। उत्तर वैदिक काल में महिलाओं को उनकी संपत्तियों से वंचित कर दिया गया और उन्हें राजनीतिक आर्थिक विकास के लिए आवश्यक नहीं माना गया।

सामाजिक जीवन– पूर्व वैदिक काल की तुलना में उत्तर वैदिक काल के सामाजिक जीवन में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो गये थे।

(क) वर्ण व्यवस्था– समाज में ब्राह्मणों और क्षत्रियों का स्थान श्रेष्ठ हो गया। इस श्रेष्ठता के कारण वर्ण व्यवस्था धीरे–धीरे जाति व्यवस्था के रूप में दिखाई देने लगी, इसलिए सभी चारों वर्णों की महिलाओं के समाजिक जीवन में अन्तर होने लगा। चारों वर्णों में ब्राह्मण, क्षत्रिय अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए आपस में संघर्ष करने लगे। बाद में इन दो वर्णों में व्यवहारिक समझौता हो गया। ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों ही समाज के ऐसे वर्ग थे जो उत्पादन में कोई भाग नहीं लेते थे, परन्तु उत्पादन से अधिक लाभ स्वयं प्राप्त करना चाहते थे। दोनों की प्रतिद्वन्द्वता का मूल कारण थी, सम्भवतया यही आर्थिक कारण था। बाद में व्यवहारिकता के कारण दोनों वर्गों ने पारस्परिक समझौता कर लिया जिसके द्वारा ब्राह्मणों को सम्मान की दृष्टि से श्रेष्ठ स्थान प्रदान कर दिया गया, क्षत्रियों ने धीरे–धीरे भूमि पर स्वामित्व के अधिकार क्यों

प्राप्त कर लिया। इसी कारण इस काल में राजा को भूमि का स्वामी स्वीकार नहीं किया गया तब भी उसे किसी व्यक्ति को भूमि से पृथक करने का अधिकार प्राप्त हो गया। वैश्यों का स्तर उन दोनों की अपेक्षा कुछ निम्न समझा गया और शूद्र वर्ण की समाजिक स्थिति तीनों वर्गों की अपेक्षा गिरने लगी। अनुलोम विवाह होता था जिसमें उच्च वर्ण का वर निम्न वर्ण की कन्या से विवाह होता था, प्रतिलोम विवाह नहीं होता था जिसमें निम्न वर्ण का वर उच्च वर्ण की कन्या होती थी[7] ऐसा विवाह समाज स्वीकार नहीं करता था। फिर भी अन्तर्जतीय विवाह होते थे, केवल समाज का चौथा वर्ण शूद्रों से विवाह सम्बन्ध करना अच्छा नही समझा जाता था, इस प्रकार के भेद–भाव को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज वर्ण व्यवस्था के साथ–साथ जाति व्यवस्था में बदल गया। परन्तु अभी यह जाति व्यवस्था कठोर न थी। अन्तर्जातीय–विवाह और खानपान पर कोई बाधा न थी और एक व्यक्ति की जाति उसके कार्यों से निश्चित होती थी । केवल शूद्र इसमें एक अपवाद बनते जा रहे थे। उत्तर वैदिक काल में यज्ञोपवीत संस्कार का अधिकार शूद्रो को नहीं था। वर्ण व्यवस्था की यह स्थिति उपनिषद–काल तक रही। धर्म–सूत्रों, महागाथा–काल और उसके पश्चात् स्मृति काल तक धीरे–धीरे यह कठोर और गतिहीन होती गयी, यहाँ तक कि स्मृति–काल में हमें अस्पृश्य जाति के भी प्रमाण प्राप्त हो जाते हैं[8]।

(ख) आश्रम व्यवस्था – उत्तरवैदिक काल में (मुख्यतया स्मृति–काल में) मनुष्य के जीवन को 25–25 वर्ष को चार भागों में बाँटा गया। 25 वर्ष की आयु तक व्यक्ति को विद्यार्थी के लिए बहाचर्य–जीवन व्यतीत करता था जिसमें पत्नी और बच्चो के साथ रहना, धन कमाना और अतिथि का स्वागत सम्मान करना उसके प्रमुख कर्तव्य माने जाते थे। 50 से 75 वर्ष की आयु तक व्यक्ति को वानप्रस्थ–आश्रम में रहना पड़ता था जिसमें वह केवल अपनी पत्नी के साथ जंगल में निवास करता था और आध्यात्मिक प्रगति का प्रयत्न करता था। अन्त में, 75 से 100 वर्ष की आयु में व्यक्ति अपनी पत्नी को भी छोड़कर सन्यासी का जीवन व्यतीत करता था[9] तथा मोक्ष प्राप्ति का प्रयत्न करता था। इस प्रकार इस काल में आर्यो ने जीवन को ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वासप्रस्थ

---

[7] ऋग्वेद – सूक्त मण्डल अष्ट–91

[8] काणे, History of Dharmashastra, 1941, पृ0 611

[9] वही, पृ0 511

और सन्यास–इन चार भाँगों में बाँटकर तथा विभिन्न आयु में व्यक्ति के विभिन्न कर्तव्य निश्चित करके व्यक्ति की भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही प्रकार की प्रगति करने का मार्ग बताया था। उत्तरवैदिक काल में इन चार आश्रमों का स्पष्ट जिक्र नहीं मिलता। आरम्भ में तीन आश्रम प्रचलित हुए. ब्रह्मचर्य, गृहस्थ एवं वानप्रस्थ।

आश्रम व्यवस्था का सर्वप्रथम उल्लेख छान्दोग्योपनिषद में मिलता है। उत्तर वैदिक काल के अन्त में आकर चौथा आश्रम भी प्रचलित हो गया। सर्वप्रथम जाबालोपनिषद से चारों आश्रमों का वर्णन मिलता है। साधारणतया एक व्यक्ति अपने जीवन में इन चारों आक्रमों का पालन करता था। परन्तु एक व्यक्ति स्वेच्छा से ब्रह्मचर्य आश्रम के बाद किसी भी आश्रम में जा सकता था।

(ग) स्त्रियों की स्थिति – इस काल में भी स्त्री सम्बन्धी कुप्रथाएँ आरम्भ नहीं हुई थी। विवाह अब भी एक पवित्र बंधन माना जाता था जिसका मुख्य उद्देश्य सन्तान उत्पन्न करना था। उस काल में आठ प्रकार के विवाह प्रचलित थे–

1) ब्रह्म विवाह – जिसमें पिता अपनी इच्छा से अपनी पुत्री का विवाह उपयुक्त व्यक्ति से करता था।

2) देव विवाह – जिसमें पिता अपनी पुत्री का विवाह उपयुक्त व्यक्ति से पुरोहित की सहायता से करता था।

3) अर्श विवाह – जिसमें पिता वर–पक्ष की आर्थिक स्थिति को जानने के लिए वर–पक्ष से गाय या बैल उपहार के रूप में स्वीकार करके अपनी पुत्री का विवाह उपयुक्त व्यक्ति से करता था।

4) प्रजापति विवाह – जिसमें पिता पुत्री द्वारा स्वेच्छा से किये गये विवाह को सम्मति प्रदान कर देता था।

5) गन्धर्व विवाह – जिसमें लड़का और लड़की स्वेच्छा से विवाह कर लिया करते थे।

6) असुर विवाह – जिसमें पुरुष धन लेकर स्त्री से विवाह करता था।

7) राक्षस विवाह – जिसमें पुरुष स्त्री को जबरदस्ती उठाकर ले जाता था और उससे विवाह करता था, और

8) पिशाच विवाह– जिसमें पुरुष स्त्री को धोखा देकर अथवा उसकी ना जानकारी में उसे उठाकर ले जाता था और उससे विवाह करता था। परन्तु ऐसा विवाह समाज से स्वीकृत न था।[10]

साधारणतया एकपत्नी–प्रथा प्रचलित थी परन्तु 'बहुपत्नी प्रथा भी थी। परन्तु एक स्त्री के कई पति हों, यह नाममात्र को ही था और वह भी सम्भवतया कुछ विशेष वर्गो अथवा स्थानों तक ही सीमित था। बाल विवाह नहीं होते थे और स्त्रियाँ स्वेच्छा से विवाह करती थीं। विधवा विवाह पर कोई बन्धन नहीं था, यद्यपि यह साधारण नियम न था। सती प्रथा भी प्रचलित नियम न था, यद्यपि राजवंशों में कभी–कभी ऐसे उदाहरण मिल जाते था। पर्दा–प्रथा नहीं थी और स्त्रियाँ नृत्य एव संगीत जैसी ललितकलाओं के अतिरिक्त धार्मिक शिक्षा भी प्राप्त करती थी। पत्नी की दृष्टि से घर में स्त्री का बहुत सामना था। शतपथ ब्राह्मण[11] में स्त्री को पुरुष की अर्धांगिनी कहा गया है। गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषी स्त्रियाँ इसी काल में हुई। स्त्रियों को कुछ विशेष सुविधाएं भी प्राप्त थीं। धर्म–सूत्रों ने स्मृतियों की तुलना स्त्रियों के प्रति अधिक उदार दृष्टिकोण अपनाया था, जैसे कि वरिष्ठ धर्मसूत्र में पत्नी को किसी भी स्थिति में त्याज्य नहीं माना गया है उसमें लिखा है कि एक पत्नी को त्याग्या नहीं जाएगा चाहे वह झगड़ालू हो, चाहे दोषी हो, चाहे घर छोड़कर चली गयी हो, चाहे उसके साथ बलात्कार हुआ हो अथवा चाहे वह चोरों के हाथों पकड़ी जा चुकी हा[12]। इसी प्रकार उसमें एक व्याभिचारिणी पत्नी को प्रायश्चित करने के उपरान्त पति के द्वारा स्वीकार करने योग्य बताया है, पत्नी को त्यागने वाले पति के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की है जबकि पति को त्यागने वाली पत्नी के लिए सिर्फ प्रायश्चित बताया है, जाति से बहिष्कृत पिता की पुरुष सन्तान को जाति से बहिष्कृत करना और उसकी पुत्री को इस दोष से मुक्त करना उचित माना गया है। परन्तु, तब भी इस काल में, मुख्यतया बाद के समय में (स्मृति काल में) स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आ गयी थी।

---

[10] ऋग्वेद – सूक्त मण्डल अष्ट –91

[11] मजूमदार, आर. सी. सोशल एंड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ इंडिया. मक्मिलन इंडिया, 1972

[12] काणे, History of Dharmashastra, 1941

पुत्री का जन्म बुरा माना जाने लगा था। कन्याओं को बेचने तथा दहेज देने के उदाहरण भी प्राप्त हो जाते हैं। स्त्रियाँ राजनीतिक सभाओं में भाग नहीं ले सकती थीं और परिवार के अनेक धार्मिक कार्य अब उनके स्थान पर पुरोहित करने लगा था। व्यवाहिरक दृष्टि से स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आ गयी थी, यह अन्य धर्म–ग्रन्थों में उनके बारे में दिये गये विवरणों से भी ज्ञात होता है। अथर्ववेद कन्याओं के जन्म की निन्दा करता है। ऐतरेय ब्राह्मण में उल्लेख है कि एक अच्छी स्त्री वह है जो उत्तर नहीं देती। ऐतरेय ब्राह्मण में पुनः उल्लेख है कि पुत्री दुःख का कारण है जबकि पुत्र परिवार का रक्षक होता है। स्त्री की सर्वाधिक गिरी हुई स्थिति मैत्रेयनी–संहिता में प्राप्त होती है जिसमें जुआ और शराब की भाँति स्त्री को पुरुष का तीसरा मुख्य दोष बताया गया है।[13] गौतम – धर्मसूत्र के अनुसार, कन्या का विवाह मासिक–धर्म के प्रारम्भ होने से पहले कर देना चाहिए। एक वाद–विवाद के दौरान ऋषि याज्ञवल्क्य ने गार्गी से कहा था कि आधिक विवाद न करो अन्यथा तुम्हारा सिर तोड़ दिया जाएगा। कहीं–कहीं पर क्षत्रियों में सती–प्रथा और स्त्रियों को पुरुषों के सम्मुख खुले मुँह न जाने (पर्दा प्रथा का आरम्भ) की प्रथा भी आरम्भ हुइ[14]।

भोजन, वस्त्र, मनोरंजन आदि– इस काल में आर्यों का मुख्य भोजन अन्न, दूध तथा दूध से बने हुए अन्य पदार्थ एंव माँस था। ये विभिन्न रंगो के तथा सिले हुए होते थे। मृग–चर्म अब भी प्रयोग में आता था। वास, आधिवास और नीवी के अतिरिक्त तापर्य पगड़ी, उत्तरीय, कम्बल, शाल, आदि अन्य प्रयोग में आते थे। जूते का प्रयोग भी होता था।

स्त्री और पुरुष दोनों ही विभिन्न आभूषण पहनते थे। सोने और कीमती पत्थरों के अतिरिक्त अब आर्य चाँदी का प्रयोग भी करने लगे थे । जिसका ऋग्वैदिक आर्यों को न था। इस काल में आर्यों ने नगरों का निर्माण कर लिया था और बड़े.बड़े विशाल भवन और महल बनने लगे थे। कौशाम्बी और हस्तिनापुर में इस समय के नगरों के अवशेष प्राप्त हुए है। मनोरंजन के साधनों में नृत्य, संगीत, जुआ, रथ–दौड़

---

[13] ऋग्वेद – सूक्त मण्डल अष्ट –91

[14] काणे, History of Dharmashastra, 1941

के अतिरिक्त घुड़दौड़ भी सम्मिलित हो गई थी। आर्यो का नैतिक जीवन अब भी श्रेष्ठ था। सदाचार और सत्कर्म उनके जीवन के आधार थे।

(घ) शिक्षा – शिक्षा का प्राराभ उपनयन संस्कार से होता था। राज्य की ओर से शिक्षा का प्रबन्ध था अधित गुरु के पास ही रहना पड़ता था। वे प्रत्येक प्रकार से गुरु की आज्ञा का पालन करते थे, उसकी सेवा करते थे, भिक्षा माँगकर लेते थे और शिक्षा समाप्त होने पर गुरू को स्वेच्छा से गुरु–दक्षिणा देते थे। स्त्री–पुरुष दोनो ही शिक्षा प्राप्त करते थे और विद्वान स्त्रियां शिक्षा प्रदान भी करती थीं। धार्मिक और नैतिक शिक्षा प्रधान थी। स्वाध्याय प्राणायाम और शारीरिक परिश्रम पर बल दिया जाता था। साधारणतया शिक्षा–काल 12 वर्ष का था। इस काल में आर्यों को लेखन और लिपि का ज्ञान हो गया था परन्तु, शिक्षा अब भी मौखिक ही दी जाती थी। इस कारण स्मरण शक्ति शिक्षा के लिए परम आवश्यक थी। सम्भवतया आर्यो को लिपि का ज्ञान 700 ई०पू० में हुआ क्योंकि 500 ई० पू० से लिपि का प्रयोग पूर्णरूपेण आरम्भ हो चुका था। शिक्षा में विवाद प्रणाली का भी महत्वपूर्ण स्थान था। धर्म के अतिरिक्त शिक्षा के मुख्य विषय इतिहास, व्याकरण, गणित, तर्क, ज्योतिष, नीतिशास्त्र, आयुर्वेद, शस्त्र–शिक्षा आदि थे। संस्कृत आर्यों की मुख्य भाषा थी परन्तु यह जनसाधारण की भाषा न थी।

1.2 सूत्र काल में नारी–

वेद वेदांगो तथा उपनिषदों के पश्चात् सूत्रों का काल प्रारम्भ होता है। यज्ञ विषयक विस्तृत एवं जटिल साहित्य को क्रमबद्ध एवं संक्षिप्त रूप देने के लिए सूत्र शैली का प्रयोग हुआ। फलतः संक्षिप्त नियमों के रूप में एकत्रित किए हुए शास्त्रीय अनुशासन के ग्रन्थ सूत्र कहलाए जाने लगे। सूत्रों की मुख्य विशेषता थी अधिक से अधिक सामग्री को कम से कम शब्दों में प्रस्तुत करना। सूत्रों की प्रधानता के कारण ही इस काल को सूत्रकाल कहा जाता था। सूत्र साहित्य गद्य एवं पद्य दोनों में प्राप्त होता है। वैदिक काल में नारी की दशा के चिन्तन मनन के पश्चात् सूत्रकाल में उसकी सर्वांगीण स्थिति का विश्लेषण अपेक्षित है। सूत्रकाल में स्त्रियों की दशा वैदिक काल की तुलना में हीन दिखाई पड़ती है तथापि स्त्रियों की परिवार एव समाज में

सम्मानित स्थान प्राप्त था जिसे निम्नांकित रूप में वर्णित किया जा सकता है। सूत्रों में कन्या के जन्म की कहीं भी निंदा नहीं की गई है । पुत्र की भाँति पुत्री का लालन पालन होता था। आपस्तम्ब गृहम्सूत्र में एक स्थान उल्लिखित है कि गृहस्थ यात्रा से लौटने के पश्चात अपनी पुत्री के मस्तक का पुत्र की भाँति मन्त्रोच्चारण पूर्वक चुम्बन करे। जबकि आरकलायन तथा पारस्करगृह्मसूत्र में इस क्रिया को मन्त्र रहित करने का निर्देश दिया गया है। इस तथ्य से पुत्री के प्रति स्नेहपूर्ण व्यवहार की पुष्टि होती है।[15]

(क) शिक्षा का अधिकार – सूत्रकालीन समाज में नारी शिक्षा के भी पर्याप्त उल्लेख प्राप्त होते हैं। आश्वलायन गृह्मसूत्र में स्त्रियों के समावर्तन संस्कार का उल्लेख्य है। यह संस्कार ब्रह्मचर्याश्रम की समाप्ति के पश्चात होता था। इससे स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ भी ब्रह्मचर्याश्रम का पालन करते हुए शिक्षा ग्रहण करती थी। गोभिल गृह्यसूत्र में विवाह के अवसर पर वर एवं वधू द्वारा साथ–साथ मन्त्रोच्चार करने का विवरण प्राप्त होता है। इसी प्रकार काठक गृह्यसूत्र में दोनों व्यक्तियों द्वारा अनुवाक पाठ किए जाने का उल्लेख्य है। इन उद्धरणो से स्पष्ट होता है कि नर के साथ नारी को थी वैदिक ज्ञान होता था। आश्वलायन गृह्यसूत्र में ऋषि–तर्पण के समय गार्गी वाचक्नवी, बड़वा– प्रतिथेमी तथा सुलभा मैत्रेयी आदि ऋषि नारियों के नाम लेने का आदेश है। इससे तद्युगीन समास में विदुषी नारियों की सम्मानजनक स्थिति की पुष्टि होती है। वैदिक ज्ञान के अतिरिक्त नारियाँ अन्य कलाओं जैसे– संगीत, नृत्य आदि में भी दक्ष होती थीं। यह स्पष्ट होता है कि उस समय स्त्रियों को संगीत, नृत्य आदि शिक्षा दी जाती थीं। शंखलिखित गृह्यसूत्र में चार तथा आठ स्त्रियों, द्वास नृत्य करने का विवरण मिलता है। काठक गृह्यसूत्र विवाह योग्य कन्या का उसके विवाह की पूर्व सन्ध्या पर मृदंग इत्यादि वाद्यों को बजाने का वर्णन प्राप्त होता है। अत : सूत्रकालीन समाज के नारी का उपनयन संस्कार वेदाध्ययन, ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन तथा सर्वांगींण रूप से शिक्षित होने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था।

(ख) विवाह सम्बन्धी अधिकार – सूत्र कालीन समाज समाज में स्वयंव का उल्लेख मिलता है जिसमें स्त्रियों द्वारा विवाह के सम्बन्ध में निर्णय लेने के अधिकार की पुष्टि

---

[15]ऋग्वेद – दशम मण्डल सूक्त –39-40

होती है। गौतम तथा विष्णु धर्मसूत्र के अनुसार यदि पिता आदि अभिभावक कन्या का विवाह करने में असमर्थ रहें, तो कन्या स्वंय उत्तम पति का वरण करने हेतु स्वतंत्र है। सूत्रों द्वारा गान्धर्व विवाह को भी मान्यता प्रदान करना नारी के विवाह सम्बन्धी अधिकारों का सबल प्रमाण है। तद्युगीन समाज में एक पत्नीकता का प्रचलन था। पुरुष को एक विवाह करने की अनुमति थी। आपस्तम्ब का कथन है कि प्रजावती धर्मपत्नी के होते हुए मनुष्य को दूसरा विवाह नहीं करना चाहिए। धर्मसूत्रकार अकारण अपनी धर्मपत्नी का त्याग करने वाले पुरुष को पातकी मानते है। अन्तर्जातीय विवाह के दुष्टान्त भी सूत्र साहित्य में दिखाई पड़ते हैं। बौधायन तथा विष्णु धर्मसूत्र द्वारा अनुलोम विवाह को स्वीकृति प्रदान की गई है।[16] सूत्रकालीन समाज में कुछ परिस्थितियों में स्त्री को पुनर्विवाह का अधिकार भी प्राप्त था। बौधायन के अनुसार दीर्घकाल तक पति के प्रवास पर रहने पर स्त्री पुनर्विवाह कर सकती थी। धर्मसूत्रकारों ने ऐसी विधवा को भी विवाह हेतु स्वीकृति प्रदान की है जिसका पति से समागम न हुआ हो। वशिष्ठ के अनुसार जिस स्त्री का मन्त्रों के साथ विवाह हुआ हो किंतु अपने पति से सम्बन्ध न हुआ हो तो उसका पुनः विवाह संस्कार हो सकता है। बौधायन भी अभुक्त विधवा को पुनर्विवाह की आज्ञा देते है। बौधायन तथा वशिष्ठ दोनो ने पुनर्भू स्त्री का वर्णन किया है। पुनर्भू उस स्त्री को कहते हैं जो पुनर्विवाह करती थीं ।

(ग) सम्बन्ध विच्छेद का आधिकार – तत्कालीन समाज में सम्बन्ध विच्छेद के संकेत भी प्राप्त होते हैं। वशिष्ठ की व्यवस्था से सिद्ध होता है कि पति के प्रव्रजित होने पर स्त्री उससे अपना सम्बन्ध विच्छेद कर सकती थी। उनके द्वारा पुनर्भू स्त्री का अर्थ बताते हुए जो कुछ लिखा है। उससे यह प्रकट होता है कि तत्कालीन समाज में पति के क्लीव, पतित अथवा उन्मुक्त होने पर भी स्त्री सम्बन्ध विच्छेद कर सकती थी। परन्तु साधारण परिस्थिति में पति–पत्नी का सम्बन्ध अविच्छेद समझा जाता था। सम्बंध विच्छेद का अधिकार होते हुए भी स्त्रियाँ उसका उपयोग नहीं करती थीं[17]।

---

[16] राम आहूजा, 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' पृ0 90
[17] राम आहूजा, 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' पृ0 93

(घ) पर्दा–प्रथा का प्रभाव – सूत्रकाल में स्त्रियाँ सामाजिक तथा धार्मिक सभी गतिविधियों में मुक्त रूप से भाग लेने हेतु स्वतंत्र थीं। श्रौतसूत्रों में स्त्रियों द्वारा महाव्रत, अश्वमेध तथा वाजपेय यज्ञ में भाग लेने के विवरण से उस समाज में पर्दा प्रथा के अभाव की पुष्टि होती है। सूत्रकारों का कथन है कि विवाह के पश्चात अपने ग्राम को लौटते हुए वर अपनी नवविवाहित त्री को मार्ग के ग्रामीणों को दिखाते हुए एक वैदिक श्लोक पढ़ता था। इस समय वधु के मुख पर किसी प्रकार के अवगुण्ठन का चिन्ह नहीं मिलता है।

(ड) धार्मिक क्षेत्र में अधिकार – धर्मसूत्रों के पति के अनुकूल एव अधीन बने रहना ही नारी का श्रेष्ठ धर्म बताया गया है। गौतम का कथन है कि श्रोत अथवा गृहं किसी भी प्रकार के धर्मकार्य में नारी स्वतंत्र नहीं होती अपितु पति द्वारा कृत धर्मानुष्ठानों का अनुसरण करती है। नारी पुरुष की सहधर्मिणी के रूप में प्रशंसित एवं सम्मानित होती थी। नृयज्ञ तथा बलि वैश्वदेव यज्ञ में स्त्री का प्रमुख योगदान होता था। गृहास्थाश्रम तथा वानप्रस्थाश्रम में विहित सभी धार्मिक क्रियाओं में पत्नी को अपने पति का सहयोग देने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु पृथक रूप से स्त्री के लिए धार्मिक क्रियाएँ स्वीकार नहीं की गयी हैं। विष्णु धर्मसूत्र के अनुसार सौभाग्यवती नारी के लिए अन्य कोई व्रत एवं उपवास नहीं है। जो स्त्री पति के जीवित रहते ऐसा करती है वह अपने पति की आयु को क्षीण करती है तथा स्वयं मृत्यु के पश्चात् नरक प्राप्त करती है। इस प्रकार सूत्रकाल में नारी पृथक रूप से धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन की अनधिकारिणी थी।

(च) सम्पत्ति का अधिकार– स्त्रियों के सम्पत्ति के अधिकार के सम्बन्ध में सूत्रकाल में मिश्रित दृष्टिकोण दियाई पड़ते हैं। बौधायन के अनुसार स्त्रियाँ शक्तिहीन होती हैं अतः सम्पत्ति की अधिकारिणी नहीं हो सकती[18]। आपस्तम्ब[19] का कथन है कि पति के जीवित रहते पत्नी के आर्थिक अधिकार का कोई औचित्य नहीं है क्योंकि वे पति की सहभागी होती हैं। विष्णु धर्मसूत्र ने पति की मृत्यु के बाद पत्नी तथा पत्नी के अभाव में पुत्री को सम्पत्ति का अधिकारिणी माना है। सम्पत्ति पर उत्तराधिकारी के अतिरिक्त

---

[18] आर.सी. मजूमदार 'एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया', पृष्ठ 58
[19] वही, पृष्ठ 62

स्त्री के लिए पृथक से स्त्री धन का उल्लेख भी धर्म क्षत्रों में प्राप्त होता है। गौतम, बौधायन तथा वशिष्ठ, तीनों धर्म सूत्रकारों ने माता की मृत्यु के पश्चात स्त्री धन पर पुत्री का अधिकार माना है। इसके अतिरिक्त आपस्तम्ब ने धन के उपार्जन में भी पति–पत्नी का सहभागित्व स्वीकार किया है। उन दोनों का ही परिवार की सम्पत्ति पर समान अधिकार होता है। अतः सूत्रकालीन समाज में स्त्रियों के आर्थिक हितों के संरक्षण हेतु सूत्रकारों की सजगता परिलक्षित होती है। इस प्रकार सूत्र साहित्य में नारी के अधिकार तथा उसके महत्व से सम्बन्धित अनेक मत प्राप्त होते हैं। स्त्री को सर्वाधिक महत्व गृहस्थाश्रम में पत्नी के रूप में प्राप्त होता है। गृहस्वामिनी के रूप में वह घर में सम्मानित एवं प्रशंसित होती है। गृहस्थाश्रम की सभी धार्मिक क्रियाओं में वह पति की सहधर्मिणी के रूप में कार्य करने की अधिकारिणीं थी। सूत्रकाल में स्त्रियों से किसी प्रकार का कर नहीं लिया जाता था।[20] माता के रूप में भी स्त्री परम सम्मानीय एवं श्रद्धेय घोषित की गई है। आचार्य गौतम ने माता का स्थान आचार्य से भी श्रेष्ठ माना है। आपस्तम्भ माता के पतिता होने पर भी उसकी सेवा का निर्देश देते हैं। आचार्य गौतम तथा बौधायन ने नारी को पुरुष के अधीन माना है। कहीं–कहीं पर स्त्री को शुद्र के समकक्ष बना दिया गया है। चान्द्रायण, आदि व्रतो में, स्त्री तथा शूद्र से बार्तालाप को निषिद्ध माना गया है। स्त्री के साथ यात्रा वर्जित की गई है तथा शुद्र एवं स्त्री का आचमन नियम समान बताया गया है। धर्मसूत्रों में स्त्री को यज्ञ की अधिकारिणी नहीं माना गया है। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से सूत्रकालीन समाज में नारी की स्थिति पर्याप्त संन्तोषजनक नहीं दिखाई पड़ती है। कहीं–कहीं पर सूत्रकारों ने नारी को अनेक अधिकारों से अधिकृत करते हुए उसे समाज में प्रतिष्ठित स्थान प्रदान किया है। वहीं दूसरी ओर उन्होंने नारी को अनेक अधिकारों से वंचित भी किया है। अत नारी के प्रति सकारात्मक एवं नकारात्मक दृष्टिकोण के सम्यक विश्लेषण के अनन्तर सूत्रकाल में नारी की स्थिति अपने पूर्ववर्ती काल के सापेक्ष कुछ निम्न दिखाई पड़ती है।

---

[20]ऋग्वेद –10 मण्डल सूक्त –102

1.3 मनुस्मृति काल में महिलाओं की स्थिति –

भारतीय जीवन में आचार और व्यवहार सिखाने में स्मृतियों का स्थान अद्वितीय है। स्मृति साहित्य में मनुस्मृति का स्थान सर्वोपरि है जो सृष्टि के आदिपुरुष मनुविरचित, मनुस्मृति, मनुसंहिता, मानवधर्मशास्त्र, मानवशास्त्र आदि नामों से प्रचलित है। मनुष्य के लिए जीवन में अनिवार्य नियमों को अपनाने या बल दिया है, यदि कोई इन नियमों का उलंघन करता है, तो वह दण्डनीय बन जाता है। मनुस्मृतिकार मनु का मानना है कि सृष्टि के प्रारम्भ में एक पुरुष और एक स्त्री दोनों के सानिध्य से सृष्टि की उत्पत्ति और विकास जो यह चक्र चला वह आज भी अनवरत विद्यमान है, और निरंतर चलता रहेगा। यह प्रत्यक्ष भूत सृष्टि के निर्माण में महत्त्वपूर्ण तत्त्व स्त्री अति महत्वपूर्ण है उसके अभाव में सृष्टि की कल्पना असंभव है, तो हम स्त्री के अस्तित्व को कम क्यो ऑकते हैं? हम संसार का कोई भी साहित्य लेलें उसमें हमें नारी के विविध रूपों का दर्शन होता है क्योंकि मानव जगत का प्राय : आधा भाग नारी जाति का है। समय के परिवर्तन के क्रम में समय, स्थान, रुचि, परिस्थिति, इत्यादि के कारण नारी के सम्मान में कमी या भेद दृष्टिगोचर होता है। इसी प्रकार मनुस्मृतिकार मनु भी नारी के महत्व से परिचित थे।

मनुस्मृति के अनुसार जिस समाज और परिवार में स्त्रियों का आदर–सम्मान होता है, वहाँ देवता, निवास करते हैं अर्थात् वहाँ अलौकिक गुण और सुख समृद्धि निवास करते हैं।[21] इसके विपरीत जहाँ स्त्रियों की अवमानना होती है, उनका अनादर करने वालों के सभी काम निष्फल होते हैं। भले ही वह कितना भी श्रेष्ठ कार्य कर ले, उन्हें दुखों का भागी बनना पड़ता है। इस प्रकार का भाव समाज में होगा वहाँ स्त्रियों की स्थिति मजबूत होगी। हमें स्त्रियों को नमन करना चाहिए, मातृशक्ति अजर–अमर–शाश्वत व अमृत तुल्य है। वेदों के बाद मनुस्मृति स्त्री को सर्वोच्च सम्मान व अधिकार देती है और वर्तमान के अत्याधुनिक स्त्रीवादी भी इस उच्चता तक पहुचने में नाकाम रहे हैं क्योंकि हमने, स्त्रियों की अवहेलना किया है।

मनुस्मृतिकार मनु ने इस तथ्य को अच्छी तरह से हमारे मन मस्तिष्क में समाहित कर दिया कि यदि हम देश, समाज और परिवार की उन्नति की कामना

---

[21] ओलिवेल, पी. (2005). मनु का विधि संहिताः एक समालोचनात्मक संस्करण और अनुवाद। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

रखते हैं तो स्त्रियों को आदर देना अनिवार्य है। अन्यथा उनका अनादर का फल हमें भोगना पड़ता है। जब स्त्री दुखी मन से तिरस्कृत होकर शाप देती है मानों जैसे–सम्पूर्ण परिवार को विष दिया गया हो सभी मृत जैसे हो जाते हैं। अतः जिस परिवार में स्त्री प्रसन्न रहती है तो वहाँ सारा परिवार खुशहाल रहता है। परिवार में सभी से यह की जाती है कि पुरुष सदैव अपनी भाभी, पत्नी, माँ, पुत्री, बहन को यथा योग्य मीठा वाणी, वस्त्र, भोजन व आभूषण द्वारा प्रसन्न रखे। उन्हें किसी प्रकार क्लेश नहीं पहुंचने दें यह पुरुष वर्ग का दायित्व है। जो मनुष्य ऐश्वर्य की कामना करते हैं, उन्हें सत्कार और उत्सव के समय स्त्रियों का भोजन, वस्त्र, आभूषण, से सम्मान करना चाहिए परिवार में सन्तान को जन्म देकर घर का भाग्योदय करने वाली स्त्रियाँ सम्मान योग्य व घर को प्रकाशित करने वाली होती हैं। मनु के अनुसार शोभा, लक्ष्मी और स्त्री में कोई अन्तर नहीं है। महर्षि मनु ने स्त्री को घर की लक्ष्मी कहा है। मनु ने नारी को रत्न मानते हुए कहा है कि स्त्री रूपी रत्न जहाँ से भी प्राप्त हो ग्रहण कर लेना चाहिए। इसी प्रकार का भाव भर्तृहरिकृत श्रृंगार शतक में भी मिलता है वहां नारी को अस्त्र–शास्त्र रूपी आभूषण धारण करने वाली नारी के बिना घर की अपूर्णता, घर की शोभा तथा तपस्या का फल स्त्री को तथा ईश्वर की अद्वितीय कृति रूप में चित्रित किया है। मनु ने नारी को रक्षा योग्य माना है, इसलिए स्त्री की रक्षा बचपन में पिता करता है, युवावस्था में पति करता है और वृद्धावस्था में पुत्र करते हैं। मनु ने स्त्रियों की रक्षा का उचित मार्ग की ही धार्मिक बुद्धिमान होना बताया है क्योंकि जो स्त्रियाँ धर्मानुकूल बुद्धि होने से अपनी रक्षा स्वयं करती हैं, वे ही सुरक्षित हैं और जो स्त्रियां धर्म विरुद्ध बुद्धि की होती है वे आज्ञाकारी पुरुषों के द्वारा घर में रोकी जाती हुई भी सुरक्षित नहीं होती है।

(क) समाज में स्त्रियों की अपेक्षाएं – पत्नी को अर्धांगिनी, भार्या, जाया व पाणिगृहिती आदि नामों से जाना जाता है। मनु का कथन है, कि पतिलोक को चाहने वाली चाहने वाली पतिव्रता स्त्री को पति के प्रति अप्रिय कोई कार्य नहीं करना चाहिए। मन, वचन से संयम रहती हुई, पत्नी–पति सेवा से इस लोक में उत्तम सुख को तथा परलोक में पति के साथ अर्जित स्वर्ग और शुभ लोकों को प्राप्त करती है। विवाह के पश्चात्

पत्नी का पहला धर्म अपने पति की सेवा करना है। मनु के अनुसार जो स्त्री मन, वचन तथा शरीर को संयम रखती हुई पति की सेवा करती है वह साध्वी पतिव्रता कहलाती है। पत्नी को सदाचार से हीन, परस्त्रीगामी और विद्या आदि गुणों से हीन पति को भी देवता के समान पूजा करनी चाहिए और पत्नी को अपने पति के जीवत पर्यन्त पति की ही सेवा करनी चाहिए और पति के मरने पर भी मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। संतानोत्पदन, उत्पन्न हुई सन्तान की रक्षा और प्रतिदिन के लोक व्यवहार का कारण स्त्रियाँ हैं। धर्म कृत्य श्रेष्ठ पति, सन्तानोत्पत्ति आदि में सभी स्त्रियों के अधिकार हैं।

मनु के अनुसार बड़े भाई की स्त्री छोटे भाई के लिए गुरु पत्नी के समान है और छोटे भाई की स्त्री बड़े भाई के लिए पुत्र वधू के समान होती थी। पहली स्त्री से उत्पन्न हुए दो पुत्रों को कुण्ड और गोलक कहते हैं। पति के जीवित होने पर जो वह कुण्ड और मरने पर बह गोलक है पुत्र के लोभ से जो स्त्री परपुरुष से सम्बन्ध करती है वह यहाँ निन्दा को पाती है और स्वर्ग लोक से भी वंचित रहती है। परपुरुष के भोग से स्त्री लोगों की निन्दा का पत्र बनती है और मरने पर सियार की योनि को प्राप्त करती है और कुष्ठादि पाप रोगों से पीड़ित होती है।[22]

मनु अनुसार विदेश जाने वाले पति को अपनी पत्नी की जीविका का प्रबंध करना चाहिए क्योंकि जीविका प्रबंध ना होने के कारण पत्नी कुमार्ग का सहारा ले सकती है और जब पति, पत्नी की जीविका का प्रबंध करके विदेश चला जाये तो पत्नी को नियम से रहना चाहिए। यदि पति बिना जीविका का प्रबंध किये बिना चला जाता है तो पत्नी को शिल्पों (सिलाई, बुनाई आदि) द्वारा अपना पालन करना चाहिए। मनु ने परदेस चले गये पति की प्रतीक्षा की अवधि बताते हुए कहा है कि पत्नी धर्म कार्य के लिए विदेश गये पति की आठ वर्ष तक, विधा या यश के लिए विदेश गये पति की छः वर्ष तक और जीविकोपार्जन के लिए गये, पति की तीन वर्ष तक प्रतीक्षा करें।[23] इसके बाद वह पति के पास चली जाये। मनु के अनुसार माता का स्थान सर्वोपरि है इसीलिए माता की नित्य सेवा करनी चाहिए। मनु ने यह भी कहा है कि

---

[22] ओलिवेल, पी. (2005). मनु का विधि संहिताः एक समालोचनात्मक संस्करण और अनुवाद। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
[23]मनुस्मृति – प्रथम मण्डल सूक्त – 32

दुखी होकर भी माता का अपमान नहीं करना चाहिए। बालक के जन्म के समम गर्भाधारण, प्रसव वेदना, पालन रक्षण द्वारा माता जिस कष्ट को सहन करती है उसका बदला सैकड़ों वर्षों में भी नहीं चुकाया जा सकता। पुत को माता की आज्ञा के बिना किसी दूसरे धर्म का पालन नही करना चाहिए। जो माता का आदर करता है वह तीनों लोगों को प्राप्त करके दीप्यमान शरीर वाला होकर सूर्यादि देवताओं के समान स्वर्ग में आनन्द पाता है। परलोक सिद्धि के लिए पुत्र जो कुछ अर्जन करे उसे मन, बचन एवं कर्म से माता को अर्पित कर दे। मनु के अनुसार वृद्ध माता–पिता का पालन–पोषण सौ निकृष्ट कार्य करके भी करना चाहिए। जो पुत्र ऐसा नहीं करता वह दण्डनीय होता है। मनु ने माता के त्याग को अयोग्य कहा है, जो माता का त्याग करता है, वह छ : सौ पण से दण्डनीय होता है। जो मांता का त्याग तो नहीं करता किन्तु उसका अपमान करता है वह भी इसी दण्ड से दण्डनीय होता है।

(ख) परिवार में कन्या की स्थिति – मनु ने कन्या को भी परिवार में श्रेष्ठ स्थान दिया है। पुत्र के समान पुत्री को भी विशेष आदर दिया जाता था। मनु ने पुत्र के समान पुत्री को भी पिता की आत्मा कहा है। पिता को अपनी पुत्री को सदा वस्त्राभूषणों से अलंकृत करना चाहिए। पुत्री से कभी धन नहीं लेना चाहिए, जो ऐसा करता है वह पाप का भागी होता है, यदि कोई पिता आर्ष विवाह में भी गाय लेता है तो यह कार्य कन्या को बेचने के समान होता है मनु ने कन्या से झगड़ा करने के लिए मना किया है, कन्या को कभी दुखी नहीं होना चाहिए क्योंकि कन्या के दुखी होने पर कुल का नाश होता है और इन्हे प्रसन्न रहने पर कुल में वृद्धि तथा सम्पन्नता प्राप्त होती है। मनु के अनुसार यदि कन्या कुछ अपमान भी कर दे तो क्रोध को वश में करके सहन कर लेना चाहिए, झगड़ना नहीं चाहिए।

(ग) विवाह – मनु ने कन्या के विवाह के विषय में सबसे महत्वपूर्ण एवं आदर्शपूर्ण बात यह कही है कि कन्या को जीवन पर्यन्त घर में भले ही रोक लेना चाहिए किंतु गुणहीन, अयोग्य, दुष्ट पुरुष के साथ कदापि विवाह नहीं करना चाहिए। कन्या विवाह के योग्य होने पर तीन वर्ष तक अभिभावकों द्वारा योग्य वर प्राप्त होने की

प्रतीक्षा करें इसके बाद वह स्वयं गुणवान् पति का वरण कर ले, ऐसी कन्या और उसका पति थोड़ा भी पाप के भागी नहीं होते। मनु ने विवाह योग्य कन्या के गुणों का वर्णन करते हुए कहा है कि जो किसी अंग से हीन न हो, सुंदर नाम वाली हो, गजगामिनी हो, बारीक दांत वाली हो, सुंदर शरीर वाली हो ऐसी कन्या से विवाह करना चाहिए । ऐसी कन्या से विवाह निषिद्ध माना गया है जो कि माता के सात पीढ़ी (सपिंड) की हो और पिता के गोत्र की हो, भूरे वर्ण वाली हो, आधिक या कम अंगो वाली, रोगी, कम या अधिक रोम वाली तथा भूरी आँखो वाली हो। इसके अतिरिक्त जिस कन्या के कोई भाई न हो और जिस कन्या के माता–पिता का ज्ञान न हो उससे विवाह न करें। मनु कन्या को माता–पिता पर बोझ नहीं समझते थे अपितु कन्या का दायित्व रूपेण सुयोग्य वर के साथ पाणिग्रहण संस्कार का विधान था। भारतवर्ष में स्वयंवर तथा अत्यंत प्राचीन है। मनुस्मृतिकार भी स्वयंवर को उचित मानते थे। माता–पिता कन्या पर जबरन दबाव बनाकर विवाह न कराने की अपेक्षा वर चयन में उसकी सहायता करें।[24]

जिस प्रकार नदियाँ समुद्र के साथ मिलकर उसी के अनुरूप गुण वाली हो जाती है। उसी प्रकार स्त्री, पति के साथ, विधिपूर्वक विवाह करके उसी के समान गुण वाली हो जाती है। मनु का मानना था कि जो स्त्री अपने पति के अनुकूल रहकर सभी कार्य करती है। वह स्त्री सज्जनों द्वारा पतिव्रता कही जाती है और मरणोपरांत वह यतिलोक को प्राप्त करती है। विवाह में दहेज अथवा किसी भी प्रकार के लेने–देन को मनुस्मृति पूरी तरह निषिद्ध करती है जिसमें की कोई लालच की भावना से ग्रस्त न हो और स्त्री के धन को कोई लेने की हिम्मत न करे। इसी प्रकार का भाव निम्न श्लोक में वर्णित है कि जो वर के पिता, भाई, रिस्तेदार आदि लोभवश कन्या अथवा कन्या पक्ष से धन, सम्पत्ति, वाहन अथवा वस्त्रों को लेकर उपभोग कर जीते हैं ऐसे लोग निन्दनीय महानीच होते हैं। मनुस्मृतिकार गृहस्थ जीवन का मूलमंत्र बताते हैं कि पति–पत्नी दोनों मृत्युपर्याप्त साथ रहते हुए, धर्म उल्लंघन से बचे यही मानव धर्म का भी मूल है। तत्कालीन समाज में भी गृहस्थाश्रम समाज द्वारा प्रतिष्ठित के आदर्श आश्रम माना जाता था, जो अन्य आश्रमों की ही भाँति असंख्य दायित्वों से परिपूर्ण

[24]मनुस्मृति – 3,55,12

था। बड़े भाई की पत्नी गुरुपत्नी और छोटे भाई को पत्नी बड़े भाई के लिए पुत्रवधु समान होती थी। सगाई हो जाने पर कन्या का होने वाला पति मर जाये, तो पति के छोटे भाई (देवर) से विधिपूर्वक विवाह करने का प्रावधान बताया है। जो आज भी समाज में देखा जाता है। मनु कहते हैं कि सन्तानोत्पति के कारण, वंश विस्तार करने वाली स्त्रियां मनुष्य के महान भाग्य का उदय करने वाली पूजा के योग्य घर को प्रकाशित करने वाली होती है। घरों में स्त्रियाँ लक्ष्मीस्वरूप है क्योंकि हमारे घरों में स्त्रियों और लक्ष्मी में कोई भेद नहीं है। मनु स्त्री को घर की लक्ष्मी देवी, समृद्धि, सुख सम्पन्नता व खुशहाली का प्रतीक रूप मानते थे।

(घ) शिक्षा – मनुस्मृति में नारी शिक्षा हेतु कोई विशेष वर्णन नही है, क्योंकि जिसका यज्ञोपवीत, संस्कार होता है उसको ही वेदाध्ययन का अधिकार दिया गया है। किन्तु मनु ने स्त्रियों के संस्कार के विषय में कहा है कि स्त्रियों का विवाह संस्कार ही वैदिक संस्कार है, पति सेवा ही गुरुकुल निवास गृहकार्य ही अग्निहोत्र कर्म है। स्त्रियों के जातकर्मादि संस्कारों में मन्त्रों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। ऐसी धर्म में व्यवस्था है। मनु ने पुरुषों को स्त्रियों से अलग रहने के लिए कहा है। क्योंकि स्त्रियां श्रृंगार चेष्टाओं के द्वारा पुरुषों में दोष उत्पन्न कर देती है, विद्वान पुरुष स्त्रियों के विषय में असावधानी नहीं करते। अत वह उनसे अलग ही रहते हैं। स्त्रियाँ काम तथा क्रोध के वशीभूत मूर्ख या विद्वान पुरुष के साथ भी एकान्त में नहीं रहना चाहिए। मनु ने नारी रक्षा का दायित्व उसके माता–पिता को ही नहीं दिया अपितु राजा द्वारा भी नारी रक्षा करने पर बल देते हुए कहा है कि राजा आपत्ति के लिए धन की, धन द्वारा स्त्रियों की ओर धन तथा स्त्रियों के द्वारा अपनी रक्षा करे। स्त्रियों को अपनी सुरक्षा स्वयं करनी जो अपनी सुरक्षा स्वयं करती हैं। वह स्त्री सुरक्षित रहती है। घर में बंद करके रखने से स्त्रियाँ असुरक्षित रहती हैं ।

मनु का मत है कि शय्या, आसन, अलंकार, काम, क्रोध, अनार्जन, द्रोहभाव और कुचर्या मनु ने स्त्रियों के लिए उत्पन्न किये हैं। उबटन लगाना, स्नान कराना, देह दबाना, फूलों से बाल गूंथना गुरु पत्नी की न करें। पूर्ण 20 वर्ष का शिष्य गुण–दोष

को जानने वाला गुरुपत्नी को पैर छुकर नमस्कार न करे[25] (अर्थात दूर से भूमि पर प्रणाम कर ले) यह स्त्रियों का स्वभाव है कि पुरुषों को दोष लगा देना इससे पंडित लोग स्त्रियों में प्रमत्त नहीं होते बल्कि बड़े सावधान रहते हैं। काम, क्रोध के वश में हुआ पुरुष विद्वान व मूर्ख हो, उसको, बुरे मार्ग पर ले जाने में स्त्री समर्थ है। स्त्रियों को सदैव प्रसन्न, गृहकार्यों में चतुर, घर के पात्र आदि को शुद्ध और स्वच्छ रखने वाली होना चाहिए। इसके अतिरिक्त स्त्री को धन संग्रह, व्यय, वस्तुओं को ठीक प्रकार व्यवस्थित करना। धार्मिक कृत्य करना, पाक कला एवं गृहकायों में निपुण होना चाहिए। मादक द्रव्यों का सेवन, दुष्ट लोगो की संगति, पति से पृथक रहना, दिन में सोना, इधर–उधर विचरण करना और दूसरों के घर में रहना यह स्त्री के छः दोष है। इसलिए मनु ने स्त्रियों को इन दोषों से बचाने के लिए पिता, पति या पुत्रादि अभिभावक को यह आदेश दिया है कि स्त्री को धन के संग्रह, व्यय, वस्तु तथा पदार्थों की शुद्धि पति की सेवा तथा घर के कार्यों में नियुक्त करे जिससे स्त्री इन छ दोषों से बची रहें।

(ड.) दंड – नारी के हरण को मनु अत्यन्त हेय दृष्टि से देखते हैं। जो नारी का हरण करे उसके लिए दंड का भी विधान दिया है। मनु के अनुसार जो श्रेष्ठ कुल की स्त्री की चोरी करता है वह राजा के द्वारा वध के योग्य है। ऐने पुरुष को चन्द्रायण व्रत के द्वारा प्रायश्चित करना चाहिए। समाज में विभिन्न पापों पर रोक लगाने के लिए दण्ड की व्यवस्था की गई थी। दंड केवल पुरुषों को ही नहीं, स्त्रियों को भी दिया जाता था। किन्तु मनु ने पुरुषों को भारी तथा स्त्री को हल्का दंड देने का विधान दिया है। जाति से भिन्न स्त्री को भी दण्ड नहीं देना चाहिए उसका भोजन तथा वस्त्र से पालन करना चाहिए। विश्वासघाती स्त्री का भी त्याग नहीं करना चाहिए। केवल चन्द्रायण व्रत द्वारा उस स्त्री को अपनी शुद्धि कर लेनी चाहिए। मनु ने नारी के विषय में कई दण्ड विधानों का उल्लेख किया है. मनु ने स्त्री के दुराचार को रोकने के लिए दंड की व्यवस्था प्रदान की है। जो स्त्री पिता या परिवार वालों के पास अधिक धन होने पर अभिमान से परपुरुष के साथ संगति करके अपने पति का अपमान करे उसे राजा

[25] ऋग्वेद –8,815,13

सबके सामने कुत्तो से कटवायें। मद्यपान करने वाली स्त्री को राजा द्वारा अर्थदण्ड देना चाहिए। इन स्त्रियों के विवादों के विषय में स्त्रियों को ही साक्षी बनना चाहिए। मनु ने संतान का अभाव होने पर पति या गुरु से आज्ञा पाया हुआ स्त्री का देवर या सपिण्ड के साथ एक पुत्र को उत्पन्न करने का अधिकार विधवा स्त्री को दिया है किंतु वह दूसरे पुत्र को कदापि उत्पन्न न करें। इस जगत में माता, पिता, स्त्री, पुत्र ये सभी विपरीत परिस्थितियों में त्याग योग नहीं है जो त्याग का अपराध करता है उसे राजा द्वारा 6 सौ पण दंड दिया जाना चाहिए। जो व्यक्ति माता, पिता, पत्नी, भाई, पुत्र, गुरू पर झूठे आरोप लगाता है उसे सौ पण का दंड देना चाहिए।

(च) संपत्ति – मनुस्मृति[26] में कहा गया है कि स्त्री, पुत्र एवं शुद्र ये तीनों सदा सम्पत्तिहीन ही होते हैं, वह जीवनकाल में जो कुछ उपार्जन करते हैं जिसके वह पुत्र, पत्नी और दास है वह धन इन्हीं तीनों का होता है।[27] मनु ने पुत्री को पुत्र के समान ही पिता की आत्मा माना है। यदि पिता के कोई पुत्र नहीं है और पुत्री है, तो मृत पिता के धन को पुत्री के होते हुए अन्य कोई नहीं ले सकता। इस प्रकार का भी प्रावधान था कि पुत्रहीन पिता की सम्पूर्ण धन सम्पत्ति को पुत्री का पुत्र ग्रहण करने का आधकारी होता था। मनु ने भाई का ये कर्तव्य माना है कि वह अविवाहित कन्या को अपने–अपने भागों में अलग–अलग चतुर्थांश प्रदान करे और यदि वह ऐसा नहीं करते हैं तो वह धर्म के मार्ग च्युत माने जाते हैं।[28] मनुस्मृतिकार ने, स्त्री धन छह प्रकार के स्वीकृत किये है वह है – विवाह संस्कार के समय पितृपक्ष द्वारा प्रदत्त विवाह के पश्चात पिता के घर से प्राप्त धन, समय–समय पर पति द्वारा, प्रसन्न होकर दिया गया धन, कन्या के किसी कार्य से प्रसन्न होकर अथवा किसी विशेष अवसर पर उपहार स्वरूप प्राप्त धन, भाई द्वारा प्रदत्त, पिता और माता से प्राप्त धन । स्त्री के विवाह के पश्चात पति के कुल से अथवा पितृपक्ष से या फिर पति से प्राप्त हुआ जो भी स्त्री का छ प्रकार का धन होता है। वह धन पति के जीवित रहने अपितु मृत होने पर स्त्री की संतानों को ही प्राप्त होता है पति को नहीं। जो स्त्री धन आसुर विवाह में

---

[26] ओलिवेल, पी. (2005). मनु का विधि संहिताः एक समालोचनात्मक संस्करण और अनुवाद। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
[27] ओलिवेल, पी. (2005). मनु का विधि संहिताः एक समालोचनात्मक संस्करण और अनुवाद। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
[28] मनुस्मृति१ – ,55,7

मिलता है निःसंतान रहने व मरने पर माता–पिता को ही दे दिया जाता है। स्त्री को विवाह के अवसर पर पिता और भाई से प्राप्त धन पर केवल उसकी कन्या का ही अधिकार होता है और पुत्र रहित मामा के सम्पूर्ण धन पर पुत्री के पुत्र का अधिकार बताया है।

मनुस्मृतिकालीन नारी स्थिति का कलेवर अत्यंत विस्तृत है जिसके विविध पक्ष है। यदि हम मनुस्मृति के सकारात्मक पक्ष की बात करते हैं तो नारी स्थिति अत्यंत उन्नत थी जैसा कि प्रस्तुत शोधपत्र में बताया गया है परन्तु इसका दूसरा नकारात्मक पक्ष भी हैं। जहाँ नारी की स्थिति अत्यंत पक्षपातीपूर्ण प्रतीत होती है। मनुस्मृति आचार–व्यवहार, नियम, कानून बताने वाला बहुत ही प्रसिद्ध ग्रंथ है जहाँ कहीं–कहीं मतभेद मिलता है, वहाँ हम इसे प्राक्षिप्त अंश भी मान सकते हैं। मनुस्मृति जैसे श्रद्धा से परिपूर्ण ग्रंथ को फाड़कर जलाने की भी अभी कुछ समय पूर्व की घटना है, जिसने सभी को आहत किया। संसार में किसी भी वस्तु या व्यक्ति में केवल सारी अच्छाइयाँ ही हों बुराइयों न हो, यह संभव नहीं है परन्तु यह हमारे विवेक पर निर्भर करता है कि हम क्या ग्रहण करें और क्या छोड़े। इसका सरला सा उपाय है सकारात्मकता को ग्रहण करें नकारात्मकता को छोड़ दें और आगे बढ़ें यही जीवन का क्रम है। भारतीय संस्कृति अपने प्राचीन स्वरुप से ही स्त्री को परिवार व समाज में प्रतिष्ठित स्थान देने की पक्षपाती है। जहाँ वेदों में उसे देवी तुल्य पद प्राप्त था वहीं समाज के क्रम से बाद के काल में नारी स्थिति में न्यूनाधिक्य भाव से परिवर्तन आया। इसी प्रकार मनुस्मृति में भी नारी स्थिति उन्नति भी उसे समाज और परिवार में सम्मानजनक पद प्राप्त था। जहाँ स्त्रियों का सम्मान होता था वहाँ खुशहाली से परिपूर्ण वातावरण का निर्माण होता था जो पति या परिवार स्त्रियों को प्रसन्न रखता था वह समृद्ध होता था। उसे घर की लक्ष्मी माना गया। गृहस्थ जीवन में पुरुष और स्त्री एक दूसरे के बिना अपूर्ण माने जाते थे। स्त्री की सहभागिता धार्मिक, अध्यात्मिक कार्यों के लिए अति आवश्यक स्वीकार की गई। धन को संभालने और उसके व्यय की जिम्मेदारी भोजन पकाना, सम्पूर्ण घर की व्यवस्था में उसे स्वायत्ता की बात की गई है। स्त्रियों को चार दिवारी में कैद रखने की आवश्यकता नहीं है वह अपनी सुरक्षा स्वयं करने में समर्थ होती है। उसे ग्रहस्थाश्रम के प्रवेश के लिए विवाह संस्कार में अपना वर चयन

करने में की स्वतंत्रता थी, पारिवारिक दबाव निषिद्ध था। पिता की सम्पत्ति में पुत्र के बराबर पुत्री का अधिकार भी होता था वह माता की सम्पत्ति में भी अधिकारी होती थी। उसे भोजन, वस्त्र, आभूषण आदि से सुसज्जित रहने का अधिकार प्राप्त था। अपने चरित्र व आत्म–सम्मान की रक्षा स्वंय के अधीन थी और साथ ही पिता, भाई, पति और पुत्र का भी दायित्व था कि वह समाज में न केवल अपने परिवार की अपितु सपूर्ण स्त्री जाति की रक्षा के दायित्व का निर्वहन करें। संक्षेप में अशोक सिंह द्वारा रचित कविता की पंक्तियाँ नारी के स्वरूप को कुछ यूं बयां करती है –

"घर की परिधि में,
बिना कागज कलम के
लिखती है अनकही आत्मकथा।

1.4 बौद्ध काल में महिलाओं की स्थिति –

भारतीय समाज और साहित्य में महिलाओं की सामाजिक और पारिवारिक स्थित सदैव अध्ययन, चिंतन और चर्चा का विषय रही है। अनेक साहित्यो से महिलाओं की सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति पर टिप्पणी एवं व्याख्या करने वाले अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर चर्चा की गई, उनकी कुछ अव्यक्त पीडाओं, भावनाओं, उनके प्रश्नों, उनकी समस्याओं को उजागर किया गया। कुछ उदाहरण रामायण–महाभारत में हिन्दू सामाजिक व्यवस्था का उदाहरण और उस सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं के स्थान, स्थिति और स्थिति का दर्शन सदियों से होता आ रहा है और इसमें महिलाओं की सामाजिक और पारिवारिक स्थिति को प्रभावित किया जाता रहा है।

भारत एक बहुधार्मिक समाज वाला देश है। जिसमें हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म, सिख धर्म, ईसाई धर्म और भारत में उत्पन्न बौद्ध धर्म शामिल हैं, जिसे "धम्म" कहा जाता है यानी बौद्ध संस्कृति के अनुसार अनुकरण का मार्ग। ये देश ऐसे ही विभिन्न धर्मी से भरा पड़ा है। प्रत्येक धर्म का अपना साहित्य होता है। हिंदू संस्कृति के दर्शन की तरह ही उस धर्म का साहित्य रामायण, महाभारत, गीता से मिलता है। इसी तरह अरबी और उर्दू भाषाएं महत्त्वपूर्ण हैं और साहित्य कुरान, हदीस, सीखता है, जो मुसलमानों की संस्कृति यानी इस्लाम को दर्शाता है। सिख धर्म जिसकी मुख्य भाषा

पंजाबी है, अपनी संस्कृति को गुरुग्रंथ साहिब साहित्य के माध्यम से संरक्षित करता है, जबकि ईसाई धर्म अपनी संस्कृति को बाइबिल स्टोरी साहित्य के माध्यम से संरक्षित करता है। और यह प्राचीन काल की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति को दर्शाता है और उससे हमें महिलाओं की स्थिति के बारे में जानकारी मिलती है। पाली साहित्य अन्य साहित्यों की तरह एक ऐसा साहित्य है जो बौद्ध संस्कृति में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और अपनी स्वतंत्र स्थिति को बरकरार रखता है। पालि साहित्य जीवनवादी, मानवतावादी साहित्य है, साहित्य जो हमारे साहित्य में स्वंय को प्रस्तुत करता है। जिससे पालि साहित्य जीवनवादी एवं यथार्थवादी साहित्य बन जाता है। थेरीगाथा बौद्ध धर्म के सबसे महत्वपूर्ण पाली साहित्य त्रिपिटक में थेरगाथा की तरह एक अत्यंत महत्वपूर्ण पुस्तक है। थेरगाथा की तुलना में पाली साहित्य का थेरीगाथा अधिक लोकप्रिय एवं उपयोगी साहित्य है। क्योंकि पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था में जहाँ महिलाओं को निम्न दर्जे का माना जाता था, थेरी गाथा में थेरी का जीवन पूरें जम्बूद्वीप को प्रभावित कर रहा है। बौद्ध साहित्य में थेरीगाथा नामक पुस्तक में गौतम बुद्ध की समकालीन भिक्षुणियों के जीवन के अनुभव उन्हीं के शब्दों में आये हैं। जिसमें उन्होंने एक महिला के तौर पर अपने जीवन के दर्द को खुलकर और बेझिझक पेश किया है। यह थेरीगाथा को बौद्ध साहित्य में महिलाओं की स्वतंत्रता को व्यक्त करने वाली पहली पुस्तक बनाती है। थेरीगाथा में, तथागत गौतम बुद्ध के समकालीन के रूप में अपने जीवन के अनुभवों को प्रस्तुत करने वाली सभी भिक्षुणियों ने गौतम बुद्ध के श्रावक संघ में प्रवेश किया। बौद्ध–पूर्व युग में महिलाओं को मोक्ष प्राप्त करने, अर्थात आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। इसलिए महिलाओं को अपने श्रावक संघ में प्रवेश देकर, महिलाओं को समान दर्जा देकर, बुद्ध पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के पहले चौंपियन बन गए और इसलिए बौद्ध संस्कृति में बुद्ध को स्त्री–पुरुष समानता का समय माना जाता है। भले ही यह कहा जा सकता है कि बुद्ध के समय में महिलाओं के श्रावक संघ में प्रवेश का मतलब बुद्ध द्वारा धम्म और आध्यात्मिकता के स्तर पर महिलाओं को दी गई समानता का दर्जा था। लेकिन बुद्ध के समय महिलाओं की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति क्या थी? समय? हालाँकि इसका अध्ययन थेरीगाथा में भिक्षुओं के आत्मकथात्मक शब्दों और गाथा में

उनके द्वारा प्रस्तुत वास्तविक जीवन के अनुभवों से किया जा सकता है। थेरीगाथा में, बुद्ध के समय की प्रबुद्ध महिलाओं ने कहा कि अतीत का उनका जीवन उत्पीडनपूर्वक, मिलता रहा है, बौद्ध संस्कृति में उनका भिक्खुनी जीवन महिलाओं का नया जन्म है, एक नया जन्म है, जो महिलाओं का रक्षक और उपकारी है। इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है, थेरीगाथा में ऐसी कुल 73 भिक्षुणियों का वर्णन किया गया है। जो विभिन्न सामाजिक और आर्थिक स्तरों से भिक्खुनी संघ में शामिल हुए हैं और अरिहंत पद प्राप्त किया। बुद्ध के भिक्खनी संघ में प्रवेश करने वाली महिलाएँ समाज के विभिन्न सामाजिक और आर्थिक स्तरों से आती थीं। जब महाप्रजापति गौतमी ने श्रावक संघ में प्रवेश किया तो उनके साथ 500 शाक्य स्त्रियाँ भी संघ में प्रविष्ट हुई। जिसमें राजकुमार सिद्धार्थ की पत्नी यशोधरा स्वंय राजकुमारी थीं। वह भी शामिल थीं। प्रजापति गौतमी एक राजकुमारी और राजा शुद्धोधन की पत्नी थीं। रानी खेमा सगल की राजकुमारी और राजा बिम्बिसार की पत्नी थीं। भिक्षु निस सुमना, जयंती भी शाही महिलाएँ थी। विशाजा आयंत साधारण परिवार की महिला थीं, जबकि सुमंगलमाता एक गरीब परिवार की महिला थीं जबकि सुमंगलमाता एक गरीब परिवार से थीं। किसा गोतमी एक गरीब पारिवारिक पृष्ठभूमि से आती थीं। भिक्खुनी संघ में अत्यंत सम्मानित पद पर आसीन पटाचारा का जन्म भी श्रावस्ती के घनिष्ठ के घर में हुआ था। सुंदरी नंदा नाम की एक महिला, जिसे जनपद कल्याणी शहर की सबसे खूबसूरत महिला होने का गौरव प्राप्त था। उन्होंने भिक्षुणी के रूप में बुद्ध के श्रवण संघ में भी प्रवेश किया। इतना ही नहीं, बुद्ध का श्रावक संघ उन महिलाओं के लिए भी खुला था जिन्हे समाज में वैश्या माना जाता था। भिक्खुनी अभयमाता जो उज्जयिनी की प्रसिद्ध वैश्या थी। विमला वैशाली की एक उपपत्नी की बेटी थी और अतुलनीय सौन्दर्य से युक्त, दान में कभी पीछे न रहने वाली आम्रपाली ने भी बुद्ध के भिक्खुनी संघ में प्रवेश किया और अपने ज्ञान से अर्हत पद प्राप्त किया[29]।

[29] आर.सी. मजूमदार 'एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया', पृष्ठ 70–85

1.5 चोल काल में महिलाओं की स्थिति –

इस देश की महिलाएं आज तक सभी पहलुओं में पुरुषों की तुलना में पराधीनता का जीवन जी रही हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर, लंबे समय से उन्हें आनंद की वस्तु, पुरुषों की सहायता करने वाले इंसान और बच्चों को जन्म देने के साधन के रूप में माना जाता रहा है। इसी प्रकार, तमिल देश के लंबे इतिहास में, बहुत कम ही महिलाओं को पुरुषों के साथ समान दर्जा और अवसर प्राप्त हुए। चोल राजवंश भी इसका अपवाद नहीं था। चोलों ने जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक में उत्कृष्टता हासिल की थी, इसके बावजूद महिलाओं की स्थिति बहुत कम रखी गई थी, हालांकि डॉ० आर० जैसे विद्वान। नागास्वामी, प्रो० वी० बलम्बल और प्रो० के सदासिवन दूसरे शब्दो में परिभाषित करते हैं। डा० आर० नागास्वामी और प्रो० वी० बलम्बल ने चोल वंश की कुछ शाही महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करके और विषय का सामान्यीकरण करके यह निष्कर्ष निकाला कि महिलाओं की स्थिति बहुत ऊँची थी। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि ये दोनों विद्वान उन आम महिलाओं पर ध्यान देने में विफल रहे हैं, जो दासता और विकलांगता में अपना जीवन व्यतीत करती हैं। इसी तरह प्रोफेसर के० सदासिवन ने तंजावुर के राजराजीसवार्म मंदिर की देवदासियों पर अपने अध्ययन में देवदासियों को प्राप्त प्रावधानों और विश्वशेषाधिकारों को ध्यान में रखते हुये निष्कर्ष निकाला कि चोल महिलाओं की स्थिति ऊंची थी। आधुनिक दृष्टि से देवदासी का पेशा न केवल हेय है बल्कि सभ्य समाज के लिए एक काला धब्बा भी है। फिर भी यदि कोई विवेकपूर्वक प्रणाली का अध्ययन करता है तो उसे पता चल सकता है कि उनका उपयोग पुरुषों के लिए सौंदर्य, आनंद और मनोरंजन के केंद्र के रूप में किया जाता था। उनके साथ न तो समान व्यवहार किया गया और न ही उन्हें किसी भी क्षेत्र में पुरुषों के साथ समान अवसरों का आनंद लेने की अनुमति दी गई। विरासत का कोई अधिकार नहीं चोल शासकों ने वंशानुक्रम के सिद्धांत का पालन किया। शासक की मृत्यु के बाद उसका सबसे बड़ा पुत्र राजगद्दी का उत्तराधिकारी होता था। दिल्ली में मुस्लिम शासन के तहत भी रजिया बेगम नाम की महिला सल्तनत पर कब्जा करने में सक्षम

थी। लेकिन चोल देश में शासक की मृत्यु के बाद सिंहासन पाने के लिए उपयुक्त उत्तराधिकारी के अभाव में भी किसी महिला को सिंहासन पर कब्जा नहीं किया गया था। यहां तक कि जब उसके पति की मृत्यु हो गई तो पत्नी युवा और शिक्षित थी, फिर भी उसे राजगद्दी पाने के लिए उपयुक्त नहीं माना गया। उदाहरण के लिए, कंडारतित्य की रानी, सेम्पियान, महादेवी, यो बहुत कम में विधवा हो गई थीं। वह लगभग 15 वर्षो तक अपने पति के साथ रहीं और 958 ई० में जब कंडारतित्य की मृत्यु हुई, यद्यपि वह युवा, शिक्षित और ऊर्जावान थीं, फिर भी उन्हें एक कुशल महिला शासक की तुलना में पुरुष शासक की अनुपस्थिति में भी उपयुक्त नहीं माना गया। इसलिए उन्होंने कंदरातिया की मृत्यु के बाद सिंहासन का उत्तराधिकारी बनने के लिए उसके भाई अरिंजय खजिसने बाद में अपनी अक्षमता साबित कर दी, को चुना। इस घटना से बहुत निराश होने के बाद उन्होंने अपना शेष जीवन धार्मिक इमारतों के निर्माण और मंदिरों के उचित। रख–रखाव के लिए दान देने में बिताया। उन्होंने अपने मृत पति के सम्मान में कुंभकोणम के पास कोनेरीराजपुरम में प्रसिद्ध उमामकेश्वर मंदिर का निर्माण भी कराया। कभी–कभी राजा की मृत्यु के बाद। उसकी पत्नी को देश पर शासन करने के लिए नियुक्त करने के बजाय, वे कम उम्र की परवाह किए बिना उसके बेटे को ही सिंहासन का उत्तराधिकारी नियुक्त करते थे। यदि बेटा इतना छोटा था तो उन्होंने लड़के के वयस्क होने तक राज्य के मामलो की देखभाल के लिए एक रीजेंट नियुक्त किया। उदाहरण के लिए, जब चोल राजा राजराजा द्वितीय की मृत्यु हो गई, तो राजाधिराज जो दो साल का बच्चा था, को युवराज बनाया गया और मुख्यमंत्री शासक बन गया और राज्य का प्रशासन चलाने लगा। यद्यपि बच्चे को कम उम्र में राजा के रूप में ताज पहनाया गया था, लेकिन सरकार मुख्यमंत्री के हाथों में जारी रही, जिन्होंने ताज के प्रति अडिग निष्ठा के साथ अपने कर्तव्यों का पालन किया। इसी प्रकार जब 1044 ई० में राजेंद्र प्रथम की मृत्यु हुई तो वे अपने पीछे, तीन पुत्र छोड़ गये। राजाधिराज, राजेन्द्र द्वितीय और वियाराजेंद्र। उनमें से पहले दो के कोई पुत्र नहीं था। इसलिए, राजाधिराज ने प्रशासन में सहायता के लिए अपने छोटे भाई राजेन्द्र द्वितीय को युवराज नियुक्त किया। राजा बनने के बाद बुद्धिमानी की तरह, राजेंद्र द्वितीय ने अपने छोटे आई

वीरराजेन्द्र को अपने ही बेटे की असामयिक मृत्यु पर युवराज्य नियुक्त किया जबकि वह युवराज था। पति की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी को चाहकर भी उसकी संपत्ति बेचने की अनुमति नहीं थी। मृत व्यक्ति का बेटा संपत्ति और बकाया का उत्तराधिकार पाने का हकदार था। यदि बेटा छोटा था तो कुछ करीबी पुरुष, रिस्तेदार संपत्तियों और बकाया के संरक्षक के रूप में कार्य करते थे। उसे केवल संपत्ति बेचने का अधिकार था, मृत व्यक्ति की पत्नी को यह अधिकार नहीं दिया गया था। उदाहरण के तौर पर एक शिलालेख उस घटना का उल्लेख करता है जहां मृत पति के भाई ने संपत्ति की बिक्री के लिए संरक्षक के रूप में कार्य किया क्योंकि बेटा नाबालिग था। ओममपुलियूर से प्राप्त 13वीं शताब्दी ई० के एक अन्य शिलालेख से पता चलता है कि महिला के पिता ने विक्री के लिए संरक्षक के रूप में कार्य किया था। बलासीरायण की पत्नी अलापिरांतल नाम की एक महिला की जमीन बेची गई थी और इस मामले में महिला के पिता करूणाकर ने बिक्री के लिए संरक्षक के रूप में कार्य किया था। फिर भी उन्हें ग्राम सभाओं के सदस्यों के रुप में सेवा करने और कानूनी विवादों का फैसला करने के लिए न्यायाधीशों के रूप मे कार्य करने के अधिकार से वंचित कर दिया गया। उनकी आवाज अप्रत्यक्ष रूप से ही सुनी जानी चाहिए थी। इस प्रकार महिलाओं को न केवल शासन करने में असमर्थ माना जाता था बल्कि अपने मुद्दे का प्रतिनिधित्व करने में भी असमर्थ माना जाता था।

सामान्यत भारतीय राजा अनेक स्त्रियों से विवाह करने के शौकीन होते थे। हम अधिकांश तमिल शासकों की असंख्य पत्नियों के बारे में सुनते हैं। वेनिस के यात्री मार्को पोलो का कहना है कि पांडियन राजा कुलशेखर पांड्य की 300 पत्नियाँ थीं। राजा आमतौर पर अपने परिवार में ही शादी करता था और अपनी जाति और स्थिति के अनुसार दुल्हन चुनता था। हमारे पास राजनीतिक कारणों से अलग–अलग परिवारों में शादी करने के भी उदाहरण हैं। उदाहरण के लिए चोल राजा परांतक प्रथम ने उस शक्ति के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने और अपने शत्रुओं की लोकप्रियता को रोकने के लिए राष्ट्रकूट राजकुमारी से विवाह किया था। इसी प्रकार राजराजा का पश्चिमी चालुक्यों के प्रभाव को कम करने के लिए अपनी बेटी कुंडवई को पूर्वी चालुक्य राजकुमार विमलादित्य को दे दिया। यह विवाह संबंध एक सर्वोत्तम

कूटनीति साबित हुआ। जिसने न केवल पूर्वी चालुक्यों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखा बल्कि पश्चिमी चालुक्यों के प्रभाव को भी कम कर दिया। फिर भी समय के साथ यह कुलीश वंश बन गया और कुलोत्तुंगा प्रथम के चोल सम्राट बनने पर इसने चोल सिंहासन पर कब्जा कर लिया। उत्तम चोल की कम से कम पाँच पत्नियाँ थीं, राजराज प्रथम और राजेंद्र प्रथम की सैकड़ो पत्नियाँ थीं। उन्होंने अलग–अलग हरम बनाए रखा जो एक विशाल प्रतिष्ठान था जिसमें युद्ध में पकड़ी गई राजकुमारियाँ भी शामिल थीं। उन्हें अलग अपार्टमेंट उपलब्ध कराया गया था और उनका अलग रूटीन था जो उनकी सुख–सुविधाओं का ख्याल रखता था। चोल काल के दौरान पुरुषों ने महिलाओं से विवाह किया और उन्हें व्यक्तिगत अधिकारों और कर्तव्यों के बिना जानवरों के रूप में नियुक्त किया।

(1) युद्ध में महिला बंदी – चोल काल के दौरान महिलाओं को एक मूल्यवान वस्तु और एक कीमती धातु के रूप में माना जाता था। युद्ध के समय में उन्हें सुरक्षा प्रदान करने के बजाय उन्हें युद्ध की अन्य लूट के साथ युद्ध लूट के रूप में जब्त कर लिया गया और विजयी दल के घर ले जाया गया और फिर उनके गंदे उद्देश्यों के लिए उपयोग किया गया। यह प्रथा तमिल देश में संगम युग से ही प्रचलित थी। पट्टिनाप्पलाई 12 महिला बदियों को कोटि–माकलिर के रूप में संदर्भित करता है और विस्तार से बताता है कि कावेरीपूमपट्टिनम के मंदिर में दीपक जलाने के लिए उनका उपयोग करके उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया था। पदिरूर्रपट्ट 13 में आगे कहा गया है कि महिला बदियों के बाल काटकर उनका मुंडन किया जाता था, बल्कि कोई दया दिखाए बिना उन्हें मार भी दिया जाता था। उदाहरण के लिए होतूर शिलालेख 14 सत्याश्रय में कहा गया है कि चोल सेना ने चालुक्य देश को तबाह करने के बाद कई महिलाओं और बच्चों की हत्या कर दी। चोल राजाओं ने पराजित देश की शाही रानी और राजकुमारी को भी नहीं छोड़ा। उन्हें घर लाया जाता था और उनका उपयोग अपने निम्न सुखों को पूरा करने के लिए किया जाता था। उदाहरण के लिए चोल राजा वीरराजेंद्र ने चालुक्य सेना को हराने के बाद चालुक्य राजा की नागलाई नामक एकलौती बेटी को पकड़ लिया, और उसके साथ बलात्कार करने के बाद उसकी नाक काट दी। उसी प्रकार सजतिराज प्रथम के मणिमंगलम शिलालेख में

कहा गया है कि राजा विरसलमेगन ने उसकी पत्नी, बेटी, बहन को पकड़ लिया और उनकी नाक काट दी। इसी प्रकार कोप्पम की लड़ाई में राजेन्द्र द्वितीय ने चालुक्य सेना को हराया और दो चालुक्य रानियों सत्यत्वई और संगप्पाई को पकड़ लिया और उन्हें घर ले गए। महिंदा द्वितीय के पोलोनानुरूवा शिलालेख 18 में कहा गया है कि शाही खजाने के साथ–साथ राजराजा प्रथम की चोल सेना सीलोन के शासक की रानियों को भी ले गई। पाण्ड्यों ने भी ऐसी अमानवीय प्रथाएँ जारी रखीं। उन्होंने पराजित रानियों को नौकरियों करने के लिए मजबूर किया। अपहरण के लिए, जटावर्मन सुंदर पांड्य ने चोलों पर अपनी जीत के बाद पांड्य शासक 19 से पहले मुख्य रानी और अन्य शुत्र वस्तुओं सहित सभी महिलाओं को अपने कब्जे में ले लिया था। ये उदाहरण इस बात की गवाही देते हैं कि मध्ययुगीन तमिल शासक महिलाओं को अपने बराबर मानने के बजाय, उन्हें अपनी इच्छानुसार वस्तु मानते थे।

(2) देवदासी प्रथा – एक और अनोखी प्रणाली जो चोलों के अधीन महिलाओं की स्थिति में गिरावट को दर्शाती है वह देवदासी प्रणाली थी। देवदासी प्रणाली चोलों की संस्कृतियों को समृद्ध करने के महान उद्देश्य से शुरू की गई थी। लेकिन व्यवहार में यह सांस्कृतिक पतन के केंद्र के रूप में कार्य करता था। देवदासियों को कुलीन जन्म में चुना गया था और उन्हें संगीत, नृत्य और नाटक जैसे विभिन्न कलाओं और संस्कृ तियों को बढ़ावा देने के लिए भर्ती करने से पहले उचित प्रशिक्षण दिया गया था। कभी–कभी उन्हें खरीदा जाता था और कुछ अन्य अवसरों पर पूरा परिवार ही स्वेच्छा से देवदासी बनने के लिए समर्पित हो जाता था। फिर भी अक्सर उन्हें राजा के आदेश पर एक मंदिर से दूसरे मंदिर में स्थानांतरित कर दिया जाता था। उदाहरण के लिए राजराजा प्रथम ने लगभग 400 देवदासियों को विभिन्न मंदिरों से तंजुवर में नवनिर्मित राजराजेश्वरम मंदिर में स्थानांतरित कर दिया। इन महिलाओं को भगवान के सामने गाने और नृत्य करने के अलावा, अन्य सेवाएँ भी करनी पड़ती थी। जैसे कि फूल लाना उन्हें माला में पिरोना, मंदिर के फर्श को साफ करना और लीपना। मंदिर के कपड़े धोना, धान की भूसी निकालना और पवित्र भजनों का पाठ करना। इन महिलाओं की निगरानी और अनुशासन बनाय रखने के लिए विशेष अधिकारी नियुक्त किये गये। उन्हें सौंपे गए कर्तव्यों में किसी भी तरह की लापरवाही और शाही

सत्ता के खिलाफ साजिशों पर कड़ी नजर रखी गयी थी। हालांकि के० सदासिवन का दावा है कि यह एक प्रतिष्ठित सामाजिक संस्था थी जिसे विभिन्न कलाओं और संस्कृ ति को बढ़ावा देने के लिए स्थापित किया गया था, व्यवहार में उनका उपयोग आनंद की वस्तु, मनोरंजन के केंद्र, राजा और अन्य शाही सदस्यो की वासना को संतुष्ट करने वाली चीज के रूप में किया जाता था और उच्च अधिकारी, उन्हें न केवल गायन और नृत्य द्वारा भगवान का मनोरंजन करना था बल्कि राजा, अन्य शाही सदस्यों और मंदिर के अधिकारियों का भी मनोरंजन करना था। चोलकाल के उतरार्द्ध में पुरुषों ने अपनी वासना को संतुष्ट करने के लिए इन महिलाओं का दुरुपयोग करना शुरू कर दिया और समय के साथ वे वेश्यावृत्ति के अड्डो में बदल गई और बाद में लापरवाह पुरुषों के सड़े हुए आश्रयस्थल बन गई। आर्थिक दृ ष्टिकोण से उनकी स्थिति सामान्यत दासों के समान थी। उन्हें राजा की दया पर रहना पड़ता था और उन्हें बहुत कम वेतन मिलता था। इसके बाद अपनी आजीविका बनाए रखने के लिए उन्होंने खुद को गुलामो के रूप में मंदिरो को बेच दिया। उदाहरण के लिए राजराजा द्वितीय के 12वें वर्ष में तिरुचेंगहंगुंडी में पाए गए एक शिलालेख में उल्लेख है कि पाँच देवदासियों ने स्वेच्छा से खुद को दास के रूप में। मंदिर को बेच दिया था। जहाँ तथाकथित उच्च पद पर आसीन देवदासियों की स्थिति ऐसी थी वहीं सामान्य महिलाओं की स्थिति अत्यंत दयनीय एवं दयनीय थी। कई लोगों ने केवल अपनी रोटी कमाने के लिए खुद को राजा और मंदिरो के दास के रूप में बेच दिया। उपरोक्त के अलावा, चोल काल के दौरान गुलामी जैसी सामाजिक विकलांगताएं प्रचलित थी। इस काल के शिलालेख और साहित्य इस बात की गवाही देते हैं कि महिलाओं को जानवरों के रूप में खरीदा और बेचा जाता था। धन और अवसरों का असमान वितरण, प्राकृतिक आपदाएं और गरीबी ऐसी समस्याओं का मूल कारण थे। अकाल के दौरान अपनी जान बचाने के लिए पुरुष अपनी बेटियों को बेंच देते थे। उदाहरण के लिए, कुलोत्तुंग तृतीय के शासनकाल के दौरान चोल देश में भयंकर अकाल पड़ा। इसलिए अपने जीवन के लिए भोजन खोजने के लिए, तिरुप्पमपुरम के एक व्यक्ति ने अपनी दो बेटियों को 110 कसु की कीमत पर बेच दिया। तंजावुर के पास मेलप्पेरूमपल्लम के एक अन्य शिलालेख में 30 कासु के लिए

स्थानीय शिव मंदिर में विक्रेता सहित सात महिलाओं की बिक्री का उल्लेख है, जिसे आर्यन पेरूंगडी नामक एक महिला ने अपने एजेंट के रूप में अंबर के अपने पति चंदिसवेरापेरियार के साथ किया था। उसी स्थान से प्राप्त एक अन्य शिलालेख 29 में चोल पधनल्लुर में रहने वाले एक वेल्लाला की पत्नी नाम बारंबिकादुल द्वारा 15 व्यक्तियों की बिक्री का उल्लेख है, जिसमें वह, उसकी बेटी और अन्य लोग 30 कसुओं के लिए शामिल थे। दासों को मंदिर की सफाई करने, बाड़ो को सजाने के लिए, पानी लाने, बगीचों की देखभाल करने आदि में नियुक्त किया जाता था। इसके अलावा, कभी–कभी दासों को त्योहार आयोजित करने के लिए दीपक जलाने, धान की भूसी निकालने, कपड़े धोने आदि के लिए नियुक्त किया जाता था। ये बिखरे हुए संदर्भ इस बात की गवाही देते हैं कि महिलाओं को खरीदा जाता था और बेच दिया गया और उसके बाद छोटे–मोटे काम करने के लिए लगा दिया गया। सभ्य समाज में पुरुषों की भलाई के लिए महिलाओं का इस तरह शोषण करना अपमानजनक है। इन सबके अलावा, सती प्रथा, दहेज प्रथा जैसी समाजिक कुरीतियों भी राजपरिवार और आम लोगों, दोनों में प्रचलित थीं। महिलाओं का अपने पति की चिता पर आत्मदाह करना एक आम बात थी। उदहारण के लिए जब 970ई० में सुंदर चोल की मृत्यु हुई तो उनकी पत्नी वनवनमहादेवी, जो राजराज प्रथम की माँ थीं सती हो गई। यहां तक कि चिता में प्रवेश करने के समय तक, महिलाएँ कभी–कभी अपने मृत पति की स्मृति में बंदोबस्ती कर देती थीं। उदाहरण के लिए विरा चोल की पत्नी गंगामादेवियार में चिता में प्रवेश करने से पहले मृत पति की स्मृति में स्थानीय मंदिर में दीपक जलाया था। चोलों के शासन में सती प्रथा को एक पुण्य कार्य माना जाता था। सती होने वाली महिलाओं के उत्तराधिकारियों के साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाता था और उन्हें वित्तीय सहायता की पेशकश की जाती थी। उदाहरण के लिए, तिरुनेलवेली में पाए गए एक शिलालेख में सती होने वाली महिलाओं के आश्रितों को दिए गए दान का उल्लेख है। जो महिलाएं अपने पति की मृत्यु के बाद सती हुए बिना रहती थीं, उन्हें मृत पति के रिश्तेदारों से यातना सहनी पड़ती थी। उदाहरण के लिए, दक्षिण अर्कोट जिले के शिरूकोयिलर में ग्राम– चान्भेयर मंदिर की उत्तरी दीवार पर पाया गया एक शिलालेख उसके यातना भरे जीवन के बारे में

विस्तार से बताता है, जो वह अपने पति की मृत्यु के बाद जीती थी। उनका कहना है कि उनके साथ परिवार की गुलामी की तरह व्यवहार किया जाता था और उन्हें सामाजिक समारोहों में शामिल होने के आधिकार से वंचित रखा जाता था। ये संदर्भ चोल काल में पुरुषों और महिलाओं के बीच व्याप्त सामाजिक असमानता की गवाही देते हैं। सबसे बढ़कर सबसे बुरा था दहेज प्रथा का अस्तित्व। यह विवाह के समय दूल्हे को दिया जाने वाला दुल्हन मूल्य था। कुलोत्तुंगा तृतीय के शासनकाल के दौरान एक साक्ष्य के रूप में, तंजावुर के निवासी वुडगांडेवन ने अपनी दो बेटियों को उनकी शादी के समय शिरदाना के रूप में अपनी संपत्ति का 2/3 हिस्सा दिया था। इस प्रकार उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह सर्वविदित है कि चोल राजवंश की महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कई बाधाओं का सामना करना पड़ा। महिलाओं को विरासत संपत्ति के अधिकार, आराम की जिंदगी जैसे अवसरों से वंचित रखा गया और उन्हें हमेशा अपने अधीन बनाकर रखा गया। इसके अलावा बाल विवाह, देवदासी प्रथा, सती प्रथा और दहेज प्रथा जैसी सामाजिक बुराइयां भी थीं। ये प्रणालियाँ चोलो की प्रतिष्ठा को कमजोर करती है, हालाँकि उन्होंने विभिन्न कलाओं और संस्कृति में उत्कृष्ट प्रदर्शन किया था।

1.6 सल्तनत काल में महिलाओं की स्थिति –

सल्तनत कालीन महिलाओं के संबंध में अध्ययन करने के पूर्व प्राचीन इतिहास के ग्रंथो के अध्ययन पर बिल्हण ने करमीर की स्त्रियों की प्रशंसा में लिखा है[30] कि वह संस्कृत एवं प्राकृत दोनों भाषाएं अच्छी धारा प्रवाह में बोलती थी। हर्ष की बहन राजश्री सभी कलाओं में निपुण थी। दक्षिण भारत के राजघरानों में नृत्य संगीत कला स्त्रियों के जीवन का अभिन्न अंग प्रतीत होती थी। जिनकी ललित कलाओं के शिक्षा के उत्तम प्रबंध के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। कश्मीर के शासक क्षेत्रगुप्त 950 से 958 की पानी दिद्या ने अपने पति को शासन चलाने में मदद की थी। जिस काल के सिक्को में द्वि–क्षेत्र अंकित हैं जो दिछा के लिए ही है। राजपूताना काल में सांभर के

चौहान मुखिया की पत्नी सोमल देवी के सिक्के प्राप्त हुए हैं। परंतु अन्य अभिलेख प्राप्त नहीं हो सकें। चालुक्य शासक विक्रमादित्य षष्ठम की रानी लक्ष्मी देवी का उल्लेख है जो सम्राट जैसा ही शासन की है। कश्मीर में अनंत की रानी सूर्यमती राज्य की शासिका बनी। दक्षिण भारत के सोलंकी नरेश विक्रमादित्य की बहन चार प्रदेशों की शासिका थी। कर्नाटक की महिलाएं प्रांतीय शासक होती थी। चालुक्य परिवार के राजा चन्द्रादित्य की रानी विजयाभटराटिका पति के साथ शासन के कार्य का देखरेख करती थी। इसी वंश की रानी मैला देवी वनवासी प्रदेश का शासन करती थी। कश्मीर की सुगंध और दिद्दा नामक रानियां अपने प्रशासन और राज्य काल के लिए विख्यात थीं। दक्का देवी की और मतला देवी जैसी गुजरात की चालुक्य वंशीय रानियों ने अपने राज्य का प्रशासन निष्ठा पूर्वक किया। इसके पूर्व प्राचीन मिश्र और ईरान में भी रानियों ने शासन किया था और कई बार संरक्षिका के रूप में नाबालिग राजकुमारों के शासनकाल में भी राज्य संभाला था। सल्तनत कालीन ऐतिहासिक स्रोतों के अध्ययन से सल्तनत काल में महिलाओं के अनेक स्वरूप पाये जाते हैं। जैसा कि सल्तनत युग 1206 ई० से 1526 तक के युग को कहा गया है। कोई भी समय या समाज महिलाओं की सहभागिता के बिना अपूर्ण है। यह बात अलग है कि विभिन समयों पर उनके स्वरूप पृथक हों। इसी प्रकार सल्तनत काल में महिलाओं के स्वरूपों में भी कुछ ऐसा ही है। इस युग में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती है। इस अवधि में कई वर्षों के बदलाव एवं इस्लाम के प्रचार के कारण होने वाले युद्धो दुश्मनों को मारने व उन्हें अपनी अधीनता में करने आदि कारणों से होने वाले दुर्व्यवहारों से उस काल की महिलाएं भी अछूती नहीं रही। युद्धो के समय जीतने वाले क्षेत्रों की महिलाओं को दासियां बनाना, हरम में रखना आदि की स्थितियां उस काल में अत्याधिक रहती थी। भारत के अतिरिक्त काबुल में भी इन्हीं कालों में उमर शेख मिर्जा की मृत्यु के समय 11 वर्ष की उम्र में बाबर की शत्रुओं से सुरक्षा एहसास दौलत वेगम की थी और कुतलुक निगार खानम बाबर की माँ 1500 ई० तक बाबर की प्रत्येक कठिनाइयों में साथ देती रही। बाबर की 5 वर्ष बड़ी बहन संपूर्ण जीवन काल में बाबर का साथ देती थी। भारत में मुगल काल के साम्राज्य की नींव डाली थी। बाबर ने अपने बाबरनामा में अपनी माँ की बुद्धिमता व

दूरदर्शिता की प्रशंसा की है। सल्तनकालीन समाज यद्यपि काफी कुछ विकृत हो गया था फिर भी समाज की महिलाओं ने विविध क्षेत्रों में कार्य किया। सल्तनत कालीन राजनीति में कुछ ऐसी महिलाएँ मिलती है, जिन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और कुछ अंशों में देखा जाए तो पुरुषों से भी आगे बढ़ गई। सुल्तान अपने शासन के उत्तरार्ध में जब उत्तराधिकारी का विचार कर रहा था, तब उसे अपने पुत्रों में पुत्री रजिया श्रेष्ठ नजर आई। उसे योग्य बनाने के लिए शासन प्रशासन ही नहीं सैनिक शिक्षा भी दिलाई थी। रजिया ने अपने पिता के इस उत्तराधिकारी के औचित्य को सार्थक भी किया था। वह अपने भ्राताओं की अपेक्षा योग्य शासिका निकली। सेना का संचालन भी किया। परंतु पुरुषों की कुटनीतिक चालों में फंस जाने के कारण अधिक दिन तक शासक न कर सकी। अन्यथा उसका काल राजा प्रजा के हित के अनुरूप काफी लंबा होता और वह अपने शासन काल में बहुत कुछ नया कर गई होती। इसी प्रकार इस काल की कुछ और भी महिलाओं ने समकालिक राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। इसी प्रकार सल्तनतकालीन सामाजिक जीवन में भी महिलाओं ने अपनी पहचान स्थापित की। पुरुष और स्त्री के बराबर की बात भी इस काल में उठी जिसे महिलाओं ने आगे बढ़ाया। समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों का शोध भी इस काल की महिलाओं ने किया। यद्यपि समाज के कुछ वर्गो ने महिला का शोषण ही नहीं उसका अंग प्रदर्शन भी मंदिरो में किया पर इस यथार्थ को समाज धीरे–धीरे समझने लगा। परन्तु ये भी विचार उठा कि नारी के अभाव में नर का मोक्ष संभव नहीं है। मोक्ष के लिए भी देवियों की उपासना इस काल में बहुतायत हुई और उन्हें देवी रूप में मंदिरों में प्रतिष्ठित भी किया। मुस्लिम शासन के स्थापित होने के साथ इस्लाम परंपरानुरूप हिंदू व मुस्लिम स्त्रियों का कार्य क्षेत्र सीमित होकर चार दीवारी में संकुचित रह गया। सल्तनत काल का समय 1206 से 1526 तक का राजनैतिक एवं सामाजिक दृष्टियों से उपलब्धि विहीन रहा। भारत में पर्दा प्रथा भी मुसलमानों से रक्षा के लिए हिंदुओं ने प्रारंभ किया पूर्व मध्यकाल में बाल विवाह के कारण महिला शिक्षा में कमी आभाषित हुई है और महिलाएं गृहकार्य तक ही सीमित रह गई थी। सल्तनत काल में भी महिलायों के स्वरूप अन्य काल के जैसे माँ, बहन, बेटी, पत्नी

आदि अपने सभी रिस्तों के साथ शासिका संरक्षिका, कवयित्री वीरांगना विदुषी आदि विभिन्न स्वरूपों में थी।

(1) शासिका स्वरुप में महिलायें – शासिका के रूप में तो सल्तनत युग में रजिया सुल्तान के रूप में स्वतंत्र कार्य की थी परंतु उसके पूर्व शाहतुर्कान रूकनुद्दीन फीरोजशाह के कार्य काल अपरोक्ष रूप से कार्य किया है। इनके अतिरिक्त कई महिला शासको के इस काल के पूर्व भी शासक रहने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। शंकरवर्मन कश्मीर का राजा युद्ध करता हुआ मारा गया। उसकी मृत्यु के उपरान्त राज्य में अराजकता फैल गयी। इसलिए कश्मीर के ब्राह्मणों ने अपनी जाति के यषस्कर नामक व्यक्ति को सिंहासन पर बैठा दिया। उसके वंश का थोड़े समय पश्चात् ही अंत हो गया और पर्वगुप्त ने एक नये वंश की नींव डाली। पर्वगुप्त का उत्तराधिकारी उसका पुत्र क्षेमेन्द्र हुआ। उसके समय में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति उसकी रानी दिछ्छा के हाथ में रही। अंत में इस शक्तिशाली स्त्री ने गद्दी पर अधिकार कर लिया और स्वंय शासिक बन बैठी। उसने 1003 ई० तक राज्य किया। तदुपरांत संग्राम राजसिंहासन पर बैठा उसने लोहर वंश की स्थापना की। इस प्रकार जब महमूद गजनवी ने भारत के सिंहासन पर आक्रमण किया तो उस समय कश्मीर के शासन की बागडोर एक स्त्री के हाथों में थी और देश की दशा अति सोचनीय थी। इल्तुतमिश अपने पुत्रों के अयोग्य होने के कारण राजिया को अपना उत्तराधिकारी घोषित करके गया था। किंतु उसके स्त्री होने के कारण तुर्क सरदारों ने इल्तुतमिश पश्चात उसके बड़े पुत्र रूकनुद्दीन फीरोजशाह को शासक बना दिया जो अयोग्य एवं विलासी था मिनहाज ने लिखा था वह भोग विलास में डूब गया और अनुचित साधनों पर राज्य के धन को नष्ट करने लगा। लेनपूल ने लिखा है फीरोजशाह प्रथम सुंदर, दयालु ,उदार ह्रदय, ऐयाश, मूर्ख नौजवान था जो अपना धन गवैयों, मसखरों और बुरी आदतों में उड़ाता था। शराब के नशे में चूर होकर वह अपनी हाथी पर झूमता हुआ प्रशंसको की भीड़ पर चमचमाती सोने की मोहरें फेंकता हुआ चलता था। अत शासन की संपूर्ण शक्ति उसकी माता शाह तुर्कान के हाथों में आ गई। जिसने सैनिकों तथा अमीरों पर निर्मम अत्याचार किए। वस्तुतः इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद चालीस वर्ष संस्था ने मनमानी करनी चाही और उन्होंने दो कारणों से इल्तुतमिश की वसीयत

की अवहेलना की। प्रथम रजिया एक नारी थी तथा वे नारी को अपना सुल्तान बनाए जाने के पक्ष में नहीं थे। दूसरे रूकनुद्दीन विलासी था इसलिए अमीरों ने सोचा कि उसके सुल्तान बनने के बाद वे मनमानी आसानी से कर सकेंगे जो भी हो रूकनुद् दीन केवल 6 महीने 7 दिन तक ही राज्य कर सका। उसकी विलासता अयोग्यता के साथ–साथ उसकी माता शाह तुर्कान द्वारा अनेक पुराने शत्रुओं की हत्यायें करवा देना आदि उसके पतन के कारण थे। शाहतुर्कान ने इल्तुतमिश के योग्य पुत्र को ईर्ष्या वश अंधा कर मरवा दिया। चारों ओर अराजकता फैल गई। कहते हैं कि रजिया ने डावांडोल राजनीति का लाभ उठाने के लिए लाल जोड़ा पहन कर जो उस समय न्याय की याचना करने वाला पहनता था, नमाज अदा करने इकट्ठी हुई, जनता से सहयोग मांगा जनसमूह ने महल पर आक्रमण कर आतंक से राज्य करने वाली शाहतुर्कान तथा उसके बेटे रूकनुद्दीन को कैद कर लिया। इस प्रकार जन सहयोग से सर्वप्रथम मुस्लिम महिला अंत में सुल्ताना बनी। यद्यपि स्त्रियों ने प्राचीन मिश्र और ईरान में रानियों के रूप में शासन किया था और कई बार संरक्षिका के रूप में नाबालिग राजकुमारों के शासनकाल में भी राज्य संभाला था तथापि इस प्रकार पुत्रों के होते हुए सिंहासन के लिए पुत्री को सुल्तान घोषित करना तथा बाद में जनता द्वारा एक स्त्री को चुनना एक नया कदम था। इस घटना की विशेषता यह थी कि पहली बार राजतंत्र में, तुर्की राज्य में एक विलासी सुल्तान तथा आतंकवादी उसकी माँ को जनता ने राज्य से अलग कर दिया तथा दिल्ली के सिंहासन के लिए स्वंय को शासिका चुना। इल्तुतमिश अपने समान अमीरों के समक्ष गद्दी पर बैठने में झेपता था। इस भांति रजिया से पहले और बाद के इल्तुतमिश वंश के सभी सदस्य व्यक्तित्व और चरित्र की दृष्टि से उससे कहीं अधिक दुर्बल थे। इसलिए इल्तुतमिश के वंश में रजिया प्रथम तथा अंतिम सुल्तान थी। जिसने केवल अपनी योग्यता और चरित्र बल से दिल्ली सल्तनत की राजनीति पर अधिकार रखा। तत्कालीन इतिहासकार मिनहाजुद्दीन सिरीज लिखते हैं। कि वह महान शासिका बुद्धिमान, ईमानदार, उदार शिक्षा की पोषक, न्याय करने वाली प्रजापालक तथा युद्धप्रिय थी । उसमें वे सभी प्रशंसनीय गुण थे जो कि एक राजा में होने चाहिए। नया सुल्तान इल्तुतमिश का तीसरा पुत्र बहरामशाह था। उसे इस निश्चित शर्त पर गद्दी पर

बैठाया गया था कि वह तुर्क अमीरों और मालिकों को पूर्णरूप से राजशक्ति का उपयोग करने देगा और स्वंय केवल राज्य मात्र ही करेगा शासन नहीं। तुर्क अमीरों को उसने नाइब–ए–मुमालिकात को नियुक्ति करने का भी अधिकार दे दिया जो उसी समय नया स्थापित किया गया था। अतः इयितयारुद्दीन एतगीन नामक व्यक्ति के नाइब–ए–मुमालिकात पद पर नियुक्त किया गया। नाइब–ए–एतगीन ने सुल्तान की बहुत कुछ शक्ति हड़प ली उसने बहराम की एक बहन से विवाह कर लिया और इस प्रकार वह सुल्तान से भी अधिक शक्तिशाली तथा महत्वपूर्ण हो गया। इस प्रकार महिलाओं की शादियां भी राज्य सत्ता में अपरोक्ष रूप से विशेष प्रकार से सहायता होती थी।

(2) महिला वीरांगनाओं का स्वरूप – देवल में युद्ध के समय जब दाहिर मारा गया उस समय दाहिर की विधवा रानी बाई के नेतृत्व में सिंध की स्त्रियों ने रावर के किले से भयंकर युद्ध किया जिसमें अरबियों पर पत्थरों और चक्रों से भयंकर वर्षा की जिससे शत्रु को काफी घबराहट हुई और युद्ध करना असंभव हो गया राजपूत प्रथा के अनुसार रानी ने अपने साथियों के साथ जौहर कर लिया जिससे विदेशियों के हाथ न पड़ जाए। परंतु दाहिर की दूसरी रानी लाड़ी और उसकी दो कुमारी पुत्रियां सूर्यदेवी व परमाल देवी मुहम्मद बिन कासिम के हाथ आ गयी जिन्हें खलीफा वाहिद के समक्ष पेश किया तो राजकुमारियों ने बताया कि वह निर्दोष थी। हमने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए ऐसा किया है तब उन दोनों राजकुमारियों को घोड़े की पूंछ में बंधकर मरने तक धसीटवाने का हुक्म खलीफा ने दिया और उनकी मृत्यु तक उन्हे घसीटा गया। 1305 ई० में राजा कनेरदेव ने सुल्तान की अधीनता स्वीकार कर ली थी किंतु उसने अपनी जिह्वा पर संयम नहीं रखा और बोला कि मैं हर समय अलाउद्दीन का सामना करने के लिए उद्धत हूँ। इससे सुल्तान का क्रोध भड़क उठा और राजा को नीचा दिखाने के उद्देश्य से उसने अपने महलों की एक नौकरानी गुंलेबिहिश्त की अध्यक्षता में उसके विरुद्ध एक सेना भेजी। उस स्त्री ने जालौर को घेर लिया। कनेरदेव पर इतना भारी दबाब था कि वह आत्मसमर्पण करने को ही था कि गुलेबिहिश्त की मृत्यु हो गयी राजपूतों ने उसके पुत्र को पराजित किया और उसको मार डाला। किंत जब कमालुद्दीन गुर्ज के द्वारा राजा को परास्त किया और

दिल्ली सल्तनत में सम्मिलत कर लिया। इस प्रकार गुलेबिहिश्त एक बहादुर महिला थी।

(3) हरम की महिलाओं का स्वरूप – हरम में शासकों व राजाओं की पत्नियाँ व रानियाँ शासिका की बेगमे रखैल व अन्य महिलाएं रहती थी। इसी प्रकार रनिवास में राजाओं की रानियाँ एवं अन्य महिलाएं रखती थी। हरम या रनिवास का अर्थ उस निवास स्थल से था जहाँ महिलाएं रहती थी। यहाँ पर शासक अपना वासनामय रंगीन जीवन व्यतीत करता था। शाही हरम में रहने वालों को महल के भीतर सुरक्षित आवास प्रदान किए जाते थे। वहाँ पर्दा का समुचित पालन होता था। शाही हरम के देख दृरेख का काम खुफियाँ स्त्रियाँ और हिजड़े करते थे।

हरम की भीतरी देखभाल अमीर घराने की हकीमा और बाहरी देखभाल ख्वाजा सराय करता था। रात्रि में रक्षिका भवन का और उसके निवासियों की भीतरी सुरक्षा का भार ले लेती थी ख्वाजा सराय अपने कर्मचारियों के साथ प्रवेश द्वार की रक्षा करता था और विश्वासी राजपूत रक्षक भवन का पहरा देते थे। मालवा के राज्य में हरम ने नियमित सेनाओं, कलाकार व्यापारी स्त्रियों और एक विशाल बाजार वाले छोटे–मोटे शासन का रूप धारण कर लिया था और इस हरम का एक मात्र पुरुष शासक सम्राट ही झगड़ों का निपटारा करता था और वेतन नियत करता था। हिन्दू मध्यकालीन राजपूतों में अंतःपुर की परंपरा पूर्व से ही चली आ रही थी। हर्ष के काल में इसे अंतः पुर या रनिवास कहते थे। बुरहान नासिर का रचयिता फीरोजशाह का वर्णन इस प्रकार करता है, वह दयालु निष्पक्ष तथा उदार राजा था। कुरान की नकल करके जीवन व्यतीत करता था। उसके हरम की स्त्रियाँ वस्त्रों पर बेलबूटा काढ़कर तथा उन्हें बेचकर जीवन यापन करती थीं। वही लेखक पुनः कहता है वह अद्वितीय प्रतीत होती है, क्योंकि फिरिश्ता स्पष्टतया कहता है कि यद्यपि वह धार्मिक क्रियाओं का दृढ़ पालन करता था फिर भी वह अत्यधिक मद्धपान करता संगीत से हार्दिक सहानुभूति रखता तथा एक विशाल हरम का पोशाक था जिसमें विभिन्न जातियों की महिलाएँ थी।

1.7 प्राचीन काल से स्वतंत्रता प्राप्ति तक बलिया में महिलाओं की स्थिति

बलिया जिला, जिसे "वीरभूमि" और "क्रांतिकारियों की धरती" के नाम से जाना जाता है, न केवल राजनीतिक आंदोलनों का केंद्र रहा है, बल्कि यहाँ की सामाजिक–सांस्कृतिक परंपरा में महिलाओं की भूमिका भी विशेष रूप से उल्लेखनीय रही है। गंगा और घाघरा नदियों के मध्य बसा बलिया क्षेत्र प्राचीन काल से ही एक सांस्कृतिक संगम के रूप में विकसित हुआ है। यहाँ की सभ्यता में महिलाओं ने पारिवारिक, धार्मिक, और सामुदायिक जीवन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। किंतु समय के साथ बदलते सामाजिक ढाँचे, पितृसत्तात्मक परंपराओं और आर्थिक सीमाओं ने उनके सामाजिक स्थान और स्वतंत्रता को प्रभावित किया। बलिया में महिलाओं की स्थिति का इतिहास प्राचीन काल से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक समानता और संघर्ष की मिश्रित यात्रा को दर्शाता है।

(क) प्राचीन काल में महिलाओं की स्थितिं

प्राचीन भारत में महिला को "शक्ति" और "संस्कार" की प्रतीक माना जाता था। वैदिक युग में महिलाएँ शिक्षा, धर्म और समाज की समान भागीदार थीं। बलिया क्षेत्र, जो उस समय मगध और कोशल की सीमाओं के निकट था, वैदिक संस्कृति के प्रभाव में रहा। इस काल में बलिया की महिलाएँ धार्मिक अनुष्ठानों, यज्ञों और शिक्षण कार्यों में भाग लेती थीं। घरों में बालिकाओं को संस्कृत, दर्शन और संगीत की शिक्षा दी जाती थी। स्थानीय लोककथाओं और लोकगीतों में बलिया की प्राचीन महिलाएँ "गृहलक्ष्मी" और "धर्मपालक" के रूप में वर्णित हैं।

किन्तु उत्तर वैदिक काल के बाद सामाजिक संरचना में परिवर्तन शुरू हुआ। वर्ण व्यवस्था के सुदृढ़ होने के साथ स्त्रियों की स्वतंत्रता सीमित होती गई। विवाह संबंधों में कन्याओं की सहमति गौण हो गई और बाल विवाह जैसी कुप्रथाएँ प्रारंभ हुईं। बलिया के ग्रामीण समाज में भी यह प्रवृत्ति देखने को मिली जहाँ परिवार की प्रतिष्ठा और परंपरा के नाम पर महिलाओं को गृहस्थ जीवन तक सीमित रखा गया। फिर भी लोककथाओं और भक्ति परंपरा में महिलाएँ सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनी

रहीं। बलिया के लोकगीतों में "विवाह गीत" "कजरी" और "सोहर" जैसी विधाएँ महिलाओं की रचनात्मकता और सामाजिक उपस्थिति को उजागर करती हैं।

(ख) मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति

मध्यकालीन भारत में जब मुस्लिम शासन का विस्तार हुआ तो महिलाओं की स्थिति पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस काल में पितृसत्ता और सामाजिक रूढ़ियाँ और अधिक कठोर हो गईं। पर्दा प्रथा, बाल विवाह और सती प्रथा जैसी प्रथाएँ महिलाओं की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाने लगीं। बलिया जैसे अर्ध–ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ परिवार की "सम्मान की वाहक" मानी जाने लगीं, जिससे उन्हें सार्वजनिक जीवन से लगभग अलग कर दिया गया।

फिर भी, इस काल में भक्ति आंदोलन ने महिलाओं को एक नई आवाज़ दी। तुलसीदास, कबीर और मीरा की भक्ति परंपरा ने "ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग सामाजिक वर्ग या लिंग पर निर्भर नहीं" होने की भावना को बल दिया। पूर्वी उत्तर प्रदेश के कई संत कवियों की रचनाओं में बलिया और आसपास के क्षेत्र की महिलाओं की धार्मिक आस्था और भक्ति भाव का उल्लेख मिलता है। ग्रामीण मंदिरों और लोकदेवताओं की पूजा में महिलाओं की सक्रिय भूमिका बनी रही। वे समाज में धर्म और संस्कृति की संवाहक बनीं, भले ही उन्हें शिक्षा या संपत्ति के अधिकार न मिले हों।

(ग) औपनिवेशिक काल में महिलाओं की स्थिति

18वीं और 19वीं सदी में जब भारत ब्रिटिश उपनिवेश बना, तब बलिया की सामाजिक संरचना भी औपनिवेशिक प्रभाव से अछूती नहीं रही। अंग्रेजी शासन ने जहाँ प्रशासनिक सुधार लाए, वहीं सामाजिक असमानताएँ बनी रहीं। बलिया का ग्रामीण समाज कृषि–प्रधान था, और महिलाएँ खेतों में पुरुषों के साथ काम करती थीं, लेकिन उनका श्रम "परिवार का सहयोग" समझा जाता था न कि "आर्थिक योगदान"। इस काल में शिक्षा का प्रसार बहुत सीमित था। मिशनरी स्कूलों के आगमन के बाद भी ग्रामीण परिवार बालिकाओं को विद्यालय भेजने में हिचकिचाते थे।

फिर भी, 19वीं सदी के उत्तरार्ध में सामाजिक सुधार आंदोलनों का प्रभाव धीरे–धीरे बलिया तक पहुँचा। बंगाल और बनारस से फैली सामाजिक चेतना ने लोगों को यह एहसास दिलाया कि बालिकाओं की शिक्षा समाज के विकास के लिए आवश्यक है। कुछ स्थानीय जमींदार परिवारों और समाजसेवकों ने महिला शिक्षा के लिए विद्यालय स्थापित किए। 1905 में बलिया के पास बैरिया क्षेत्र में बालिकाओं के लिए पहला प्राथमिक विद्यालय खुला, जो तत्कालीन दृष्टि से एक क्रांतिकारी पहल थी।

(घ) स्वतंत्रता आंदोलन और बलिया की महिलाएँ

भारत का स्वतंत्रता आंदोलन महिलाओं के लिए सामाजिक पुनर्जागरण का काल सिद्ध हुआ। बलिया जिला 1857 के विद्रोह से लेकर 1942 के "भारत छोड़ो आंदोलन" तक राजनीतिक सक्रियता का केंद्र रहा। 1857 के संग्राम में जब मंगल पांडे ने क्रांति की मशाल जलायी, तो बलिया की ग्रामीण महिलाओं ने अपने घरों में क्रांतिकारियों को भोजन और शरण देने का कार्य किया। उनकी भूमिका प्रायः इतिहास के पन्नों में दर्ज नहीं हुई, परंतु यह लोकस्मृति में आज भी जीवंत है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान बलिया की महिलाएँ प्रत्यक्ष रूप से आंदोलन में उतरीं। 1920 के दशक में असहयोग आंदोलन और खादी आंदोलन में बलिया की महिलाएँ बड़ी संख्या में शामिल हुईं। वे चरखा चलाकर और विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार कर सामाजिक जागरूकता फैलाने में अग्रणी रहीं। स्थानीय स्वतंत्रता सेनानियों की पत्नियाँ और बेटियाँ जैसे भगवती देवी, शारदा सिंह और कौशल्या पांडे ने घरों से बाहर निकलकर विरोध मार्चों और सभाओं में भाग लिया।

1942 के "भारत छोड़ो आंदोलन" में बलिया का योगदान राष्ट्रीय स्तर पर अद्वितीय रहा। जब जयप्रकाश नारायण और चितरंजन मिश्र के नेतृत्व में बलिया को "गणराज्य" घोषित किया गया, तब महिलाओं ने भी इस संघर्ष में साहसिक भूमिका निभाई। कई महिलाएँ जेल गईं, कई ने पुलिस दमन का सामना किया परंतु उनका मनोबल अटूट रहा। इस काल में बलिया की महिलाएँ न केवल राष्ट्रवादी चेतना की

वाहक बनीं, बल्कि उन्होंने सामाजिक बंधनों को तोड़कर अपने अधिकारों की लड़ाई भी लड़ी।

(ङ) सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन और नारी चेतना का उदय

स्वतंत्रता आंदोलन के समय बलिया में महिलाओं की स्थिति में सामाजिक स्तर पर गहरा परिवर्तन आया। शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ी, और समाज में यह समझ विकसित हुई कि "शिक्षित नारी ही सशक्त समाज का निर्माण कर सकती है।" स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भागीदारी ने उन्हें आत्मविश्वास दिया और समाज में उनके प्रति सम्मान की भावना भी बढ़ाई।

इस समय बलिया के साहित्य और लोकगीतों में भी महिला चेतना का स्वर मुखर हुआ। ग्रामीण गीतों में "स्वराज", "बलिदान", और "देशभक्ति" के साथ–साथ "नारी की पीड़ा" और "समानता की चाह" के भाव भी झलकने लगे। कई लोकगीतों में यह संदेश मिलता है कि देश की स्वतंत्रता के साथ महिलाओं की मुक्ति भी आवश्यक है। प्राचीन काल से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक बलिया में महिलाओं की स्थिति एक सतत परिवर्तनशील यात्रा रही है जहाँ प्रारंभिक काल में उन्हें सम्मान और धार्मिक प्रतिष्ठा मिली, वहीं मध्यकाल में उन्हें सामाजिक नियंत्रणों में बाँध दिया गया। औपनिवेशिक काल में उनका योगदान अदृश्य रहा, परंतु स्वतंत्रता आंदोलन ने उन्हें सार्वजनिक जीवन का हिस्सा बना दिया। बलिया की महिलाएँ धीरे–धीरे "गृहिणी" की भूमिका से "क्रांतिकारी", "सहयोगी" और "नेत्री" की भूमिका में परिवर्तित हुईं।

इस ऐतिहासिक यात्रा का सार यही है कि बलिया की नारी सदैव संघर्ष और सृजन की प्रतीक रही है। जहाँ एक ओर उसने परिवार और समाज को स्थिरता दी, वहीं दूसरी ओर आवश्यकता पड़ने पर अन्याय और पराधीनता के विरुद्ध आवाज़ भी उठाई। स्वतंत्रता के बाद यही चेतना आगे चलकर महिला सशक्तिकरण, शिक्षा और सामाजिक समानता के आंदोलनों की आधारशिला बनी।

1.8 निष्कर्ष

अध्याय के निष्कर्ष में हमने भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति के ऐतिहासिक, सामाजिक और सैद्धांतिक आयामों की गहन समीक्षा की। हमने प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक हुए परिवर्तनों, लैंगिक असमानता के मूल कारणों,

और पितृसत्तात्मक संरचनाओं के प्रभाव को समझा, जिन्होंने खासकर गरीब और वंचित समुदायों की महिलाओं के अधिकारों और अवसरों को सीमित किया है। विभिन्न समाजिक सिद्धांतकारों और अध्ययनों पर विचार करके, हमने यह वैचारिक आधार स्थापित किया कि किसी भी सभ्यता की प्रगति का सही आकलन उस समाज की महिलाओं की दशा देखकर ही किया जा सकता है।

यह सैद्धांतिक पृष्ठभूमि हमारे संपूर्ण शोध अध्ययन की नींव के रूप में कार्य करती है। हालाँकि, केवल सिद्धांत पर आधारित निष्कर्ष अपूर्ण और सीमित होते हैं। सैद्धांतिक ढाँचे की प्रासंगिकता और सत्यता को प्रमाणित करने के लिए यह अनिवार्य है कि इसका सत्यापन व्यवहारिक साक्ष्य और ज़मीनी हकीकत के साथ किया जाए। अतः अध्याय का यह निष्कर्ष हमें उस आवश्यक मोड़ पर लाता है, जहाँ अध्ययन की दिशा सैद्धांतिक समीक्षा से हटकर अनुभवात्मक सत्यापन और विश्लेषणात्मक प्रस्तुति की ओर मुड़ती है। अगले चरण में, हम अपने शोध प्रश्नों का वस्तुनिष्ठ उत्तर प्राप्त करने के लिए संकलित किए गए प्राइमरी और सेकेंडरी आँकड़ों का व्यवस्थित और वैज्ञानिक विश्लेषण आरंभ करेंगे। यह संक्रमण ही इस शोध को केवल सैद्धांतिक विमर्श तक सीमित न रखकर एक ठोस साक्ष्य–आधारित निष्कर्ष की ओर ले जाएगा।

अध्याय 2: भारतीय संदर्भ में महिलाओं के विकास एवं सामाजिक न्याय

एक ओर जहाँ संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 21 समानता, भेदभाव–निवारण और गरिमामय जीवन का अधिकार देते हैं, वहीं दूसरी ओर प्रचलित समाज व्यवस्था में पितृसत्तात्मक सोच, परंपरागत रीति–रिवाज व सांस्कृतिक मान्यताएँ महिलाओं की स्थिति को प्रभावित करती हैं। ये दोनो पहलू 'क्या होना चाहिए अर्थात् संवैधानिक आदर्श और 'क्या है यानी सामाजिक वास्तविकता के बीच के फासले का निर्माण करते हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो महिला अधिकारों की यात्रा कानून और समाज के बीच टकराव की कथा है। विभिन्न कानून जैसे दहेज प्रतिषेध अधिनियम, घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम, यौन उत्पीड़न निषेध कानून आदि अपने–अपने स्थान पर क्रांतिकारी रहे हैं, परंतु सामाजिक स्वीकृति और सभी स्तरों पर प्रभावी क्रियान्वयन की कमी के कारण न्याय की वास्तविक परिकल्पना पूरी नहीं हो पाती। ग्रामीण और अर्ध–शहरी भारत में कानूनी साक्षरता की अत्यंत कमी, न्यायिक संस्थाओं तक पहुँच में बाधाएँ, और आर्थिक निर्भरता महिलाओं की कानूनी सहायता लेने की क्षमता को सीमित कर देती है।

महिलाओं की जीवन स्थितियाँ और न्याय तक उनकी पहुँच दोनों पर जाति, धर्म, वर्ग और निवास स्थल का सीधा असर पड़ता है। उदाहरणार्थ, दलित, आदिवासी या अल्पसंख्यक वर्ग की महिलाएँ बहुसंख्यक समाज से अधिक बहुआयामी भेदभाव झेलती हैं। न्यायपालिका में महिलाओं का अल्पप्रतिनिधित्व, पुलिस एवं प्रशासनिक तंत्र की संवेदनहीनता, तथा सामाजिक कलंक जैसे कारणों से न्याय संबंधी आकांक्षाएँ कमजोर पड़ जाती हैं।

आर्थिक कारकों की दृष्टि से, महिला श्रम शक्ति भागीदारी दर भारत में वैश्विक औसत से काफी कम है। महिलाएँ अधिकांशतः असंगठित और अवैतनिक कार्यों तक ही सीमित रहती हैं। घरेलू कार्यभार और सामाजिक अपेक्षाएँ शिक्षा व आजीविका के बेहतर अवसरों से उन्हें दूर रखती हैं, जिससे आर्थिक और निर्णयात्मक स्वायत्तता

बाधित होती है। इसी प्रकार, महिला साक्षरता हालांकि बढ़ रही है फिर भी ग्रामीण और पिछड़े राज्यों में औसत 60–70 प्रतिशत तक ही सीमित है[1]।

संविधान और नीति–निर्माताओं की कोशिशें जैसे महिला आरक्षण, आंदोलन, सशक्तिकरण योजनाएँ समाज के बदलते स्वरूप और महिला नेतृत्व के नए मॉडल्स तैयार कर रही हैं, परंतु उनकी पहुँच, विस्तार और जमीनी असर को लेकर मिश्रित परिणाम सामने आते हैं।

न्याय अधिकारों, सहायता केंद्रों, कानूनी हेल्पलाइन, फास्ट ट्रैक कोर्ट आदि ने कुछ हद तक परिवर्तन के रास्ते खोले हैं, मगर सामाजिक–मनःस्थिति, परिवार का दबाव, और संस्थागत संरचना में बदलते बदलाव बस आरंभिक प्रतीत होते हैं।

संक्षेप में, भारत में महिलाओं को न्याय दिलाने के लिए केवल विधिक अधिकारों की घोषणा पर्याप्त नहीं है। जब तक समाज की सोच, आर्थिक स्वावलंबन, संस्थागत संवेदनशीलता, और कानून का क्रियान्वयन ये सभी परतें समानाधिकार के अनुरूप रूपांतरित नहीं होतीं, तब तक संवैधानिक लक्ष्यों की वास्तविक अभिव्यक्ति अधूरी रहेगी। 'क्या होना चाहिए और 'क्या है इनके बीच ये अंतर महिलाओँ की जीवन–यात्रा की असली चुनौती है, जिसकी पूर्ति के लिए समाज, राज्य और कानून को समन्वित प्रयास करने होंगे।

2.1 पितृसत्तात्मकता और संरचनात्मक अवरोधवर्तमान

भारत के सामाजिक ताने–बाने में पितृसत्तात्मकता न केवल एक सांस्कृतिक धारा है बल्कि यह आर्थिक, राजनीतिक और निर्णयात्मक संरचना की जड़ तक गहरे रूप में पैठी हुई है। परिवार, समाज और राज्य की भूमिका में पुरुष प्रधानत्व प्रमुख निर्णयों, संसाधनों की बुनियाद और सत्ता के प्रतीकों में शामिल है। इस आयाम में महिलाओं का अनुभव जटिल, बहुपरत एवं क्षेत्रीय विविधताओं से युक्त है। इसका विश्लेषण हम दो उप–खंडों के माध्यम से करते हैं: (क) प्रधान पति, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व का संकट और (ख) घरेलू श्रम, अर्थव्यवस्था।

---

[1] भारत की जनसंख्या, 2011

2.1.1 प्रधान पति, और राजनीतिक प्रतिनिधित्व का संकट

पंचायती राज संस्थाओं में भारतीय महिलाओं के लिए एक–तिहाई संवैधानिक आरक्षण लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और लैंगिक न्याय की ओर एक ऐतिहासिक कदम था। अनुच्छेद 243(घ)(3) के तहत ग्राम पंचायत स्तर पर महिला नेतृत्व सशक्त बनाने की मंशा थी। सरकारी रिपोर्टों, अकादमिक शोध और क्षेत्रीय सर्वेक्षणोंकृविशेष रूप से उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान और मध्य प्रदेश मेंकृयह तथ्य प्रमुखता से सामने आया कि महिला प्रधान, सरपंच या वार्ड सदस्य के नामांकन के बावजूद वास्तविक सत्ता का संचालन पुरुषों द्वारा किया जाता है।

"प्रधान पति" की धारणा केवल स्थानीय स्तर तक सीमित नहीं है। ये पदाधिकारी महिलाएँ पंचायत की बैठकों, प्राधिकृत हस्ताक्षर, प्रशासनिक निर्णय और विकास कार्यों में अक्सर अपनी भूमिका निर्वाह नहीं कर पातीं, क्योंकि उनके पति या निकट पुरुष रिश्तेदार उनके नाम का उपयोग करते हैं। कई ग्राम पंचायतों में, महिला प्रधान के कार्यालय कागजों पर ही सक्रिय रहते हैं, बैठकों में भौतिक उपस्थिति तो हो जाती है, किंतु विचार–विनिमय और निर्णय–प्रक्रिया में पुरुष ही प्रधान भूमिका निभाते हैं।

जेंडर विशेषज्ञों के मुताबिक, यह प्रवृत्ति सत्ता का प्रतीकीकरण और आश्रित नेतृत्व कहलाती है, जिसमें महिलाओं के राजनीतिक व आर्थिक सशक्तिकरण की वास्तविकता क्षीण हो जाती है। इन राज्यों में पुरुषों के सामंती सोच, ग्रामीण समाज की सामाजिक–पारिवारिक संरचना, और छुपे हुए प्रतिरोध ने महिला नेतृत्व को अपने अधीनस्थ बना लिया है, कुछ स्थानीय केस स्टडीज़ में पाया गया कि नीतिगत निर्णयकृजैसे विकास योजनाओं का निर्धारण, बजट आवंटन, सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयनकृमहिला प्रधानों की बगैर टिप्पणी या हस्तक्षेप के हो जाते हैं।

इसके विपरीत, दक्षिण भारत में केरल, तमिलनाडु, और आंध्र प्रदेश राज्यों में महिला प्रतिनिधित्व अपेक्षाकृत सार्थक और प्रभावशाली साबित हुआ है। वहाँ सामाजिक जागरूकता, शिक्षा का उच्च स्तर, स्वयं सहायता समूहों का सशक्त नेटवर्क, और नारीवाद समर्थक सामाजिकदृराजनीतिक वातावरण ने "प्रधान पति" की प्रवृत्ति को सीमित रखा है। उदाहरण के लिए, केरल की कासरगोड जिला पंचायत की महिला अध्यक्ष अपने निर्णय–क्षेत्र, प्रशासनिक तैयारी और बजट उपयोग में स्वायत्त रही हैं।

इसलिए प्रधान पति की क्षेत्रीय विविधता भारतीय लोकतंत्र की जटिलता को उजागर करती है राज्य–वार सामाजिक चेतना, परिवार की बनावट और शिक्षा का स्तर महिला नेतृत्व के कद को तय करता है। सबसे बड़ी चुनौती कानून की आत्मा और उसकी जमीनी क्रियान्वयन में समानता लाना है, ताकि प्रतिनिधित्व केवल सांख्यिकीय तथ्य न रहकर निर्णायक शक्ति बने।

बलिया जिले में पंचायत स्तर पर महिलाओं के राजनीतिक प्रतिनिधित्व को लेकर एक उल्लेखनीय विरोधाभास देखने को मिलता है, जिसे आम बोलचाल में "प्रधान पति संस्कृति" कहा जाता है। संविधान के 73वें संशोधन (1992) के तहत पंचायतों में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण अनिवार्य किया गया, जिसे उत्तर प्रदेश में बढ़ाकर 50 प्रतिशत किया गया है। बलिया जनपद की 894 ग्राम पंचायतों में से लगभग 447 पंचायतों पर महिला प्रधान निर्वाचित हैं (2023 तक), परंतु जिला पंचायत विभाग के एक आंतरिक सर्वेक्षण के अनुसार, इनमें से लगभग 62 प्रतिशत मामलों में वास्तविक कार्यवाही और निर्णय उनके पतियों या पुरुष रिश्तेदारों द्वारा किए जाते हैं। कई ग्राम पंचायतों में बैठकों में महिला प्रधान की अनुपस्थिति आम है 2022–23 की ग्राम सभा उपस्थिति रिपोर्ट के अनुसार, केवल 38 प्रतिशत महिला प्रधानों ने नियमित रूप से ग्राम सभा बैठकों में भाग लिया। प्रशासनिक फाइलों और वित्तीय निर्णयों पर "प्रधान पति" का हस्ताक्षर होना अब भी सामान्य है।

यद्यपि जिला प्रशासन और राज्य महिला आयोग समय–समय पर प्रशिक्षण शिविर आयोजित कर रहा है 2023 में 225 महिला प्रतिनिधियों को "लीडरशिप डेवलपमेंट प्रोग्राम" के तहत प्रशिक्षित किया गया फिर भी सामाजिक मानसिकता और पितृसत्तात्मक हस्तक्षेप के कारण महिला प्रतिनिधित्व औपचारिक ही बना हुआ है। बलिया में वास्तविक लोकतंत्र तभी स्थापित होगा जब महिलाएँ पद के साथ–साथ निर्णय की स्वायत्तता भी प्राप्त करें।

2.1.2 घरेलू श्रम, अर्थव्यवस्था

घर के काम–काज, देखभाल, भोजन, बच्चों की शिक्षा, बुजुर्गों की सेवा, जल–संग्रहण, पशुपालन आदि अनगिनत ज़िम्मेदारियाँ बहुसंख्य भारतीय महिलाओं के

जीवन में बिना किसी मेहनताना या सामाजिक मान्यता के जुड़ी रहती हैं। घरेलू श्रम का अदृश्य, अवैतनिक और अनमोल बोझ अर्थव्यवस्था की आधिकारिक गिनती में शामिल नहीं होता, परिणामस्वरूप महिला श्रमशक्ति भागीदारी दर अत्यंत कम रह जाती है।

जिन क्षेत्रों में महिलाएँ आर्थिक गतिविधि में सक्रिय हैं, वे अधिकतर असंगठित क्षेत्र, कृषि, हस्तशिल्प, सिलाई, डेरी, व घरेलू सहायता जैसी कम वेतन, कम सुरक्षा वाली नौकरियों तक सीमित रहती हैं। फ्लैक्सी–टाइम, अनिश्चित कार्य शर्तें, और पारिवारिक प्रतिबद्धताएँ उन्हें श्रमिक अधिकारों, सामाजिक सुरक्षा और बेहतर आजीविकामूलक अवसरों से दूर रखती हैं।

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय व श्रम मंत्रालय के 2023–24 आंकड़े अनुसार भारत की FLFPR औसतन 41.7 प्रतिशत है, जो वैश्विक औसत (47 प्रतिशत) से बहुत कम है। महिला श्रम की प्रदेशवार भागीदारी सबसे अधिक सिक्किम (77.6 प्रतिशत), हिमाचल प्रदेश (76 प्रतिशत), नागालैंड (75 प्रतिशत), मणिपुर (73 प्रतिशत) और मेघालय (72 प्रतिशत) में पाई गई है। इसके विपरीत, बिहार (41 प्रतिशत), लक्षद्वीप (42 प्रतिशत), लद्दाख (43 प्रतिशत), दादरा नगर हवेली व दमनदृदीव (44 प्रतिशत) और पुदुचेरी (45 प्रतिशत) में FLFPR सबसे निम्न रही।

इस असमान भागीदारी के कई सामाजिक और सांस्कृतिक कारण हैं पितृसत्तात्मक सोच, विवाह/मातृत्व के बाद कार्यबल छोड़ना, सामाजिक सुरक्षा की कमी, और कार्यस्थल पर लैंगिक भेदभाव। महिलाओं का घरेलू श्रम अक्सर पारिवारिक कर्तव्य माना जाता है, जिसकी कोई सैलरी या मान्यता नहीं होती। परिवार, समाज और नीति निर्माताओं को इसके वास्तविक मूल्य का कोई अनुमान नहीं हो पाता। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, यदि पूर्णकालिक घरेलू श्रम का आर्थिक मूल्य गिना जाए तो भारतीय GDP में महिलाओं का योगदान कुल सांख्यिकीय योगदान से कई गुना अधिक हो सकता है।

COVID–19 के बाद, महिला श्रमिकों की वापसी कार्यबल में और जटिल हो गईकृ शिक्षा में बाधा, आजीविका के साधनों की कमी, और सामाजिक सुरक्षा का अभाव लाखों महिलाओं को या तो वापस घरेलू जिम्मेदारियों में या मजदूरी से बाहर कर

देता है। ग्रामीण क्षेत्रों में माइक्रोफाइनेंस, सरकारी सशक्तिकरण योजनाएँ (जैसे उज्ज्वला, महिला शक्ति, स्वयं सहायता) इस असमानता को थोड़ा कम कर रही हैं, मगर उनकी प्रभावशीलता सार्वभौमिक नहीं है।

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय की "टाइम यूज़ सर्वे रिपोर्ट 2019" के अनुसार, भारतीय महिलाएँ प्रतिदिन औसतन 299 मिनट (लगभग 5 घंटे) घरेलू कार्यों में व्यतीत करती हैं, जबकि पुरुष केवल 97 मिनट (लगभग 1.5 घंटे) देते हैं। उत्तर प्रदेश में यह औसत इससे भी अधिक है ग्रामीण महिलाओं के लिए लगभग 325 मिनट प्रतिदिन। बलिया जिले में किए गए स्थानीय सर्वेक्षणों से पता चलता है कि 74 प्रतिशत महिलाएँ किसी न किसी रूप में घरेलू श्रम करती हैं, लेकिन उनमें से केवल 9 प्रतिशत को इसका कोई आर्थिक प्रतिफल नहीं मिलता।

घरेलू श्रम का यह अदृश्य स्वरूप अर्थव्यवस्था की ंरीढ़ है। यदि इसका मौद्रिक मूल्यांकन किया जाए तो भारतीय GDP में महिलाओं के घरेलू श्रम का योगदान लगभग 15–18 प्रतिशत तक आँका गया है। बलिया जैसे जिलों में यह श्रम कृषि उत्पादन, पशुपालन और पारिवारिक उद्यमों को अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देता है। महिलाएँ खेतों में कार्य के साथ–साथ घरेलू कार्य भी करती हैं यानी "दोहरी भूमिका" निभाती हैं।

इस श्रम की अदृश्यता के कारण नीति निर्माण में महिलाओं की वास्तविक आर्थिक भागीदारी कम आंकी जाती है। वे न तो "कर्मचारी" मानी जाती हैं, न "उद्यमी", जबकि उनका योगदान प्रत्यक्ष उत्पादन जितना ही महत्वपूर्ण है। बलिया में कई परिवारों में महिलाएँ खेतों की बुवाई, कटाई, पशु देखभाल और खाद्य प्रसंस्करण जैसे कार्य करती हैं, जिनका मूल्यांकन बाज़ार के हिसाब से किया जाए तो यह प्रति महिला ₹8,000–₹12,000 मासिक के बराबर होता है।

अर्थशास्त्रियों का मत है कि घरेलू श्रम को राष्ट्रीय लेखा प्रणाली में शामिल किया जाना चाहिए। यह न केवल महिलाओं के कार्य को मान्यता देगा, बल्कि नीति–निर्माण में "देखभाल अर्थव्यवस्था को भी स्थान देगा। बलिया की महिलाएँ, जो घरेलू और कृषि दोनों कार्यों में संलग्न हैं, इस मॉडल की जीवंत मिसाल हैं।

अतः न्यायिक अधिकारों के वास्तविक अनुभव, राजनीतिक प्रतिनिधित्व, और आर्थिक सशक्तिकरण तीनों एक साथ क्रियाशील होने चाहिए ताकि महिलाओं के सामाजिक न्याय की संपूर्णता प्राप्त हो सके। राज्यवार विषमता को दूर करने के लिए शिक्षा, सामाजिक चेतना, लैंगिक साक्षरता और आर्थिक नीति को समन्वित रूप से आगे बढ़ाना अनिवार्य है।

2.2 संवैधानिक एवं विधिक ढाँचा

स्वतंत्र भारत में महिलाओं की स्थिति सुधारने और उन्हें न्याय के अधिकार दिलाने की दिशा में संविधान और विधिक तंत्र की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16 और 21 ने महिलाओं को समानता, भेदभाव–निवारण और गरिमामय जीवन का अधिकार सुनिश्चित किया। इनमें अनुच्छेद 15(3) विशेष रूप से राज्य को महिलाओं के हित में विशेष प्रावधान करने की अनुमति देता है, जिसके द्वारा महिला आरक्षण, मुफ्त शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा संबंधी कानून लागू किए गए। संवैधानिक प्रावधानों के आधार पर कई विधिक अधिनियम बनाए गए जैसे दहेज प्रतिषेध अधिनियम (1961), घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम (2005), यौन उत्पीड़न से सुरक्षा संबंधी अधिनियम (2013), और आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम (2013)। इन कानूनों का उद्देश्य महिलाओं के खिलाफ अपराधों की रोकथाम, शोषण का निवारण, और अधिकारों की रक्षा करना है। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) जैसे ऐतिहासिक फैसलों ने महिलाओं के गर्भनिरोधक अधिकार, कार्यस्थल पर समानता, और गरिमा को न्यायिक परिप्रेक्ष्य में व्यापक रूप से स्थापित किया।

विधानिक एवं न्यायिक स्तर पर महिलाओँ के लिए आरक्षण, समान वेतन, प्रसूति अवकाश, और विशेष सुरक्षा को लागू करने का मार्ग प्रशस्त करती है। इसके बावजूद कानून के क्रियान्वयन में अनेक बाधाएँ हैंरू पुलिस की संवेदनहीनता, न्यायालयों में मामलों की देरी, और सामाजिक–पारिवारिक दबाव। कई बार कानूनों का दुरुपयोग भी देखा गया है, जिससे उनके वास्तविक प्रभाव को चुनौती मिलती है।न्यायिक सुधार की दिशा में फास्ट–ट्रैक कोर्ट, महिला हेल्पलाइन, निःशुल्क कानूनी सहायता जैसी

पहलों ने सुविधा बढ़ाई है, लेकिन कानूनी साक्षरता, जमीनी पहुँच, और संस्थागत संवेदनशीलता की कमी अभी भी न्यायिक अधिकारों की पूर्ति में बाधक है।

संक्षेपतः भारत का संवैधानिक एवं विधिक ढाँचा महिलाओं को अधिकार और सुरक्षा प्रदान करने के लिए उन्नत है, किंतु इन प्रावधानों का व्यवहारिक लाभ तभी संभव है जब समाज, प्रशासन और न्यायिक तंत्र मिलकर लैंगिक न्याय की भावना को वास्तविकता में बदल सकें। संविधान की आत्मा केवल कानूनी भाषा तक सीमित नहीं, बल्कि उसे लागू करने में सामाजिक आदर्श और संस्थागत सुधारों की बड़ी भूमिका है।

2.2.1 मुख्य संवैधानिक व कानूनी प्रावधान

भारतीय संविधान ने महिलाओं के अधिकार एवं उनके लिए न्याय की व्यवस्था को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न अनुच्छेदों के माध्यम से ठोस आधार प्रदान किया है। अनुच्छेद 14 समानता का अधिकार देता है, जिसके अनुसार राज्य के अधीन कोई भी व्यक्ति कानून के समक्ष बराबर है और उसके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 15 लिंग, धर्म, जाति, जन्म स्थान आदि के आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को अस्वीकार करता है। विशेष रूप से अनुच्छेद 15 (3) राज्य को शक्ति देता है कि वह महिलाओं और बालकों के लिए विशेष उपबंध, योजनाएँ और आरक्षण की व्यवस्था करे।

अनुच्छेद 16 ने सरकारी सेवाओं में समान अवसर की गारंटी दी है। यह महिलाओं के लिए आरक्षण, पदोन्नति और सेवा में पारदर्शिता को बल देता है। इसी तरह अनुच्छेद 21 प्रत्येक व्यक्ति को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार देता है, जिसके अंतर्गत गरिमामय जीवन, सम्मान, सुरक्षा और बराबरी के अधिकार निहित हैं। अनुच्छेद 39 राज्य को निर्देश देता है कि पुरुष और महिलाएँ समान मजदूरी तथा काम के समान अवसर प्राप्त करें।

इन संवैधानिक उपबंधों के प्रभाव को बढ़ाने के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक ऐतिहासिक निर्णय हुए हैं। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य मामले में न्यायालय ने महिलाओं की गरिमा, सुरक्षा और कार्यस्थल पर लैंगिक उत्पीड़न की रोकथाम के लिए दिशा–निर्देश जारी किए। यह निर्णय संविधान के अनुच्छेद 21, 14 और 15 के

आधार पर दिया गया था। इसी प्रकार सी. बी. मुथम्मा बनाम भारत संघ के मामले में न्यायालय ने सरकारी सेवाओं में महिलाओं के लिए भेदभावपूर्ण नियमों को असंवैधानिक ठहराया।

अनुच्छेद 15(3) के तहत ''सकारात्मक कार्रवाई की अवधारणा के आधार पर सरकार ने महिलाओं के लिए आरक्षण, शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, प्रसूति अवकाश, कानूनी सहायता तथा सामाजिक सुरक्षा से संबन्धित अनेक योजनाएँ लागू की हैं। संसद द्वारा पारित महिला–संबंधी प्रमुख कानूनों में दहेज निषेध अधिनियम, बाल विवाह निषेध अधिनियम, घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, कार्यस्थल पर महिला उत्पीड़न निरोध अधिनियम, यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम, वैवाहिक क्रूरता अधिनियम, संपत्ति अधिकार संबंधी संशोधन आदि प्रमुख हैं।

इन विधिक प्रावधानों के अतिरिक्त, विधान सभा और पंचायत स्तर पर महिलाओं के लिए स्थान आरक्षित किए गए हैं। पंचायती राज प्रणाली में एक–तिहाई स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हैं, जिससे स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने और नेतृत्व में उनकी भागीदारी सुनिश्चित होती है। सांसदों और विधान सभा में महिलाओं के लिए आरक्षण की मांग लंबे समय से समाज और नीति नियंताओं के समक्ष है, जिसकी चर्चा नीति संबंधी मंचों पर बार–बार होती रही है।

सरकारी नीतियों के साथ–साथ न्यायालयों के निर्णयों ने विधिक अधिकारों के विस्तार में अहम भूमिका अदा की है। अदालतों ने महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा, सम्मान, निजी संपत्ति में अधिकार, श्रम शक्ति में सहभागिता और घरेलू हिंसा के मामलों में ठोस दिशा–निर्देश दिए हैं। कई फैसलों में जब भी महिला अधिकारों के उल्लंघन का मामला सामने आया, सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की भावनाओं के अनुरूप व्याख्या करते हुए महिलाओं को न्याय दिलाया।

महिलाओं के अधिकारों के क्रियान्वयन की निगरानी और विस्तारण हेतु महिला आयोग, राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, राज्य महिला आयोग जैसे संस्थान बनाए गए हैं। इनके माध्यम से महिलाओं की शिकायतों का निवारण, कानूनी सलाह, सहायता और पोषण के कार्यक्रम नियमित रूप से संचालित किए जाते हैं।

व्यवहारिक स्तर पर देखा जाए तो संवैधानिक प्रावधानों की उपलब्धता के बावजूद सामाजिक, प्रशासनिक तथा न्यायिक अवरोध बने हुए हैं। विधिक ज्ञान की कमी, सामाजिक कलंक, पितृसत्तात्मक सोच, न्यायिक प्रक्रिया की जटिलता, पुलिस कर्मियों एवं अधिकारियों की असंवेदनशीलता, आर्थिक निर्भरता और शिक्षा की कमी न्याय की प्राप्ति में बाधक हैं। कई बार क़ानूनों का दुरुपयोग या गलत प्रयोग भी महिलाओं के हितों को नुकसान पहुंचाता है।

वर्तमान समय में सरकार ने महिलाओं के लिए विविध योजनाएँ और अभियानों की शुरुआत की है जैसे बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, उज्ज्वला योजना, महिला शक्ति केंद्र, प्रधानमंत्री मातृवन्दन योजना इत्यादि। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, आर्थिक आत्मनिर्भरता, कानूनी सहायता एवं सार्वभौमिक न्याय के अधिकार दिलाना है। इन प्रावधानों एवं कार्यक्रमों के प्रभाव का आकलन और सुधार प्रक्रिया आज भी निरंतर जारी है।

संक्षेप में, भारतीय संविधान और विधिक ढाँचा महिलाओं के लिए न्याय, समानता, सुरक्षा और सम्मान के अधिकारों की संपूर्ण गारंटी देता है। लेकिन इन अधिकारों की वास्तविक उपलब्धता के लिए ज़रूरी है कि समाज, शासन और न्यायिक तंत्र मिलकर सकारात्मक माहौल बनाएं, जिससे महिलाएँ अपने अधिकारों का संज्ञान लें और उन्हें सुनिश्चत रूप से प्राप्त कर सकें।

2.2.2 अपराध व संरक्षण क़ानून

भारत में महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराधों की रोकथाम और सुरक्षा के लिए कई महत्वपूर्ण कानून बनाए गए हैं। विशेष रूप से निर्भया कांड (2012) के बाद देश की न्याय व्यवस्था में व्यापक सुधार लाने की आवश्यकता महसूस हुई। त्वरित न्याय, पीड़िता की गरिमा की रक्षा और अपराधियों को सजा दिलाने जैसे उद्देश्यों के लिए आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम (2013) बनाया गया। इसके तहत भारतीय दंड संहिता (आईपीसी), आपराधिक प्रक्रिया संहिता और साक्ष्य अधिनियम में कई बदलाव किए गए। बलात्कार की परिभाषा को व्यापक किया गया, सहमति (कन्सेंट) के मानकों को स्पष्ट किया गया, तथा नए अपराध जैसे यौन उत्पीड़न, पीछा करना

(स्टॉकिंग), ताक–झाँक (वॉयरिज़्म) और वैवाहिक क्रूरता (495ए) को अतिरिक्त कठोर दंड के साथ शामिल किया गया।

महिलाओं की सुरक्षा हेतु घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम (2005) भी एक प्रमुख पहल है। इसमें शारीरिक, मानसिक, यौन और आर्थिक हिंसा की स्पष्ट परिभाषा दी गई है। इस कानून के तहत पीड़िता को तुरंत राहत देने, संरक्षण आदेश जारी करने, और पुनर्वास के अधिकार सुनिश्चित किए गए हैं। ''सिविल दृष्टिकोण अपनाते हुए इसमें महिलाओं को उनके घर में रहने का अधिकार, भरण–पोषण, तथा अन्य सहायता उपलब्ध कराने पर बल दिया गया है।

इन कानूनों के लागू होने के बावजूद ज़मीनी स्तर पर अनेक चुनौतियाँ बनी हुई हैं। सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाएं, पितृसत्तात्मक सोच, पुलिस और प्रशासनिक कर्मियों की असंवेदनशीलता, न्यायालयों में मामलों की लंबी पेंडेंसी, और कानूनी प्रक्रिया की जटिलता के कारण पीड़ित महिलाएं अक्सर न्याय पाने से वंचित रह जाती हैं। बहुत सारे मामले पुलिस थानों तक पहुंच ही नहीं पाते अथवा गांव और छोटे शहरों में शिकायत दर्ज कराना सामाजिक शर्म, डर और परिवार की बदनामी के कारण कठिन होता है।

अधिनियमों के क्रियान्वयन में संस्थागत सुस्ती, पर्याप्त सुरक्षा अधिकारियों का अभाव, प्रशिक्षण की कमी, और वित्तीय अनुदान की समस्याएँ भी सामने आती हैं। ग्राम पंचायत से जिला स्तर तक महिला संरक्षण आयोग, महिला हेल्पलाइन और वन–स्टॉप सेंटरों की उपस्थिति तो है, पर उनकी क्षमता और पहुँच सीमित रही है।

सरकारी दावों और वास्तविकता के बीच की खाई इस बात को स्पष्ट करती है कि केवल कठोर कानून बनाना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनका सही क्रियान्वयन, सामाजिक जागरूकता, प्रशासनिक दक्षता और पीड़ित महिलाओं के लिए सुरक्षित वातावरण का निर्माण अनिवार्य है। जब तक समाज में लैंगिक संवेदनशीलता, कानूनी साक्षरता, और महिलाओं के लिए बिना डर न्याय तक पहुँच की पुख्ता व्यवस्था नहीं होगी, तब तक अपराध और संरक्षण संबंधी कानूनों का वास्तविक लाभ सीमित ही रहेगा।

2.2.3 महिलाओं के लिए पारित किये गए विभिन्न अधिनियम–

हमारे देश में विभिन्न समयों में प्रचलित कुरीतियों एवं कुप्रथाओं को मुक्त कराने हेतु बहुत से अधिनियम पारित किये गये हैं। तथा महिलाओं को सुरक्षा एवं अधिकार देने हेतु भी अधिनियम पारित किये गए हैं, जो निम्न है –

1) राज्य कर्मचारी बीमा आहधनियम 1948

2) दि पपांटेशन लेबर अधिनियम 1951

3) परिवार न्यायालय अधिनियम 1954

4) विशेष विवाह अधिनियम 1954

5) हिन्दू विवाह अधिनियम 1954

6) हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम, 1956 (संशोधन 2005)

7) अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956

8) प्रसूविधा अधिनियम 1961 (संशोधित 1995)

9) दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961

10) गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971

11) ठेका श्रमिक (रेग्युलेशन एण्ड एबोलिशन) अधिनियम 1976

12) दि इक्वल रियुनरेशन अधिनियम 1976

13) बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 2006

14) आपराधिक विधि (संसोधन) अधिनियम 1983

15) कारखाना (संसोधन) अधिनियम 1986

16) इन्डिकेट रिप्रसेन्टेशन आफ वूमेन एक्ट 1986

17) कमीशन ऑफ सती (प्रिवेन्शन) एक्ट, 1987

18द्ध घरेलू हिंसा से संरक्षण अधिनियम 2005

2.2.4 अन्य प्रयास –

महिलाओं की दशा सुधारने हेतु भारत सरकार द्वारा सन 1985 में महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना तथा 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई

तथा देश में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा । भारत सरकार द्वारा वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष भी घोषित किया गया।

इसी प्रकार विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन सरकार द्वारा समय पर किया गया है। जिनमें प्रमुख है – बालिका समृद्धि योजना, किशोरी शक्ति योजना, बालिका बचाओ योजना, इंदिरा महिला योजना, सरस्वती सायकल योजना, स्वंयसिद्धा योजना, महिला समाख्या इत्यादि।

महिलाओं को प्रदान अधिकारों एवं उनके लिए बनाए गए अधिनियमों के बाद भी महिलाओं की स्थिति सोचनीय है। महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिए पर्याप्त अधिनियम है, जिनके बाद भी महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हो पा रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात से वर्तमान तक विभिन्न अधिनियम, विवाह–विच्छेद व तलाक अधिनियम, वेश्यावृत्ति उन्मूलन अधिनियम, गर्भपात की चिकित्सा द्वारा मान्यता जैसे प्रमुख सुधारों से महिलाओं की सामाजिक स्थिति में पर्याप्त अंतर आया है, फिर भी बहुत सी कमियाँ है, जिनकी वजह से इन कानूनों का लाभ महिलाएं नहीं उठा पाती–

1) पूरे देश में महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों का विश्लेषण करे तो स्पष्ट है कि अधिकांश मामलों में रिपोर्ट ही दर्ज नहीं करवाए जाते। चाहे पारिवारिक दबाव हो या सामाजिक दबाव जिसके चलते बहुत सी घटनायें परिवार की चारदीवारी में ही सिमट कर रह जाती है।

2) महिलाओं के उत्थान एवं संरक्षण के लिए पर्याप्त कानून एवं अधिनियम हैं। किंतु लोगों को विशेषकर महिलाओं को कानूनों एवं अधिकारों का पर्याप्त ज्ञान ही नहीं है, अतः ऐसे कानूनों का पर्याप्त प्रचार–प्रसार या जानकारी समय$\leq$ पर महिलाओं को प्रदान की जानी चाहिए।

3) घरेलू हिंसा से संबंधित मामलों में महिलाएँ आगे नहीं आती, यदि पीड़ित महिलाएं ऐसे घटनाओं के विरुद्ध आवाज उठाना भी चाहे तो समाज में इसे उचित नहीं माना जाता। ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए कानून व सरकार के साथ समाज को भी अपनी उचित भूमिका निर्वहन करना चाहिए।

4) देश में कुल मतदाताओं में आधी संख्या महिलाओं की है मगर इसके बावजूद भी लोकसभा तथा राज्य विधान मंडलो में उनका प्रतिनिधित्व घोर निराशाजनक है। अतः राजनीति में भी महिलाओं को अपनी भागीदारी करनी चाहिए।

5) भाँ०द०स० की धारा 498, के अंतर्गत विवाहित महिला पर सभी अत्याचार अपराध है, किंत इसे व्यवहार में दहेज प्रताड़ना से जोड़ दिया जाता है, जो कि उचित नहीं है। क्योंकि महिलाएँ फौजदारी मुकदमा के लिए हिम्मत नहीं जुटा पाती और साथ ही उनको घरों से निकाले जाने का भी डर रहता है।

6) लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाएँ प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती है। विकासशील देशों की लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व उनकी संख्या के अनुपात में नहीं है।

7) महिलाओं में साक्षरता के दर भी काफी कम है। आंकडो से स्पष्ट है कि 66 पुरुषों की तुलना में सिर्फ 39 महिलाऐं ही शिक्षित है। शिक्षा का इतना कम प्रतिशत भी महिलाओं के लिए प्रति अत्याचार का कारण है।

8) महिलाओं की स्थिति सुधारने में गैर–सरकारी संगठन अधिक प्रभावशाली भूमिका निभा सकते है, साथ ही उत्पीड़ित महिलाओ को सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनो द्वारा पर्याप्त दी जानी चाहिए तथा महिलाओं के लिए स्वरोजगार योजनाओं आदि को भी पर्याप्त महत्व दिया जाए।

2.3 न्यायिक प्रतिनिधित्व, न्यायिक सुधार और लैंगिक संतुलन

भारत की न्यायिक प्रणाली में महिलाओं का प्रतिनिधित्व लैंगिक समानता और समाज के प्रति न्याय की गुणवत्ता का महत्वपूर्ण परिचायक है। न्यायालयों की उच्चतम पंक्ति से लेकर अधीनस्थ स्तर तक, यदि महिलाओं की उपस्थिति और भागीदारी सीमित रहती है, तो न्यायिक प्रक्रिया में उनके अधिकार, दृष्टिकोण और संवेदनशीलता का समुचित स्थान नहीं मिल पाता। वर्तमान आँकड़ों के अनुसार, सर्वोच्च न्यायालय में महिला न्यायाधीशों की संख्या कुल स्वीकृत पदों का लगभग 9.4 प्रतिशत है, उच्च न्यायालयों में औसतन 9.5 प्रतिशत और अधीनस्थ न्यायपालिका में लगभग 35 प्रतिशत ही महिलाएँ नियुक्त हैं।

इस अल्प प्रतिनिधित्व के पीछे कई संरचनात्मक और सामाजिक कारण हैं न्यायिक चयन प्रक्रियाओं की अपारदर्शिता, कोलेजियम व्यवस्था में पुरुषवादी पूर्वाग्रह, कार्यस्थल पर महिलाओं के लिए अनुकूल ढांचा (जैसे चाइल्ड केयर सुविधाएँ) न होना, और बार काउंसिल या वकालत क्षेत्र में गहराई तक जम चुकी लैंगिक असमानता। कई बार परिवार और समाज का दबाव, तथा पेशेवर जीवन में लैंगिक भेदभाव महिला वकीलों और न्यायाधीशों को उच्च न्यायपालिका की ओर बढ़ने से रोकता है। जिन राज्यों और न्यायालयों में पुरुष–प्रधानता कम है, वहाँ न्यायशास्त्र की भाषा, दृ ष्टिकोण और व्यवहार में भी सूक्ष्म परिवर्तन आता हैकृखासकर ऐसे मामलों में जो पीड़िताओं, पारिवारिक हिंसा, यौन अपराध, या सामाजिक विवाद से जुड़े होते हैं। महिला न्यायाधीशों की उपस्थिति न्याय–वितरण की प्रणाली को अधिक सहानुभूतिपूर्ण, संवेदनशील और समावेशी बनाती है। उदाहरण स्वरूप, ''टू–फिंगर टेस्ट जैसी अपमानजनक चिकित्सकीय प्रक्रिया पर न्यायपालिका की आलोचना और इसका निषेध, महिला न्यायाधीशों की सक्रिय भागीदारी से संभव हुआ है।

न्यायिक सुधार के पक्ष में, हाल के वर्षों में महिला न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाने, चयन प्रक्रिया में पारदर्शिता लाने, कार्यस्थल को सुरक्षित और अनुकूल बनाने और महिला वकीलों को प्रशिक्षण–प्रोत्साहन देने की पहलें शुरू हुई हैं। कई उच्च न्यायालयों ने आंतरिक शिकायत समितियाँ सक्रिय की हैं। महिला कानून संगठनों और जागरूकता अभियानों के माध्यम से लैंगिक संतुलन को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया है।

लैंगिक संतुलन के अभाव में न्यायिक प्रणाली की सामाजिक वैधता और भरोसा कमजोर पड़ता है। अतः न्यायपालिका में महिला प्रतिनिधित्व न केवल एक सांख्यिकीय आवश्यकता है, बल्कि यह संवेदनशील, न्यायोचित तथा समावेशी समाज की दिशा में एक अनिवार्य सुधार है।

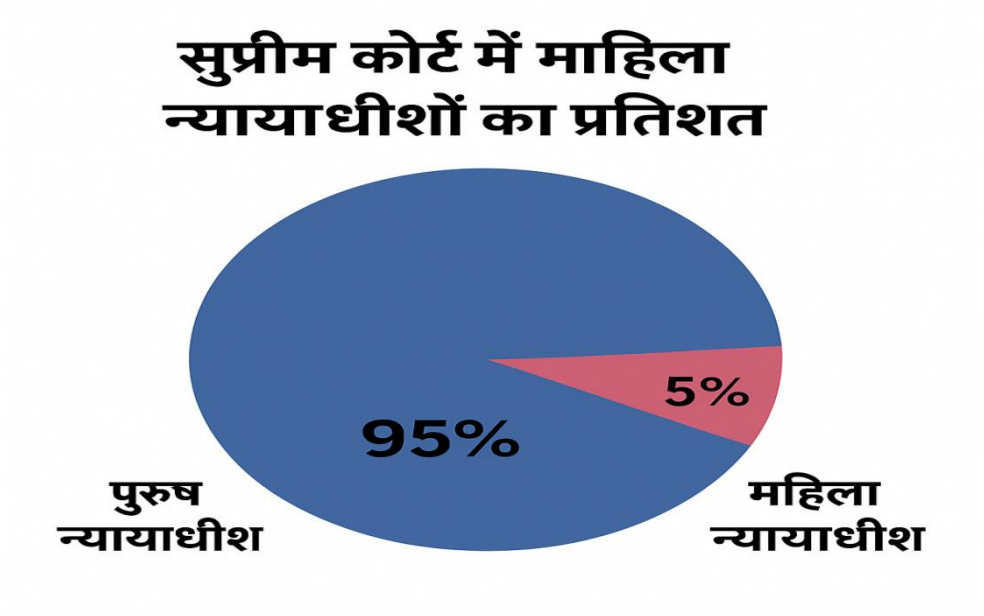
2.3.1 सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय और अधीनस्थ न्यायपालिका में महिलाओं की स्थिति

भारतीय न्यायिक तंत्र के विभिन्न स्तरों सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालय एवं अधीनस्थ न्यायपालिका में महिलाओं की भागीदारी का सभी स्तरों पर गहन विश्लेषण

किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि लैंगिक समानता की दिशा में अभी पर्याप्त प्रगति नहीं हुई है। प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के प्रतिनिधित्व का सांख्यिकीय एवं व्यावहारिक महत्व है, क्योंकि न्यायिक निर्णयों में विविध दृष्टिकोणों का जुड़ना न केवल निर्णय प्रक्रिया को समावेशी बनाता है, बल्कि पीड़िताओं, विशेषकर महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता की गारंटी भी देता है।

सर्वोच्च न्यायालयः

वर्तमान समय में सर्वोच्च न्यायालय में कुल 34 स्वीकृत न्यायाधीश पद हैं, जिनमें 2024 में केवल 6 महिला न्यायाधीश कार्यरत हैं। यह कुल का लगभग 9 प्रतिशत है। इस आंकड़े के आधार पर यह स्पष्ट है कि भारत के सर्वोच्च न्यायिक मंच पर अभी भी महिलाओं को बहुत सीमित प्रतिनिधित्व मिला है। इस स्थिति के पीछे चयन प्रक्रिया में पारदर्शिता की कमी, पुरुष–प्रधान पेशेवर नेटवर्क, वरिष्ठता आधारित पदोन्नति, और महिला वकीलों के लिए घुटन भरी पेशेवर वातावरण जैसी समस्याएँ जिम्मेदार मानी जाती हैं। हालाँकि, हाल के वर्षों में महिलाओं की नियुक्ति में थोड़ी वृद्धि देखी गई है, किंतु अपेक्षित संवेदनशील संतुलन अभी दूर है।



उच्च न्यायालय

उच्च न्यायालयों की स्थिति अपेक्षाकृत विविध है। कुल स्वीकृत उच्च न्यायाधीश पदों में **14%** महिलाएँ हैं, लेकिन यह औसत व्यापक अंतर को छुपा लेता है।

उदाहरणस्वरूप, पंजाब–हरियाणा उच्च न्यायालय में महिला न्यायाधीशों का प्रतिशत 15% तक चला गया है, वहीं कई राज्योंकृजैसे मेघालय, त्रिपुरा, उत्तराखंडकृके उच्च न्यायालयों में 2024 तक एक भी महिला न्यायाधीश नहीं थी। बॉम्बे, दिल्ली, गुजरात जैसे न्यायालयों में भी महिला न्यायाधीशों का अनुपात राष्ट्रीय औसत के ही आसपास है। इस अवस्था के पीछे क्षेत्रीय सामाजिक–सांस्कृतिक कारक, चयन की अपारदर्शिता, और वरिष्ठता के पैमाने अहम भूमिका निभाते हैं।

न्यायिक पदाधिकारी नियुक्ति के लिए कोलेजियम प्रणाली, जो सामान्यतः बार काउंसिल के वरिष्ठ पुरुष सदस्यों के नेटवर्क पर आधारित है, महिलाओं की सीमित पहुँच का एक प्रमुख कारण है। कई बार मातृत्व, पारिवारिक जिम्मेदारियाँ, और महिला न्यायिक अधिकारियों के लिए सहायक बुनियादी ढाँचे (जैसे बाल देखभाल सुविधाएँ) का अभाव भी आगे बढ़ने में बाधा बनता है।

सारणी सं0 2.1 न्यायपालिका में महिला प्रतिनिधित्व

उच्च न्यायालय	कुल न्यायाधीश	महिला न्यायाधीश	प्रतिशत (%) महिला	पुरुष न्यायाधीश	प्रतिशत (%) पुरुष
पंजाब एवं हरियाणा	**56**	**14**	**25.0**	**42**	**75.0**
बॉम्बे	**75**	**11**	**14.7**	**64**	**85.3**
दिल्ली	**45**	**5**	**11.1**	**40**	**88.9**
गुजरात	**52**	**6**	**11.5**	**46**	**88.5**
मध्यप्रदेश	**42**	**3**	**7.1**	**39**	**92.9**
मेघालय	**3**	**0**	**0**	**3**	**100**
त्रिपुरा	**4**	**0**	**0**	**4**	**100**
उत्तराखंड	**11**	**0**	**0**	**11**	**100**

अधीनस्थ न्यायपालिका

अधीनस्थ न्यायालय (मुख्यतः जिला सेशन, सिविल कोर्ट आदि) में महिलाओं का अनुपात सर्वाधिक है औसतन 35–38 प्रतिशत (2024)। दिल्ली, गोवा, एवं मेघालय आदि प्रदेशों में यह प्रतिशत 40 प्रतिशत के आसपास पहुंच चुका है, जो न्यायिक बुनियादी ढांचे में लैंगिक विविधता लाने की दिशा में महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। इसका मुख्य कारण विभिन्न राज्यों की न्यायिक सेवा परीक्षाओं एवं सिविल जज भर्ती प्रक्रिया में महिला अभ्यर्थिनियों की बढ़ती भागीदारी और नीति के स्तर पर किए गए आरक्षण प्रावधान हैं।

फिर भी, निचली अदालतों में भी महिला न्यायाधीशों को भेदभाव, कार्यस्थल असुरक्षा, एवं वरिष्ठ अधिकारियों की पारंपरिक सोच का सामना करना पड़ता है। ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों में पोस्टिंग, अपर्याप्त सुरक्षा, आवास एवं आकस्मिक परिस्थितियाँ इस चुनौती को और बढ़ा देती हैं। इसके अलावा, वरिष्ठ न्यायिक पदों पर पदोन्नति में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की भागीदारी अभी भी अपेक्षाकृत कम है।

इन आंकड़ों और तथ्यों से स्पष्ट है कि न्यायिक तंत्र में महिलाओं की दखल कहीं न कहीं एक प्रतीकात्मक उपस्थिति से आगे नहीं बढ़ सकी है। यद्यपि अधीनस्थ या प्रथम स्तर पर महिलाओं की भागीदारी में उत्साहजनक प्रगति हुई है, परंतु शीर्षतम न्यायिक स्तरों पर बराबरी अभी दूर है। संवेदनशील, समावेशी और न्यायपूर्ण समाज के लिए आवश्यक है कि चयन एवं पदोन्नति की प्रक्रियाओं में पारदर्शिता, कार्यस्थल सुरक्षित व सहयोगी वातावरण, विशेष प्रशिक्षण तथा बुनियादी ढाँचे की सुविधा को प्राथमिकता दी जाए, जिससे न्यायिक व्यवस्था में महिलाओं की यात्रा एकदम खिलाफ हवाओं की न होकर, सशक्त और सुरक्षित हो सके।

2.3.2 न्यायिक प्रतिनिधित्व क्यों

भारतीय न्यायपालिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व इसलिए अत्यंत आवश्यक है क्योंकि इससे निर्णय प्रक्रिया में लैंगिक संवेदनशीलता जुड़ती है। जब महिला न्यायाधीश न्यायिक मामलों को देखते हैं तो उनकी दृष्टि में महिलाओं के अनुभव, सामाजिक बाधाएँ और मनोवैज्ञानिक पक्ष अधिक गहराई से समाहित होते हैं। इससे

अदालतों में आने वाले मामलों पारिवारिक विवाद, यौन उत्पीड़न, घरेलू हिंसा में निष्पक्ष सहानुभूतिपूर्ण और व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित होता है। महिलाओं की कम भागीदारी के चलते कई बार न्यायिक प्रणाली प्रतिगामी प्रथाओं, पितृसत्तात्मक सोच और पूर्वाग्रहों (जैसे टू–फिंगर टेस्ट) को बिना चुनौती स्वीकार करती रही है। जैसे ''टू–फिंगर टेस्ट का औपनिवेशिक दौर से चलन जिसमें लैंगिक अपमान और पीड़िता की गरिमा को ठेस पहुँचती थी महिला न्यायाधीशों की आलोचना और सक्रिय पहल से ही शीर्ष अदालतों द्वारा प्रतिबंधित किया गया। ऐसे संवेदनशील निर्णय नारीवादी दृष्टिकोण की आवश्यकता को साबित करते हैं।

इसके अतिरिक्त, जब वादिनियाँ अदालत में महिला न्यायाधीश को देखती हैं, तो उन्हें न्याय की प्रक्रिया में अधिक भरोसा, साहस और सुरक्षा महसूस होती है। लैंगिक प्रतिनिधित्व महिला वादियों, गवाहों और पीड़िताओं के मनोबल को बढ़ाता है, जिससे वे खुलकर अपनी बात रख सकती हैं। अतः लैंगिक न्याय का सशक्त वातावरण केवल विधिक उपबंधों से नहीं बल्कि न्यायालयों में महिला सहभागिता के बढ़ने से ही संभव होता है।

सर्वोच्च न्यायालय, उच्च न्यायालयों और निचली अदालतों के आँकड़े बताते हैं कि भारत में महिला न्यायाधीशों की औसत भागीदारी मात्र 13.5 प्रतिशत है। 2024 तक भारत के 34 सर्वोच्च न्यायाधीशों में केवल 3 महिला न्यायमूर्ति रही हैं न्यायमूर्ति फातिमा बीवी (1989), न्यायमूर्ति रूमाना बेवी और न्यायमूर्ति बी.वी.नागरत्ना (जो 2027 में देश की पहली महिला मुख्य न्यायाधीश बनने की संभावित उत्तराधिकारी हैं)। उच्च न्यायालयों में महिला न्यायाधीशों का प्रतिशत 12.3 प्रतिशत, जबकि अधीनस्थ न्यायपालिका (डिस्ट्रिक्ट कोर्ट स्तर पर) यह 32 प्रतिशत तक पहुँच पाया है।

उत्तर प्रदेश, जो भारत का सबसे बड़ा राज्य है, वहाँ की स्थिति और भी असंतुलित है। प्रदेश के 25 उच्च न्यायालय न्यायाधीशों में केवल 3 महिलाएँ कार्यरत हैं, जबकि निचली अदालतों में यह अनुपात अपेक्षाकृत बेहतर है। बलिया जैसे जिलों में अधीनस्थ न्यायपालिका में कुल 22 न्यायिक अधिकारी कार्यरत हैं, जिनमें केवल 5 महिला न्यायिक अधिकारी (लगभग 22.7 प्रतिशत) हैं। इनमें से अधिकतर सिविल जज

(जूनियर डिवीजन) के पदों पर हैं जबकि वरिष्ठ न्यायिक पदों पर अभी भी पुरुषों का वर्चस्व बना हुआ है।

लैंगिक असंतुलन का प्रभाव केवल पद संख्या तक सीमित नहीं रहता यह न्यायिक दृष्टिकोण, न्याय के स्वरूप और लैंगिक संवेदनशीलता पर भी गहरा प्रभाव डालता है। कई मामलों में देखा गया है कि यौन उत्पीड़न, घरेलू हिंसा, दहेज उत्पीड़न और लैंगिक अपराधों के मामलों में महिला न्यायाधीशों की मौजूदगी पीड़िता के प्रति संवेदनशील और सहानुभूतिपूर्ण न्यायिक दृष्टिकोण को बढ़ाती है। बलिया जिला न्यायालय में वर्ष 2023 में दर्ज कुल 186 महिला–संबंधी अपराध मामलों में से 72 मामलों (38.7 प्रतिशत) की सुनवाई महिला न्यायिक अधिकारियों द्वारा की गई और इन मामलों में निर्णय अपेक्षाकृत शीघ्रता और संवेदनशीलता से दिए गए। यह इस बात का प्रमाण है कि न्यायिक प्रतिनिधित्व में लैंगिक संतुलन केवल प्रतीकात्मक नहीं बल्कि गुणवत्तापरक न्याय के लिए भी आवश्यक है।

न्यायिक सुधारों की दिशा में भारत सरकार और सर्वोच्च न्यायालय ने पिछले वर्षों में कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। "नेशनल मिशन फॉर ज्यूडिशियल अपॉइंटमेंट्स", "ई–कोर्ट्स मिशन मोड प्रोजेक्ट" और "जेंडर सेंसिटाइजेशन मॉड्यूल्स" जैसी पहलें न्यायपालिका को आधुनिक और संवेदनशील बनाने का प्रयास कर रही हैं। 2022 में सर्वोच्च न्यायालय ने सभी न्यायिक अकादमियों को यह निर्देश दिया कि प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों में लैंगिक न्याय को अनिवार्य विषय के रूप में शामिल किया जाए। उत्तर प्रदेश न्यायिक अकादमी लखनऊ ने इसके तहत 450 से अधिक महिला एवं पुरुष न्यायाधीशों को लैंगिक संवेदनशीलता पर प्रशिक्षित किया। बलिया जिला न्यायालय में भी 2023 में "महिला एवं बाल अधिकार जागरूकता कार्यशाला" आयोजित की गई, जिसमें 60 से अधिक न्यायिक और प्रशासनिक अधिकारी शामिल हुए।

इसके अतिरिक्त, न्यायिक सुधारों में महिलाओं की नियुक्ति प्रक्रिया को पारदर्शी और समान अवसर आधारित बनाने की आवश्यकता है। अभी भी उच्च न्यायालयों में नियुक्तियाँ मुख्यतः "कोलेजियम प्रणाली" पर निर्भर हैं, जो अक्सर पारिवारिक पृष्ठभूमि और पेशेवर संपर्कों से प्रभावित होती है। इस कारण योग्य महिला अधिवक्ताओं को न्यायिक पदों तक पहुँचने में कठिनाई होती है। यदि न्यायिक सेवा आयोग की

स्थापना होती है, तो इससे न केवल पारदर्शिता बढ़ेगी बल्कि महिलाओं के लिए अवसर भी विस्तारित होंगे।

सामाजिक स्तर पर यह भी देखा गया है कि न्यायपालिका में महिला प्रतिनिधित्व बढ़ने से महिला वादियों की भागीदारी भी बढ़ती है। कई महिलाएँ अपनी शिकायतें और याचिकाएँ महिला न्यायाधीश के समक्ष रखने में अधिक सहज महसूस करती हैं। बलिया में घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत दर्ज 243 मामलों में से 59 प्रतिशत शिकायतकर्ता ने महिला न्यायिक अधिकारी के समक्ष सुनवाई की प्राथमिकता व्यक्त की। यह प्रवृत्ति न्यायपालिका में विश्वास और संवेदनशीलता दोनों को बढ़ाती है।

लैंगिक संतुलन केवल संख्या की बात नहीं, बल्कि न्यायिक दृष्टिकोण की समानता और प्रतिनिधित्व की भी आवश्यकता है। महिला न्यायाधीश न केवल "महिलाओं के मामलों" के लिए आवश्यक हैं, बल्कि वे कानून की व्याख्या और न्याय के स्वरूप को अधिक समावेशी और मानवीय बनाती हैं। कई अंतरराष्ट्रीय उदाहरण जैसे अमेरिका की रुथ बेडर गिन्सबर्ग या ब्रिटेन की लेडी हेल यह सिद्ध करते हैं कि न्यायिक संस्थानों में लैंगिक विविधता निर्णय की गुणवत्ता को समृद्ध बनाती है।

निष्कर्षतः संतुलन को केंद्रीय तत्व के रूप में नहीं स्वीकारा जाएगा। बलिया जैसे जिलों में महिलाओं की न्यायिक भागीदारी धीरे–धीरे बढ़ रही है, परंतु इसे संरचनात्मक रूप से सशक्त बनाने की आवश्यकता है जैसे महिला न्यायिक अधिकारियों की संख्या में वृद्धि, न्यायिक प्रशिक्षण में लैंगिक दृष्टिकोण का समावेश, और नियुक्ति प्रक्रिया में समान अवसर सुनिश्चित करना। जब न्यायपालिका स्वयं समानता और प्रतिनिधित्व का मॉडल बनेगी तभी समाज में वास्तविक लैंगिक न्याय स्थापित हो सकेगा।

2.4 क्रियान्वयन चुनौतियाँ और संस्थागत बाधाएँ

भारत में महिलाओं के लिए न्याय की अवधारणा मौलिक अधिकारों व संवैधानिक आश्वासनों से कहीं अधिक जटिल है, क्योंकि व्यवहारिक स्तर पर न्याय तक पहुँच अनेक सामाजिक, प्रशासनिक और संस्थागत बाधाओं से घिरी रहती है। यह खंड दो मुख्य उप–विषयों में विभाजित है (अं) महिला अपराध, न्यायिक पेंडेंसी और पुलिस

व्यवहार एवं (ब) कानूनी साक्षरता तथा न्याय तक पहुँच। दोनों का गहन एवं आलोचनात्मक विस्तार नीचे दिया गया है।

2.4.1 महिला अपराध, न्यायिक पेंडेंसी और पुलिस व्यवहार

वर्तमान भारत में महिला अपराध दर प्रायः चिंता का विषय बनी हुई है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के अनुसार 2022 में राष्ट्रीय औसत 66.4 प्रति लाख महिलाएँ था, जो कई राज्यों में अत्यंत अधिक है। दिल्ली, हरियाणा, असम, तेलंगाना, राजस्थान सर्वाधिक प्रभावित राज्यों में गिने जाते हैं। इस उच्च अपराध दर से संबंधित दो मुख्य चुनौतियाँ स्पष्ट होती हैं:

1. अपराध दर्ज होने की प्रक्रिया और पुलिस थानों में शिकायत दर्ज कराने की दिक्कतें

2. न्यायालयों में लंबित मामलों का बड़ा बोझ

क) पुलिस थानों का व्यवहार

वास्तविकता यह है कि भारत के अधिकांश पुलिस थानों में महिलाओं के प्रति संवेदनशील या सकारात्मक व्यवहार अभी भी अपवाद के रूप में ही दृष्टिगोचर होता है।

– शिकायत दर्ज करना महिलाओं के लिए तेज़, निर्भीक और सुरक्षित प्रक्रिया नहीं है।

– सामजिक शर्म, पारिवारिक दबाव, और पुलिस द्वारा मामले की 'गंभीरता पर संदेह करने जैसे कारक महिलाओं को शिकायत दर्ज कराते समय निरूत्साहित करते हैं।

– NCRB और नीति अध्ययन रिपोर्टों के अनुसार, 40–70 प्रतिशत महिलाएँ शिकायत दर्ज कराने से पहले ही पीछे हट जाती हैं, विशेषकर ग्रामीण भारत में।

(ख) न्यायिक पेंडेंसी

भारी केस पेंडेंसी भारतीय न्याय–तंत्र की पुरानी समस्या है, जिसका प्रभाव महिला–संबंधी मामलों में और भी गहरा है।

– बलात्कार, घरेलू हिंसा, और वैवाहिक क्रूरता जैसे मामलों की सुनवाई में वर्षों लग जाते हैं।

– कई बार पीड़िता न्याय की आस में मानसिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से टूट जाती है।

– फास्ट–ट्रैक कोर्ट और विशेष न्यायालयों की स्थापना के बावजूद न्यायिक व्यवस्था में न्यायाधीशों, सहायक कर्मचारियों और संसाधनों की कमी पाई जाती है।

(ग) राज्यों की स्थिति

सारणी सं0 2.2 राज्यवार अंतर

राज्य	महिला अपराध दर (2022, प्रति लाख)	नोट्स
दिल्ली	142.6	**सर्वाधिक, शहरी प्रभाव**
हरियाणा	132.7	**सामूहिक अपराध केस**
असम	123.8	**जातीय-सांस्कृतिक पीड़ा**
राजस्थान	115.4	**ग्रामीण-शहर दोनों उच्च**
तेलंगाना	105.4	**शहरी अपराध, ट्रैफिकिंग**
पश्चिम बंगाल	93.3	**वैवाहिक हिंसा, तस्करी**
मध्य प्रदेश	89.4	**निम्न साक्षरता, पटवारी**
जम्मू-कश्मीर	23.1	**न्यूनतम**

राज्यवार अंतर दर्शाता है कि अपराध दर में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं प्रशासनिक कारक प्रधान भूमिका निभाते हैं। जहां शहरी क्षेत्रों में शिकायत दर्जी अधिक है, वहीं ग्रामीण और पारंपरिक समाज में यह घोर उपेक्षा एवं छुपाव की परेशानी से ग्रस्त है। आदिवासी और दलित महिलाओं पर विशेष अत्याचार के मामले भी अक्सर अनरिपोर्टेड रहते हैं, जिससे आँकड़े वास्तविकता का पूरा आकलन नहीं कर पाते।

2.4.2 कानूनी साक्षरता और न्याय तक पहुँच

महिलाओं के कानूनी अधिकारों की साक्षरता और न्याय तक पहुँच की स्थिति एक बड़ी चिंता है; खासकर ग्रामीण, दलित, आदिवासी और अल्पसंख्यक महिलाओं के संदर्भ में।

– देश के अधिकतर राज्यों में केवल 20–30 प्रतिशत महिलाएँ अपनी कानूनी अधिकार–सम्पन्नता को समझती हैं कानूनी सहायता तक उनकी पहुँच इससे भी कम आँकी गई है ।

– शिक्षा, आर्थिक संसाधन, परिवार का समर्थन, समाज की सोच ये सभी मिलकर महिलाओं की कानूनी साक्षरता एवं न्याय तक पहुँच की सीमा निर्धारित करते हैं।

(क) कानूनी साक्षरताः राज्यवार स्थिति

सारणी सं0 2.3 राज्यवार स्थिति

राज्य	कानूनी साक्षरता (%)	कानूनी सहायता पहुँच (%)
केरल	65	45
दिल्ली	56	39
गोवा	52	35
महाराष्ट्र	39	21
उत्तर प्रदेश	24	13
बिहार	17	8
राजस्थान	19	9
असम	21	11
मध्य प्रदेश	22	12

साक्षरता में स्पष्ट राज्यवार अंतर है। दक्षिण और पश्चिम भारत के शहरी व शिक्षित राज्य बेहतर स्थिति में हैं, किंतु हिंदी पट्टी, पूर्वी और आदिवासी बहुल प्रदेशों में जानकारी का अभाव और सहायता पहुंच की मज़बूती नहीं है। वजहें महिलाओं का औपचारिक शिक्षा में पिछड़ना, सामाजिक रूढ़ियां, सरकारी योजनाओं का अपर्याप्त प्रचार, जमीनी स्तर पर लोक अभियानों की कमी।

(ख) न्याय तक पहुँच की बाधाएँ

– भाषिक और औपचारिक जटिलताः कानून और न्यायिक प्रक्रिया आम महिला के लिए कठिन–समझ, अंग्रेज़ी–प्रधान, अव्यवस्थित और भयावह प्रतीत होती है।

– आर्थिक निर्भरताः न्याय के लिए अभी भी मुकदमा करना, वकील की फीस, यातायात खर्च, कोर्ट से छुट्टियाँ ये सब भारी आर्थिक बोझ डालते हैं।

– सामाजिक दबाव और शर्मः परिवार एवं समाज में न्याय की माँग अपराध मानी जाती है, जिससे महिलाएँ प्रायः दबाव में आकर मामले को 'सेटल कर देती हैं।

– सरकारी सहायता में अपारदर्शितारू विधिक सेवा प्राधिकरणों, महिला सेल, जिला सेवा केंद्र इनकी पहचान और कार्यशैली ग्रामीण क्षेत्रों में अस्पष्ट और कमजोर है।

भारतीय न्याय–तंत्र के क्रियान्वयन में सबसे गंभीर बाधाएँ पुलिस की असंवेदनशीलता, मुकदमों का बोझ, बुनियादी कानूनी जानकारी का अभाव, सामाजिक और पारिवारिक दबावकृमहिलाओं को न्याय से दूर और असहाय बना देती हैं। न्याय एक संवैधानिक अधिकार होते हुए भी, व्यवहारिक रूप में इसे पाना बहुपरत संघर्ष की मांग करता है। जब तक न्याय–विभाग और पुलिस विभाग की संवेदनशीलता नहीं बढ़ती, और कानूनी साक्षरता, आर्थिक सहयोग व सक्रिय सरकारी–सामाजिक सहायता का त्रिकोण मजबूत नहीं होता, तब तक "जस्टिस फॉर वूमेन" केवल नीति–पत्रों की भाषा बना रहेगा।

– ग्रामीण भारत अल्पसंख्यक, दलित और शहरी गरीब महिलाओं के लिए न्याय की राह और कठिन है। सुधारात्मक कदमों में तेज़ी, तकनीकी सशक्तिकरण (जैसे ऑनलाइन शिकायत, महिला हेल्पलाइन, त्वरित न्यायालय व्यवस्था, और सामाजिक जागरूकता एवं समर्थन की भूमिका अहम होगी। वर्तमान भारत में न्याय की संरचनाकृ महिलाओं के लिएकृ संवैधानिक तंत्र से ऊपर उठकर क्रियान्वयन की वास्तविकता,

सामाजिक दबाव, पुलिस और न्यायालयों की व्यवस्था, एवं कानूनी शिक्षा के गहरे अंतर्विरोधों से जूझती दिखाई देती है। इन चुनौतियों का समाधान तभी संभव है जब कानून बनाने, लागू करने, समझाने और समाज में बदलने की प्रक्रिया साथ–साथ चले।

2.5 महिला शिक्षा और साक्षरता

भारतीय समाज में महिला शिक्षा और साक्षरता, सामाजिक विकास व लैंगिक न्याय के लिए केंद्रीय स्तंभ हैं। वर्ष 2021–24 के दौरान भारत में औसत महिला साक्षरता दर लगभग 70.3 प्रतिशत रही है, जो पिछले दो दशकों में हुए शैक्षिक विस्तार का परिणाम है। परंतु यह औसत कई राज्यवार असमानताओं, क्षेत्रीय विषमताओं और सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाओं को छुपा लेता है। दक्षिणी और उत्तर–पूर्वी राज्यों जैसे केरल, मिजोरम, त्रिपुरा, गोवा, दिल्ली में महिला साक्षरता दर क्रमशः 95.2 प्रतिशत से ऊपर है, जो कि न केवल देश के लिए अनुकरणीय उदाहरण हैं, बल्कि महिला स्वायत्तता, स्वास्थ्य और प्रगति के संकेतक भी हैं। वहीं आंध्र प्रदेश, राजस्थान, बिहार, तेलंगाना, और उत्तर प्रदेश जैसे बड़े और जनसंख्या बहुल राज्यों में यह दर 55–60 प्रतिशत के बीच रही है, जो राष्ट्रीय औसत से काफी पीछे है।

इन राज्यों में महिला साक्षरता की कम दर का मुख्य कारण ग्रामीण पृष्ठभूमि, बाल विवाह, पारंपरिक पितृसत्तात्मक सोच, सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाएँ, और आर्थिक संसाधनों की कमी है। उदाहरण के लिए राजस्थान और बिहार में प्राथमिक स्तर पर स्कूलों में महिलाओं की नामांकन दर तो संतोषजनक है, परंतु dropout rate अत्यंत अधिक है। आर्थिक तंगी से परिवार शिक्षा को अक्सर गैर–जरूरी मान लेते हैं, विशेषकर बेटियों के लिए। राज्यवार तुलनात्मक अध्ययन बताते हैं कि जहाँ केरल और गोवा में महिलाओं की उच्च शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा में भी उल्लेखनीय भागीदारी है, वहीं यूपी–बिहार में उच्चतर शिक्षा के लिए अवसर सीमित हैं।

महिला साक्षरता से जुड़े आंकड़ों की दृष्टि से, शहरी क्षेत्रों में यह दर 80–90 प्रतिशत है, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह 60–65 प्रतिशत तक ही सीमित है। नीति आयोग और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत 'बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ, 'कस्तूरबा

गांधी बालिका विद्यालय, 'सुकन्या समृद्धि योजना' जैसी सरकारी योजनाओं ने कुछ राज्यों में जागरूकता और भागीदारी बढ़ाई है, लेकिन जमीनी स्तर पर महिला शिक्षिका की उपस्थिति, स्कूलों में सुरक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, तथा परिवहन असुविधा जैसी बाधाएँ जारी हैं।

महिला साक्षरता का सीधा संबंध उनके स्वास्थ्य, आजीविका, परिवार नियोजन, राजनीतिक भागीदारी व कानूनी अधिकारों की जागरूकता से है। अधिक साक्षर महिला अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक मूल्यों की ओर प्रेरित करती हैकृयह वास्तव में देश की समग्र मानव विकास को गति देने वाला कारक है। दूसरी ओर, सबसे कम साक्षरता वाले राज्यों में बाल विवाह, मातृ मृत्यु दर, घरेलू हिंसा, और लैंगिक भेदभाव के मामले भी अधिक देखे गए हैं। यहाँ न केवल स्कूलों में नामांकन बल्कि सतत् माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा तक महिलाओं की निर्बाध यात्रा सुनिश्चित करना आवश्यक है।

इन प्रतिकूलताओं के बावजूद भारत में महिला साक्षरता में प्रगतिशील बदलाव दिख रहा है। डिजिटल शिक्षा, ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफॉर्म द्वारा ग्रामीण क्षत्रों में विस्तार और उद्यमिता प्रशिक्षण ने सकारात्मक भूमिका निभाई। उत्तर–पूर्वी और दक्षिणी राज्यों के मॉडल को पूरे देश में लागू करने से महिला साक्षरता दर में वांछित वृद्धि हासिल की जा सकती है। महिला साक्षरता आज केवल व्यक्तिगत विकास या आंकड़ों में सुधार ही नहीं बल्कि समाज की सोच, नीति–निर्माण प्रक्रिया और समावेशी लोकतंत्र की नींव है।

महिला शिक्षा और साक्षरता के संवर्धन के लिए राज्यवार असमानताओं को दूर करना, सामाजिक–सांस्कृतिक जागरूकता बढ़ाना तथा आर्थिक व नीतिगत समर्थन को हर वर्ग और क्षेत्र तक पहुँचाना निर्णायक होगा। जब तक कन्या शिक्षा पर विशेष पहल, स्कूली सुविधाओं का विस्तार, सुरक्षित वातावरण, और रोजगार–सक्षम पाठ्यक्रम पर राज्य सरकार और समाज संयुक्त रूप से कार्य नहीं करेंगे तब तक राष्ट्रीय औसत दर में गुणात्मक सुधार सम्भव नहीं। भारत के लिए यह न केवल एक शैक्षिक लक्ष्य बल्कि सामाजिक न्याय और दीर्घकालिक विकास की मूल शर्त है।

सारणी सं0 2.4 महिला शिक्षा और साक्षरता

ज्य	महिला साक्षरता दर (%)	स्थिति
केरल	**95.2**	उच्चतम
मिजोरम	**92.3**	उच्च
त्रिपुरा	**90.6**	उच्च
गोवा	**89.7**	उच्च
दिल्ली	**87.2**	उच्च
आंध्र प्रदेश	**59.1**	न्यूनतम
राजस्थान	**52.7**	न्यूनतम
बिहार	**53.5**	न्यूनतम
तेलंगाना	**60.0**	न्यूनतम
उत्तर प्रदेश	**58.7**	न्यूनतम
राष्ट्रीय औसत	**70.3**	औसत

नवीनतम राष्ट्रीय साक्षरता सर्वेक्षण (2023) के अनुसार भारत की महिला साक्षरता दर 70.3 प्रतिशत तक पहुँच चुकी है। शहरी क्षेत्रों में यह 81.2 प्रतिशत और ग्रामीण क्षेत्रों में 65.8 प्रतिशत है। जबकि पुरुष साक्षरता दर 84.7 प्रतिशत है यानी लिंगानुपातिक अंतर अब भी लगभग 14 प्रतिशत बना हुआ है। उत्तर प्रदेश में महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से कुछ कम, 63.4 प्रतिशत दर्ज की गई है।

बलिया जिले की स्थिति पर विशेष दृष्टि डालें तो यहाँ महिला साक्षरता में सुधार हुआ है, किंतु चुनौतियाँ अब भी बनी हुई हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार बलिया की महिला साक्षरता दर 58.9 प्रतिशत थी, जो 2023 के नवीनतम सर्वेक्षण में बढ़कर 69.2 प्रतिशत तक पहुँच गई है। इसका अर्थ है कि एक दशक में लगभग 10 प्रतिशत

अंक की वृद्धि दर्ज की गई है। परंतु यह वृद्धि असमान है शहरी क्षेत्रों में महिला साक्षरता 78 प्रतिशत जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में केवल 66 प्रतिशत तक सीमित है।
महिला शिक्षा की स्थिति को और स्पष्ट रूप से समझने के लिए नीचे दी गई सारिणी उपयोगी है

सारणी सं0 2.5 बलिया जिले में महिला शिक्षा की स्थिति

श्रेणी	**साक्षरता दर (%)**	**प्रमुख क्षेत्र**	**स्रोत**
ग्रामीण महिला साक्षरता	66.0	**प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय**	**बलिया जिला शिक्षा विभाग**, 2023
शहरी महिला साक्षरता	78.1	**कॉलेज, व्यावसायिक संस्थान**	NSSO, 2023
कुल महिला साक्षरता	**69.2**	—	—
पुरुष साक्षरता दर	**82.4**	—	—
लिंगानुपातिक अंतर	**13.2**	—	—

बलिया में शिक्षा का प्रसार होने के बावजूद, बालिकाओं की उच्च शिक्षा में भागीदारी अभी भी सीमित है। इंटरमीडिएट स्तर तक नामांकन का प्रतिशत लगभग 68 प्रतिशत है, जबकि स्नातक स्तर पर यह घटकर 34 प्रतिशत रह जाता है। इसके प्रमुख कारणों में सामाजिक परंपराएँ, प्रारंभिक विवाह, आर्थिक निर्भरता, और सुरक्षा संबंधी आशंकाएँ शामिल हैं।

फिर भी पिछले एक दशक में कई सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। सरकार की "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ", "कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय योजना", और "राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान" जैसी योजनाओं ने बालिका शिक्षा के प्रसार में ठोस योगदान दिया है। बलिया जिले में 7 कस्तूरबा गांधी आवासीय बालिका विद्यालय संचालित हैं, जहाँ लगभग 3,200 बालिकाएँ शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। इसके अतिरिक्त, "सुकन्या समृद्धि योजना" और "पोशक सहायता योजना" जैसी पहलें अभिभावकों को बालिका शिक्षा के प्रति प्रोत्साहित कर रही हैं।

महिला शिक्षा केवल साक्षरता तक सीमित नहीं है; यह समाज में समानता और आत्मनिर्भरता की चेतना जगाने का माध्यम भी है। शिक्षित महिला न केवल अपने परिवार के स्वास्थ्य, शिक्षा और पोषण का ध्यान बेहतर ढंग से रखती है, बल्कि वह

सामाजिक निर्णयों में भी सक्रिय भूमिका निभाती है। बलिया जिले में किए गए एक स्थानीय सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, साक्षर महिलाओं में 64 प्रतिशत महिलाएँ पंचायत बैठकों या ग्राम सभाओं में भाग लेती हैं, जबकि अशिक्षित महिलाओं में यह अनुपात मात्र 18 प्रतिशत है।

साक्षरता का सीधा प्रभाव महिला श्रम भागीदारी और उद्यमिता पर भी पड़ता है। शिक्षा प्राप्त महिलाएँ स्वरोजगार और उद्यमिता के क्षेत्र में अधिक सक्रिय होती हैं। बलिया में महिला स्वंय सहायता समूहों की सदस्यता में 2020 से 2023 के बीच 26 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है, जिसका सीधा संबंध महिलाओं की शिक्षा से है।

महिला साक्षरता को प्रभावित करने वाले प्रमुख सामाजिक अवरोधों में गरीबी, सामाजिक परंपराएँ, परिवहन की कमी, और बाल विवाह प्रमुख हैं। अभी भी ग्रामीण परिवारों में कई अभिभावक यह मानते हैं कि उच्च शिक्षा बालिका के विवाह में "बाधा" बन सकती है। दूसरी ओर, शिक्षण संस्थानों में महिला शिक्षकों की कमी और सुरक्षित आवागमन की समस्या भी बालिका शिक्षा को प्रभावित करती है।

बलिया जिले में उच्च शिक्षा के लिए सीमित संस्थान होने के बावजूद, कई बालिकाएँ अब नजदीकी जनपदों जैसे वाराणसी, गाज़ीपुर या पटना तक जाकर स्नातक और व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। यह परिवर्तन दर्शाता है कि अब परिवारों में शिक्षा को लेकर दृष्टिकोण धीरे–धीरे सकारात्मक हो रहा है।

महिला साक्षरता बढ़ाने में डिजिटल शिक्षा की भूमिका भी उल्लेखनीय रही है। कोविड–19 महामारी के दौरान ऑनलाइन शिक्षा के प्रसार ने ग्रामीण बालिकाओं को नए अवसर प्रदान किए। बलिया जिले में "डिजिटल सखी प्रोग्राम" के अंतर्गत 2023 तक लगभग 1,500 युवतियों को डिजिटल साक्षरता का प्रशिक्षण दिया गया। इससे कई बालिकाओं ने ऑनलाइन लर्निंग, ई–कॉमर्स और डिजिटल भुगतान जैसे कौशल हासिल किए।

साक्षरता के सामाजिक प्रभाव को यदि व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो यह पाया जाता है कि जहाँ महिला साक्षरता दर अधिक होती है, वहाँ जनसंख्या वृद्धि दर, बाल विवाह की दर, और मातृ मृत्यु दर में कमी आती है। उदाहरण के लिए, बलिया में साक्षर महिलाओं के परिवारों में औसत बाल संख्या 2.1 है, जबकि अशिक्षित

महिलाओं में यह 3.6 तक पहुँच जाती है। इसी प्रकार साक्षर महिलाओं में मातृ मृत्यु दर 146 प्रति लाख जीवित जन्म, जबकि अशिक्षित महिलाओं में यह 212 दर्ज की गई है (जिला स्वास्थ्य विभाग, 2023)।

2.6 ग्रामीण न्याय, SHG, और महिला स्वयं सहायताग्रामीण

भारत में महिला न्याय और स्व–सहायता मॉडल के प्रभाव को देखना वस्तुतः सामाजिक परिवर्तन की जड़ी को समझने जैसा है। महिला स्वयं सहायता समूह ने न केवल आर्थिक मोर्चे पर, बल्कि सामाजिक और कानूनी स्तर पर भी ग्रामीण महिलाओं को नई पहचान दी है। माइक्रोफाइनेंस और आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत, हजारों ग्रामीण महिलाओं को जीविका, बचत, लघु उद्यम, और ऋण की सुविधा मिली। इससे वे पारंपरिक सीमाओं को तोड़कर अपने परिवार और समुदाय में निर्णयकर्ता और आर्थिक उपलब्धि के रूप में उभर पाई हैं। महिला स्वयं सहायता समूह का संघटन महिलाओं को सामूहिकता और नेतृत्व की समझ देता है, जिससे वे निजी और सामाजिक समस्याओं का समाधान स्वयं खोजती हैं।

न्याय तक पहुँच के लिए महिला लोक अदालतों, वन–स्टॉप सेंटर, और सखी केंद्रों के मॉडल ने दिशा दी है। महिला लोक अदालतें स्थानीय भाषा और सरल प्रक्रिया में अपनी बात रखने के अवसर देती हैं, जिससे कानूनी दहलीज की कठिनाई कम होती है। वन–स्टॉप सेंटर की स्थापना पीड़ित महिलाओं को तत्काल चिकित्सा, परामर्श, पुलिस सहायता और कानूनी सलाह जैसे समेकित सेवाएँ उपलब्ध कराती है। न्याय की प्रक्रिया को सरल, अनौपचारिक और संबद्ध बनाना, वास्तव में ग्रामीण महिलाओं के लिए बदलावपूर्ण है।

फिर भी इस उपलब्धि के बीच बड़े अवरोध हैं। कानूनी साक्षरता आज भी बेहद निम्न है ग्रामीण महिलाओं का बड़ा हिस्सा अपने अधिकार, संस्थागत सहायता, या कानूनी उपायों की जानकारी से वंचित रहता है। इसी प्रकार, सामाजिक और पारिवारिक दबाव महिलाओं को न्याय प्राप्त करने की इच्छा से रोके रहते हैं; बदनामी, परिवार की इज्जत, और सामाजिक कलंक की चिंता उन्हें शिकायत दर्ज करने से पीछे हटाती है।

संक्षेप में, महिला स्वयं सहायता समूह, माइक्रोफाइनेंस और आत्मनिर्भर भारत अभियान ने ग्रामीण महिलाओं के जीवन में बदलाव की बुनियाद रखी है। महिला लोक अदालतें, वन–स्टॉप सेंटर तथा सखी केंद्रों जैसे न्याय मॉडल उनके लिए नये द्वार खोल रहे हैं। लेकिन, अभी भी कानूनी साक्षरता की अल्पता व सामाजिक बाधाओं की दृढ़ता ग्रामीण महिला न्याय की पूरी उपलब्धि को सीमित करती है। अतः व्यापक बदलाव के लिए नीतिगत समर्थन, निरंतर शिक्षा, और सामाजिक मानसिकता में आमूलचूल परिवर्तन अनिवार्य है।

सारणी सं0 2.6 महिला स्वयं सहायता समूह

राज्य	कुल SHGs (लाख)	महिला समूहों का प्रतिशत	औसत वार्षिक ऋण (करोड़ ₹)	लाभार्थी महिलाओं की संख्या (लाख)
उत्तर प्रदेश	**5.1**	**94%**	**325**	**76**
बिहार	**4.8**	**97%**	**295**	**68**
पश्चिम बंगाल	**4.2**	**92%**	**270**	**62**
महाराष्ट्र	**3.4**	**89%**	**205**	**51**
ओडिशा	**2.9**	**95%**	**180**	**38**
तमिलनाडु	**2.7**	**88%**	**175**	**36**
कुल भारत	**43.5**	**92%**	**2940**	**505**

सारणी सं0 2.7 कुल केन्द्र

मॉडल	कुल केंद्र	प्रमुख राज्यों में संख्या	वार्षिक लाभार्थी महिलाएँ (हजार)
महिला लोक अदालतें	**1475**	यूपी, बिहार, एमपी, राजस्थान	**388**
वन-स्टॉप सेंटर	**733**	महाराष्ट्र, दिल्ली, केरल	**206**
सखी केंद्र	**260**	उत्तराखंड, असम, ओडिशा	**74**

सारणी सं0 2.8 कानूनी साक्षरता

राज्य	कानूनी साक्षरता (%)	SHG के माध्यम से सशक्त महिलाएँ (%)
उत्तर प्रदेश	21	61
बिहार	18	58
ओडिशा	26	64
राजस्थान	19	55
महाराष्ट्र	33	71
तमिलनाडु	36	73

2.7 महिलाओं के मानवाधिकार

महिलाओं के अधिकार मानवाधिकार है, न्याय और समानता के लिए महिलाओं का संघर्ष मानव अधिकारों के इतिहास में सबसे लंबे संघर्षो में से एक है। हालाँकि काफी प्रगति हुई है, फिर भी दुनिया के कुछ हिस्सों में संघर्ष खत्म नहीं हुआ है। लड़के और लड़कियाँ एक समान पैदा होते हैं। जैसे–जैसे वे बड़े होते हैं उनमें असमानता आ जाती है। कारण कई है, जिनमें इतिहास, धर्म और संस्कृति सभी भूमिका निभाते हैं। प्राचीन विश्व में महिलाओं के साथ संपत्ति के समान व्यवहार किया जाता था। इन्हे खरीदा या बेचा जा सकता था। महिलाओं को उनके लिए चुने गए पुरुषों से शादी करनी पड़ती थी। उनका कोई कानूनी व्यक्तित्व नहीं था। वे संपत्ति के मालिक नहीं हो सकती थी। उन्हें घूमने, फिरने की कोई आजादी नहीं थी। इसलिए पुरुषों द्वारा महिलायों पर अत्याचार एक ऐसी बुराई है। जिसकी जड़े प्राचीन हैं।

धर्म ने आमतौर पर उन सिद्धांतो और सिद्धांतों के साथ लैंगिक असमानता को मजबूत किया है, जो महिलाओं को पुरुषों के अधीन करते हैं। कुछ इसाई संप्रदाय महिलाओं को पुरोहिती या नेतृत्व के पदों से रोकते हैं। इस्लाम में महिलाओं को सार्वजनिक प्रार्थना पर प्रतिबंध का सामना करना पड़ता है। कुछ बोध ग्रंथो के अनुसार, महिलाएं पहले पुरुष के रूप में पुनर्जन्म लेकर ही बुद्धत्व प्राप्त कर सकती

हैं। हिंदू साहित्य में महिलाओं को कमजोर, पापी और गैर–जिम्मेदार के रूप में नकारात्मक रूप से चित्रित किया गया है। दो धर्म जो पुरुष और महिलाओं के साथ समान व्यवहार करते हैं वे हैं सिख धर्म और बहाई धर्म। कन्फ्यूशियस ने सिखाया कि एक बेटी को अपने पिता, एक पत्नी को अपने पति और एक विधवा को अपने बेटे की आज्ञा का पालन करना चाहिए। कन्फ्यूशीवाद का एशिया में महिलाओं की स्थिति पर हानिकारक प्रभाव पड़ा है क्योंकि यह पूर्वोत्तर और दक्षिण पूर्व एशिया में महिलाओं के प्रति पुरुषों के व्यवहार को प्रभावित करता रहा है। कन्फ्यूशियस की पुरुषवादी शिक्षाएं ही वह कारण हो सकती है जिसके कारण एशिया के इन हिस्सों के समाजों में प्रजनन दर इतनी कम है।

घरेलू दृष्टिकोण को दर्शाते हुए महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण अज्ञानपूर्ण था। प्रोफेसर एलाइन पोंग ने अपनी पुस्तक, वीमेन इन मॉडर्न सिंगापुर में, औपनिवेशिक सिंगापुर की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है। सिंगापुर में प्रमुख जातीय समुदायों की सांस्कृतिक परंपराएं महिला की तुलना में पुरुष को अधिक महत्व देती है। चाहे वह चीनी, भारतीय या मलय के रूप में पैदा हुई हो एक महिला को पत्नी और मां की भूमिकाओं के अनुरूप होने और एकांत जीवन जीने के लिए सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक दबाव का सामना करना पड़ता था। हालांकि शिरीन फोजदार, सियो पेक लेंग और में वोंग जैसे कई महिला नेताओं ने बहुविवाह को खत्म करने के लिए ब्रिटिश गवर्नर और ब्रिटिश संसद में याचिका दायर की थी, लेकिन उनकी याचिका खारिज कर दी गई थी। चीनी पुरुष जितनी चाहें उतनी पत्नियाँ और रखैले रखने के लिए स्वतंत्र थे। ब्रिटिश शासन के दौरान महिलाओं को निम्न दर्जा प्राप्त था। 1877 में ब्रिटिश सरकार ने चीनी संरक्षित राज्य की स्थापना की। इसका उद्देश्य चीनी समुदाय की जरूरतों का ख्याल रखना था। अपने श्रेय के लिए, संरक्षित राज्य ने वेश्यावृत्ति के लिए महिलाओं और लड़कियों की तस्करी की समस्या से निपटने का प्रयास किया। उन्होंने यह भी सुनिश्चत करने का प्रयास किया की युवा लड़कियों को मुईत्साई के रूप में अमीर परिवारों को बेचना गुलामी का एक रूप नहीं था।

1961 का महिला चार्टर : अपने शुरुआती दिनों में, पीपुल्स एक्शन पार्टी (पीएपी) एक क्रांतिकारी पार्टी थी। 1959 में इसने एक आदमी, एक पत्नी की नीति के लिए अभियान चलाया। 1961 में सिंगापुर सरकार ने महिला चार्टर लागू किया। सिंगापुर में महिलाओं के लिए यह मैग्ना कारटा से कम नहीं था।

1) इसने सभी गैर–मुस्लिम पुरुषों के लिए बहुविवाह को समाप्त कर दिया और यह आवश्यक किया कि भविष्य में होने वाली सभी शादियों को पंजीकृत किया जाए।

2) एक विवाहित महिला अपने नाम का उपयोग जारी रख सकती है।

3) विवाह में पति और पत्नी को समान भागीदार माना जाता था।

4) महिलाओं को संपत्ति रखने, खरीदने और बेचने का अधिकार था।

5) चार्टर विवाह और तलाक से संबंधित मामलों से महिलाओं के अधिकरों की रक्षा करता है।

6) पत्नी के वैवाहिक संपत्ति, भरण.पोषण और बच्चों की अभिरक्षा के अधिकार की भी रक्षा करता है।

पीएपी और महिलाएं – पीएपी में चौन चॉय सिओंग जैसी कई महिला नेता थीं। यह एक महिला समर्थक पार्टी थी। पीएपी के नेतृत्व में अब कोई महिला नहीं थी। पार्टी अपने मूल से भटक गई और महिला विरोधी पार्टी बन गई। इस बात के समर्थन में तीन उदाहरण हैं –

1) मेडिकल स्कूल में महिलाओं के लिए कोटा– 1979 में, स्वास्थ्य मंत्री डॉ० तोहचिनव्ये ने घोषणा की कि महिलाओं को मेडिकल स्कूल में एक तिहाई प्रवेश तक सीमित रखा जाएगा। महिलाओं के प्रति यह अनुचित भेदभाव 2003 में ही समाप्त किया गया।

2) पुरुष छात्रों के लिए कम प्रवेश आवश्यकताएँ– 1983 में, नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर ने पुरुष छात्रों के लिए अपनी प्रवेश आवश्यकताओं को संशोधित किया। क्यों? ताकि महिलाओं के पक्ष में लिंगानुपात में किसी भी प्रकार के असंतुलन को रोका जा सके। इस भेदभाव के औचित्य में बोलते हुए, एनयूएस अध्यक्ष, प्रोफेसर लिम पिन ने कहा कि विश्वविधालय में लिंग असंतुलन केवल अविवाहित स्नातक महिलाओं की समस्या को बढ़ाएगा ।

3) गृह अर्थशास्त्र लड़को के लिए नहीं – 1984 में, शिक्षा मंत्रालय ने सभी माध्यमिक लड़कियों को तकनीकी अध्ययन लेने से रोक दिया। अब से, सभी लड़कियों को गृह अर्थशास्त्र का अध्ययन करना था और लड़को को तकनीकी अध्ययन करना था।

संयुक्त राष्ट्र का सकारात्मक प्रभाव – कुछ मूर्ख लोग सोचते हैं कि संयुक्त राष्ट्र के बिना दुनिया बेहतर होगी। संयुक्त राष्ट्र के बिना, हमारे पास मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा, नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर संधि, सामाजिक, आर्थिक या सांस्कृतिक अधिकारों पर संधि और सबसे महत्वपूर्ण बात, महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन नहीं होता।

CEDAW को 1979 में अपनाया गया और 1981 में लागू हुआ। सिंगापुर 1995 में कन्वेंशन का एक पक्ष बन गया। CEDAW के अनुच्छेद 16 में सभी राज्य दलों को विवाह और पारिवारिक मामलों से संबोधित सभी मामलों में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को खत्म करने की आवश्यकता है।

अन्य प्रयास –

महिलाओं की दशा सुधारने हेतु भारत सरकार द्वारा सन 1985 में महिला एवं बाल विकास विभाग की स्थापना तथा 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई तथा देश में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा । भारत सरकार द्वारा वर्ष 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष भी घोषित किया गया।

इसी प्रकार विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन सरकार द्वारा समय≤ पर किया गया है। जिनमें प्रमुख है दृ बालिका समृद्धि योजना, किशोरी शक्ति योजना, बालिका बचाओ योजना, इंदिरा महिला योजना, सरस्वती सायकल योजना, स्वंयसिद्धा योजना, महिला समाख्या इत्यादि।

महिलाओं को प्रदान अधिकारों एवं उनके लिए बनाए गए अधिनियमों के बाद भी महिलाओं की स्थिति सोचनीय है। महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को रोकने के लिए पर्याप्त अधिनियम है, जिनके बाद भी महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं हो पा रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात से वर्तमान तक विभिन्न अधिनियम, विवाह–विच्छेद व तलाक अधिनियम, वेश्यावृत्ति उन्मूलन अधिनियम, गर्भपात की चिकित्सा द्वारा मान्यता

जैसे प्रमुख सुधारों से महिलाओं की सामाजिक स्थिति में पर्याप्त अंतर आया है, फिर भी बहुत सी कमियाँ है, जिनकी वजह से इन कानूनों का लाभ महिलाएं नहीं उठा पाती–

1) पूरे देश में महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों का विश्लेषण करे तो स्पष्ट है कि अधिकांश मामलों में रिपोर्ट ही दर्ज नहीं करवाए जाते। चाहे पारिवारिक दबाव हो या सामाजिक दबाव जिसके चलते बहुत सी घटनायें परिवार की चारदीवारी में ही सिमट कर रह जाती है।

2) महिलाओं के उत्थान एवं संरक्षण के लिए पर्याप्त कानून एवं अधिनियम हैं। किंतु लोगों को विशेषकर महिलाओं को कानूनों एवं अधिकारों का पर्याप्त ज्ञान ही नहीं है, अतः ऐसे कानूनों का पर्याप्त प्रचार–प्रसार या जानकारी समय$\leq$ पर महिलाओं को प्रदान की जानी चाहिए।

3) घरेलू हिंसा से संबंधित मामलों में महिलाएँ आगे नहीं आती, यदि पीड़ित महिलाएं ऐसे घटनाओं के विरुद्ध आवाज उठाना भी चाहे तो समाज में इसे उचित नहीं माना जाता। ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए कानून व सरकार के साथ समाज को भी अपनी उचित भूमिका निर्वहन करना चाहिए।

4) देश में कुल मतदाताओं में आधी संख्या महिलाओं की है मगर इसके बावजूद भी लोकसभा तथा राज्य विधान मंडलो में उनका प्रतिनिधित्व घोर निराशाजनक है। अतः राजनीति में भी महिलाओं को अपनी भागीदारी करनी चाहिए।

5) भाँ०द०स० की धारा 498, के अंतर्गत विवाहित महिला पर सभी अत्याचार अपराध है, किंत इसे व्यवहार में दहेज प्रताड़ना से जोड़ दिया जाता है, जो कि उचित नहीं है। क्योंकि महिलाएँ फौजदारी मुकदमा के लिए हिम्मत नहीं जुटा पाती और साथ ही उनको घरों से निकाले जाने का भी डर रहता है।

6) लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाएँ प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती है। विकासशील देशों की लोकतांत्रिक संस्थाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व उनकी संख्या के अनुपात में नहीं है।

7) महिलाओं में साक्षरता के दर भी काफी कम है। आंकडो से स्पष्ट है कि 66 पुरुषों की तुलना में सिर्फ 39 महिलाऐं ही शिक्षित है। शिक्षा का इतना कम प्रतिशत भी महिलाओं के लिए प्रति अत्याचार का कारण है।

8) महिलाओं की स्थिति सुधारने में गैर–सरकारी संगठन अधिक प्रभावशाली भूमिका निभा सकते है, साथ ही उत्पीड़ित महिलाओ को सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनो द्वारा पर्याप्त दी जानी चाहिए तथा महिलाओं के लिए स्वरोजगार योजनाओं आदि को भी पर्याप्त महत्व दिया जाए।

सामान्य सिफारिस संख्या 1 (पाँचवाँ सत्र, 1986) –

कन्वेंशन के अनुच्छेद 18 के तहत प्रस्तुत प्रारम्भिक रिपोर्ट में प्रस्तुति की तारीख तक की स्थिति को शामिल किया जाना चाहिए। इसके बाद, पहली रिर्पोट आने के बाद कम से कम हर चार साल में रिपोर्ट प्रस्तुत की जानी चाहिए। और इसमें कन्वेंशन को पूरी तरह से लागू करने में आने वाली बाधाओं और ऐसी बाधाओं को दूर करने के लिए अपनाए गए उपायों को शामिल किया जाना चाहिए।

सामान्य अनुशंसा संख्या 2(छठा सत्र, 1987) –

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति यह ध्यान में रखते हुए कि समिति को अपने काम में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा क्योंकि कन्वेंशन के अनुच्छेद 18 के तहत राज्यों की पार्टियों की कुछ प्रारम्भिक रिर्पोट दिशानिर्देशो के अनुसार संबंधित राज्य पार्टी में उपलब्ध जानकारी को पर्याप्त रूप से प्रतिबिम्बित नहीं करती थी।

सिफारिश –

1) कन्वेशन के अनुच्छेद 18 के तहत रिपोर्ट तैयार करने में राज्यों की पार्टियों को रिपोर्ट के रूप, सामग्री और तारीख के संबंध में अगस्त 1983 में अपनाए गए सामान्य दिशानिर्देशो का पालन करना चाहिए।

2) राज्यों की पार्टियों को 1986 में इन शर्तो में अपनाई गई सामान्य सिफारिश का पालन करना चाहिए। कन्वेंशन के अनुच्छेद 18 के तहत प्रस्तुत प्रारंभिक रिपोर्ट में प्रस्तुत करने की तारीख तक की स्थिति को शामिल किया जाना चाहिए। इसके बाद पहली रिपोर्ट आने के बाद कम से कम हर चार लाल में रिपोर्ट प्रस्तुत की जानी

चाहिए और इसमें कन्वेंशन को पूरी तरह से लागू करने में आने वाली बाधाओं को शामिल किया जाना चाहिए।

3) किसी राज्य पार्टी की रिपोर्ट की पूरक अतिरिक्त जानकारी उस सत्र से कम से कम तीन महीने पहले सचिवालय को भेजी जानी चाहिए। जिसमें रिपोर्ट पर विचार किया जाना है।

सामान्य अनुशंसा संख्या 3 (छठा सत्र, 1987)

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति यह ध्यान में रखते हुएकि महिलाओं के खिलाफ भेदभाव उन्मूलन समिति ने 1983 से राज्यों की पार्टियों की 34 रिपोर्टों पर विचार किया है।इसके अलावा इस बात पर विचार करते हुए कि हालांकि रिपोर्ट विकास के विभिन्न स्तरों वाले राज्यों से आई है, ये सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों के कारण महिलाओं कि रूढ़िवादी अवधारणाओं के अस्तित्व को दर्शाने वाली अलग–अलग डिग्री में विशेषताएं प्रस्तुत करती है, जो लिंग के आधार पर भेदभाव को कायम रखती हैं और कार्यान्वयन में बाधा डालती हैं। कन्वेंशन का अनुच्छेद 51 सभी राज्यों की पार्टियों से शिक्षा और सार्वजनिक सूचना कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से अपनाने का आग्रह करता हूँ, जो महिलाओं की सामाजिक समानता के सिद्धान्त के पूर्ण संचालन में बाधा डालने वाले पूर्वाग्रहों और मौजूदा प्रथाओं को खत्म करने में मदद करेगा।

सामान्य अनुशंसा संख्या 4 (छठा सत्र 1987)

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति, इसके सत्रों में राज्यों की पार्टियों की रिपोर्टो की जांच करने के बाद कन्वेंशन के उद्देश्य और उद्देश्यों के साथ असंगत प्रतीत होने वाले आरक्षणों की महत्वपूर्ण संख्या के संबंध में चिंता व्यक्त करते हुए। 1988 में न्यूयार्क में अपनी अगली बैठक में आरक्षण पर विचार करने के लिए राज्यों की पार्टियों के निर्णय का स्वागत करता है और अंत में सुझाव देता है कि संबंधित राज्य की सभी पार्टियां ऐसे आरक्षणों को वापस लेने की दृष्टि से पुनर्विचार करें।

सामान्य सिफारिश संख्या 5 (सांतवाँ सत्र, 1988)

अस्थायी विशेष उपाय

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति –

इस बात पर ध्यान देते हुए कि रिपोर्टों परित्यात्मक टिप्पणियों और राज्यों की पार्टियों के उत्तरों से पता चलता है कि भेदभावपूर्ण कानूनों को निरस्त या संशोधित करने के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रगति हासिल की गई है फिर भी आर्यो को पेश करके कन्वेंशन को पूरी तरह से लागू करने के लिए कार्रवाई करने की आवश्यकता है।

कन्वेंशन के अनुच्छेद 41 को याद करते हुए, अनुशंसा करता है कि राज्यों की पार्टियां शिक्षा, अर्थ व्यवस्था, राजनीति और रोजगार में महिलाओं को आगे बढ़ाने के लिए सकारात्मक, कार्रवाई, अधिमान्ध उपचार या कोटा प्रणाली जैसे अस्थायी विशेष उपायों का अधिक उपयोग करें।

सामान्य सिफारिश संख्या 6 (सांतवाँ सत्र 1988)

प्रभावी राष्ट्रीय मशीनरी और प्रचार

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के राज्यों की पार्टियों की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद।

30 नवम्बर 1987 के संयुक्त राष्ट्र महासभा संकल्प 42 को ध्यान में रखते हुए सिफारिश करता है कि राज्यों की पार्टियां–

1) सरकार के उच्च स्तर पर और पर्याप्त संसाधनों और अधिकार के साथ प्रभावी राष्ट्रीय मशीनरी संस्थानों और प्रक्रियाओं को स्थापित और मजबूत करें।

अ) सभी सरकारी नीतियों के महिलाओं के प्रभाव पर सलाह देना।

ब) महिलाओं की स्थिति व्यापक निगरानी करें।

स) नई नीतियां बनाने और भेदभाव को खत्म करने के लिए राज्यनीतियों और उपायों को प्रभावी ढंग से लागू करने में मदद करना।

2) कन्वेंशन अनुच्छेद 18 के तहत राज्यों की पार्टियों की रिपोर्ट और सम्बंधित राज्यों की भाषा में समिति की रिपोर्ट का प्रसार सुनिश्चित करने के लिए उचित कदम उठाएं।

3) कन्वेंशन और समिति की रिपोर्ट का अनुवाद प्रदान करने में महासचिव और सार्वजनिक सूचना विभाग की सहायता लें।

4) इस अनुशंसा के संबंध में की गई कार्रवाई को अपनी प्रारम्भिक और आवधिक रिपोर्ट में शामिल करें।

सामान्य सिफारिश संख्या – 7 (सातवाँ सत्र 1988)

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति–

महासभा के संकल्प 40/39, 41/108 और विशेष रूप से 42/60, पैराग्राफ 14 को नोट करते हुए जिसने समिति और राज्यों की पार्टियों को वियना में समिति के भविष्य के सत्र आयोजित करने के प्रश्न पर विचार करने के लिए आमंत्रित किया।

संकल्प 42ध105 और विशेष रूप से पैराग्राफ को ध्यान में रखते हुए, जो कार्यान्वयन के संबंध में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार केंद्र और सचिवालय के सामाजिक विकास और मानवीय मामलों के केंद्र के बीच समन्वय को मजबूत करने का अनुरोध करता है। मानवाधिकार साथियों और सेवा संधि निकायों की।

राज्यों की पार्टियों को सिफारिशें –

1) कि वे समिति की सेवा के संबंध में जिनेवा में मानवाधिकार केन्द्र और वियना में सामाजिक विकास और मानवीय मामलों के केंद्र के बीच समन्वय को मजबूत करने के प्रस्तावों का समर्थन करना जारी रखेंगे।

2) वे उन प्रस्तावों का समर्थन करते हैं जिनकी समिति, न्यूयॉर्क और वियना में बैठक करती है।

3) वे यह सुनिश्चित करने के लिए सभी आवश्यक और उचित कदम उठाते हैं कि कन्वेंशन के तहत अपने कार्यों में सहायता के लिए समिति को पर्याप्त संसाधन और

सेवाएँ उपलब्ध है और विशेष रूप से पूर्णकालिक कर्मचारी समिति को उसके क्षेत्रों की तैयारी में मदद करने के लिए उपलब्ध है और इसके सत्र के दौरान–

4) वे यह सुनिश्चत करते हैं कि पूरक रिपोर्ट और सामग्री समिति द्वारा विवरण और विचार के लिए समय पर संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषाओं में अनुवादित करने के लिए सचिवालय को प्रस्तुत की जाती है।

सामान्य सिफारिश संख्या 8 (सांतवां सत्र 1988)

कन्वेंशन के अनुच्छेद 8 का कार्यान्वयन

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – कन्वेन्शन के अनुच्छेद 18 के अनुसार प्रस्तुत राज्यों की पार्टियों की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद। अनुशंसा करता है कि कन्वेंशन के अनुच्छेद 8 के पूर्ण कार्यान्वय को सुनिश्चत करने और महिलाओं को पुरुषों के साथ समान शर्तों पर और बिना किसी भेदभाव के अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी सरकार का प्रतिनिधित्व करने के अवसरों को सुनिश्चत करने के लिए राज्यों की पार्टिया कन्वेंशव के अनुच्छेद 4 के अनुसार आगे प्रत्यक्ष उपाय करें। स्तर और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के काम में भाग लेना।

सामान्य अनुशंसा संख्या 9 (आठवां सत्र, 1989)

महिलाओं की स्थिति से संबंधित सांख्यिकीय आँकड़े

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति– यह ध्यान में रखते हुए कि कन्वेंशन के प्रत्येक राज्य पक्ष में महिलाओं की वास्तविक स्थिति को समझने के लिए सांख्यिकीय जानकारी नितांत आवश्यक है। यह देखने के बाद कि राज्यों की कई पार्टियाँ जो समिति के विचारार्थ अपनी रिपोर्ट में प्रस्तुत करती है और अनुशंसा करता है कि राज्यों की पार्टियों को यह सुनिश्चित करने के लिए हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। कि राष्ट्रीय जनगणना और अन्य सामाजिक और आर्थिक सर्वेक्षणों की योजना बनाने के लिए जिम्मेदार उनकी राष्ट्रीय सांख्यकीय सेवाएं अपनी प्रश्नावली इस तरह से तैयार करें कि लिंग के अनुसार डेटा को पूर्ण संख्या और प्रतिशत दोनों के संबंध

में अलग किया जा सके। ताकि इच्छुक उपयोगकर्ता उस विशेष क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति के बारे में आसानी से जानकारी प्राप्त कर सकें जिसमें उनकी रूचि है।

सामान्य अनुशंसा संख्या 10 (आठवां सत्र 1989)

महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन को अपनाने की दसवीं वर्षगांठ

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – यह ध्यान में रखते हुए कि 18 दिसम्बर 1989 महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन को अपनाने की दसवीं वर्षगांठ है, इस बात पर विचार करते हुए कि 10 वर्षों में कन्वेंशन सबसे प्रभावी उपकरणों में से एक साबित हुआ है जिसे संयुक्त शब्द ने अपने राज्यों के सदस्यों में लिंगों के बीच समानता को बढ़ावा देने के लिए अपनाया है ।

प्रभावी राष्ट्रीय मशीनरी और प्रचार पर सामान्य अनुशंसा संख्या 6 (सातवाँ सत्र 1988) को याद करते हुए, अनुशंसा कर्ता है कि, कन्वेंशन को अपनाने की दसवीं वर्षगांठ के अवसर पर राज्यों की पार्टियों को इस पर विचार करना चाहिए।

1) महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेद–भाव के उन्मूलन पर कन्वेन्शन को मुख्य भाषाओ में प्रचारित करने के लिए सम्मेलन और सेमिनार सहित कार्यक्रम चलाना और अपने–अपने देशों में कन्वेंशन पर जानकारी प्रदान करना।

2) कन्वेंशन और इसके कार्यान्वयन के संबंध में प्रचार अभियानों में सहयोग करने के लिए अपने राष्ट्रीय महिला संगठनों को आमंत्रित करना और राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गैर–सरकारी संगठनों को कन्वेंशन और इसके कार्यान्वयन को प्रचारित करने के लिए प्रोत्साहित करना।

3) कन्वेंशन के सिद्धान्तों और विशेष रूप से अनुच्छेद 8 के पूर्ण कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए कार्रवाई को प्रोत्साहित करना, जो संयुक्त राष्ट्र और संयुक्त राष्ट्र प्रणाली की गतिविधि के सभी स्तरों पर महिलाओं के भागीदारी से संबंधित है।

4) संयुक्त राष्ट्र की सभी अधिकारिक भाषाओं में कन्वेंशन और इसके कार्यान्वयन के संबंध में विशेष एजेंसियों के सहयोग से, मुद्रित और अन्य साम्रागियों को प्रकाशित और प्रसारित करके कन्वेंशन को अपनाने की दसवीं वर्ष गांठ मनाने के लिए

महासचिव से अनुरोध करना। कन्वेंशन के बारे में टेलीविजन वृत्तचित्र तैयार करना, और वियना में संयुक्त राष्ट्र कार्यालय के सामाजिक विकास और मानवीय मामलों के केंद्र, महिलाओं की उन्नति के लिए प्रभाग को आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराना, ताकि राज्यों की पार्टियों द्वारा प्रदान की गई जानकारी का विश्लेषण तैयार किया जा सके। समिति की रिपोर्ट को अघतन एवं प्रकाशित करने का आदेश(ए/सीओएनएफ, 11613), जिसे पहली बार 1985 में नैरोबी में आयोजित महिलाओं के लिए संयुक्त राष्ट्र दशक की उपलब्धियों की समीक्षा और मूल्यांकन के लिए विश्व सम्मेलन समानता, विकास और शांति के लिए प्रकाशित किया गया था।

सामान्य अनुशंसा संख्या 11 (आठवां सत्र, 1989)

रिपोर्टिंग दायित्वों के लिए तकनीकी सलाहकार सेवाएँ

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – इस बात को ध्यान में रखते हुए कि, 3 मार्च 1989 को 96 राज्यों ने महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन की पुष्टि की थी, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उस तिथि तक 60 प्रारम्भिक और 19 सेकण्ड की आवधिक रिपोर्ट प्राप्त हो चुकी थी, यह ध्यान में रखते हुए कि 36 प्रारम्भिक और 36 दूसरी आवधिक रिपोर्ट 3 मार्च 1989 तक आती थी और अभी तक प्राप्त नहीं हुई थी, महासभा संकल्प 115, पैराग्राफ 9 में अनुरोध का स्वागत करते हुए, कि महासचिव को मौजूदा संसाधनों के भीतर और सलाहकार सेवाओं के कार्यक्रम की प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए, उन देशों के लिए आगे के प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की व्यवस्था करनी चाहिए जो सबसे गंभीर कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। मानवाधिकारों पर अंतरर्राष्ट्रीय उपकरणों के तहत अपने रिपोर्टिंग दायित्वों को पूरा करना, राज्यों की पार्टियों की अनुशंसा करता है कि उन्हें कन्वेंशन के अनुच्छेद 18 के तहत अपने रिपोर्टिंग दायित्वों को पूरा करने में राज्यों की पार्टियों को उनके अनुरोध पर सहायता करने के लिए प्रशिक्षण सेमिनार सहित तकनीकी सलाहकार सेवाओं के लिए परियोजनाओं में प्रोत्साहित, समर्थन और सध्योग करना चाहिए।

सामान्य अनुशंसा संख्या 12 (आठवां सत्र, 1989)

महिला के विरुद्ध क्रूरता

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – यह ध्यान में रखाते हुए कि कन्वेंशन के अनुच्छेद 2,5,11,12 और 16 में राज्यों की पार्टियों को परिवार के भीतर, कार्यस्थल पर या सामाजिक जीवन के किसी अन्य क्षेत्र में होने वाली किसी भी प्रकार की हिंसा के खिलाफ महिलाओं की सुरक्षा के लिए कार्य करने की आवश्यकता है। आर्थिक और सामाजिक परिषद संकल्प 1988ध्27 को ध्यान में रखते हुए, राज्यों की पार्टियों को अनुशंसा करता है कि उन्हें समिति को अपनी आवधिक रिपोर्ट में निम्नलिखित के बारे में जानकारी शामिल करनी चाहिए।

1) रोजमर्रा की जिंदगी में सभी प्रकार की हिंसा (यौन हिंसा, परिवार में दुर्व्यवहार, कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न आदि सहित) की घटनाओं से महिलाओं की सुरक्षा के लिए लागू कानून।

2) इस हिंसा को मिटाने के लिए अपनाए गए अन्य उपाय।

3) आक्रामकता या दुर्व्यवहार की शिकार महिलाओं के लिए सहायता सेवाओं का अस्तित्व।

4) महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार की हिंसा की घटनाओं और हिंसा की शिकार

सामान्य अनुशंसा संख्या 13 (आठवां सत्र, 1989)

समान मूल्य के कार्य के लिए समान परिश्रमिक

महिला के विरुद्ध भेद–भाव उन्मूलन समिति– समान मूल्य के काम के लिए पुरुष और महिला श्रमिकों के लिए समान पारिश्रमिक से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन कन्वेंशन नंबर 100 को याद करते हुए, जिसे महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के राज्यों के एक बड़े बहुमत द्वारा अनुमोदित किया गया है यह भी याद दिलाते हुए कि इसने 1983 के बाद से राज्यों की पार्टियों की 51 प्रारम्भिक और पांच दूसरी आवधिक रिपोर्टो पर विचार किया है।

इस बात पर विचार करते हुए कि हालांकि राज्यों की पार्टियों की रिपोर्ट से संकेत मिलता है कि, भले ही समान मूल्य के काम के लिए समान पारिश्रमिक के

सिद्धांत को कई देशों के कानून में स्वीकार किया गया है। व्यवहार में उस सिद्धांत के आवेदन को सुनिश्चत करने के लिए और भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। श्रम बाजार में लिंग भेद को दूर करना, महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के राज्यों के दलों को सिफारिश करता है कि –

1. महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन को पूरी तरह से लागू करने के लिए, उन राज्यों की पार्टियों ने अभी तक स्क कन्वेंशन नंबर 100 की पुष्टि नहीं की है। उन्हें ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ।

2. उन्हें लिंग तटस्थ मानदण्डों के आधार पर नौकरी मूल्यांकन प्रणालियों के अध्ययन, विकास और अपनाने पर विचार करना चाहिए जो विभिन्न प्रकृति की उन नौकरियों के मूल्य की तुलना करने की सुविधा प्रदान करेगा । जिसमें वर्तमान में महिलाओं की प्रधानता है। उन नौकरियों के साथ जिनमें वर्तमान में पुरुष है प्रबल, और उन्हें महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर समिति को अपनी रिपोर्ट में प्राप्त परिणामों को शामिल करना चाहिए।

3. जहां तक सम्भव हो, उन्हें कार्यान्वयन मशीनरी के निर्माण का समर्थन करना चाहिए और समान मूल्य के काम के लिए समान पारिश्रमिक के सिद्धांत के आवेदन को सुनिश्चित करने के लिए, जहां वे लागू होते हैं, सामूहिक समझौता के लिए पार्टियों के प्रयासों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

सामान्य अनुशंसा संख्या 14 (नौवाँ सत्र, 1990)

महिला खतना

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – महिला खतना और महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक अन्य पारम्परिक प्रथाओं की निरंतरता के बारे में चिंतित, इस बात पर सन्तोष व्यक्त करते हुए कि सरकारें, जहाँ ऐसी प्रभा, मौजूद है, राष्ट्रीय महिला संगठन, गैर सरकारी संगठन और संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के निकाय जैसे स्वास्थ्य संगठन और संयुक्त राष्ट्र बालकोष, साथ ही मानवाधिकार आयोग और भेदभाव की रोकथाम और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा पर इसके उप–आयोग ने इस मुद्दे

पर विशेष रूप से ध्यान दिया है कि महिला खतना जैसे पारम्परिक प्रथाओं के महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य और अन्य गम्भीर परिणाम हैं।

महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाली पारंपरिक प्रथाओं पर विशेष प्रतिवेदक के अध्ययन को ध्यान में रखते हुए, और पारम्परिक प्रथाओं पर विशेष कार्य समूह के अध्ययन, यह स्वीकार करते हुए कि महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए हानिकारक प्रथाओं की पहचान करो और उनका मुकाबला करने के लिए स्वयं महत्वपूर्ण कार्रवाई कर रही है, इस बात से आश्वस्त की महिलाओं और सभी इच्छुक समूहों द्वारा की जा रही महत्वपूर्ण कार्रवाई को सरकारों द्वारा समर्थन और प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है गंभीर चिंता के साथ ध्यान दे कि लगातार सांस्कृतिक, पारंपरिक और आर्थिक दबाव है जो महिला खतना जैसी हानिकारक प्रथाओं को बनाए रखने में मदद करते हैं। सिफारिश करता है कि राज्यों की पार्टियां

अ) महिला खतना की प्रथा को खत्म करने की दृष्टि से उचित और प्रभावी उपाय करें। ऐसे उपायों में शामिल हो सकते हैं।

1. विश्वविद्यालय, चिकित्सा या नर्सिंग संघों, राष्ट्रीय महिला संगठनों या अन्य निकायों द्वारा ऐसी पारंपरिक प्रथाओं के बारे में बुनियादी डेटा का संग्रह और प्रसार,

2. महिला खतना और महिलाओं के हानिकारक अन्य प्रभाओं के उन्मूलन के लिए राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर काम करने वाले महिला संगठनों का समर्थन,

3. महिला खतना के उन्मूलन की दिशा में दृष्टिकोण को प्रभावित करने में सहयोग करने के लिए मीडिया और कला सहित सभी स्तरों पर राजनेताओं, पेशेवरों, धार्मिक और सामुदायिक नेताओं को प्रोत्साहित करना,

4. महिला खतना से उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में शोध निष्कर्षो के आधार पर उचित शैक्षिक और प्रशिक्षण कार्यक्रमों और सेमिनारों की शुरूआत।

ब) सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल में महिला खतना को खत्म करने के उद्देश्य से अपनी राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीतियों में उचित रणनीतियों को शामिल करें। ऐसी रणनीतियों में महिला खतना के हानिकारक प्रभावों को समझाने के लिए पारंपरिक जन्म परिचारकों सहित स्वास्थ्य कर्मियों की विशेष जिम्मेदारी शामिल हो सकती है।

स) हानिकारक पारम्परिक प्रथाओं को खत्म करने के लिए किए जा रहे प्रयासों के समर्थन और सहायता के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रणाली के उपयुक्त संगठनों से सहायता, सूचना और सलाह आमंत्रित करना,

द) महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलनं पर कन्वेंशन के अनुच्छेद 10 और 12 के तहत समिति को अपनी रिपोर्ट में महिला खतना को खत्म करने के लिए किए गए उपायों के बारे में जानकारी शामिल करें।

सामान्य अनुशंसा संख्या 15 (नौवां सत्र, 1990)

एड्स की रोकथाम और नियंत्रण के लिए राष्ट्रीय रणनीतियों में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव से बचाव

महिला के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – एक्वायर्ड इम्युनोडेफिशिएंसी सिंड्रोम (एड्स) की वैश्विक महामारी के संभावित प्रभावों और महिलाओं के अधिकारों के प्रयोग पर इसे नियंत्रित करने की रणनीतियों पर ध्यान में लाई गई जानकारी पर विचार करने के बाद एचआईवी के संबंध में विश्व स्वास्थ्य संगठन और अन्य संयुक्त राष्ट्र संगठनों, अंगो और निकायों द्वारा तैयार की गई रिपोर्टों और सामग्रियों को ध्यान में रखते हुए, और विशेष रूप से, स्थिति पर आयोग के महासचिव द्वारा नोट महिलाओं की उन्नति पर एड्स के प्रभाव पर महिलाओं की समीक्षा और 26 से 28 जुलाई 1989, तक जिनेवा में आयोजित एड्स और मानव अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय परामर्श का अंतिम दस्तावेज है।

13 मई 1988 के एचआईवी संक्रमित लोगों और एड्स से पीड़ित लोगों के संबंध में भेदभाव से बचने पर विश्व स्वास्थ्य असेम्बली संकल्प डब्ल्यूएचए 41,24, स्वास्थ्य के क्षेत्र में गैर– भेदभाव पर मानव अधिकार आयोग के संकल्प 1989ध्11 को ध्यान में रखते हुए 12 मार्च 1989 और विशेष रूप से 30 नवम्बर 1989 की महिलाएँ, बच्चो और एड्स पर पेरिस घोषणा, यह देखते हुए कि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने घोषणा की है कि विश्व एड्स दिवस,1 दिसम्बर 1990 का विषय, महिलाएं और एड्स होगा।

सिफारिश–

1) राज्यों की पार्टियां एचआईवी संक्रमण और एड्स के जोखिम विशेषकर महिलाओं और बच्चों में, और उन पर इसके प्रभावों के बारें में सार्वजनिक जागरूकता बढ़ाने के लिए सूचना प्रसारित करने के प्रयासों को तेज करती है,

2) एड्स से निपटने के कार्यक्रमों में महिलाओं और बच्चों के अधिकारों और जरूरतों, और महिलाओं की प्रजनन भूमिका और कुछ समाजों में उनकी अधीनस्थ स्थिति से संबंधित कारकों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए जो उन्हें विशेष रूप से एचआईवी संक्रमण के प्रति संवेदनशील बनाते हैं,

3) राज्यों की पार्टियाँ प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चत करती हैं और एचआइवी संक्रमण की रोकथाम में देखभाल प्रदाताओं स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं और शिक्षकों के रूप में उनकी भूमिका बढ़ाने के लिए उपाय करती है।

4) सभी राज्यों की पार्टियों में कन्वेंशन के अनुच्छेद 12 के तहत अपनी रिपोर्ट में महिलाओं की स्थिति पर एएलडीएम के प्रभावों और संक्रमित महिलाओं की जरूरतों को पूरा करने और उनके खिलाफ विशिष्ट भेदभाव को रोकने के लिए की गई कार्रवाई की जानकारी शामिल की है।

सामान्य अनुशंसा संख्या 16(दसवां सत्र, 1991)

ग्रामीण और शहरी पारिवारिक उद्यमों में अवैतानिक महिला श्रमिक।

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के अनुच्छेद 2 (सी) और 11(सी), डी और सम्बन्धित सांख्यकीय डेटा पर सामान्य सिफारिस संख्या 9 (आंठवे सत्र, 1989) को ध्यान में रखते हुए महिलाओं की स्थिति इस बात को ध्यान में रखते हुए कि राज्य की पार्टियों में महिलाओं का एक बड़ा प्रतिशत आमतौर पर परिवार के पुरुष सदस्य के स्वामित्व वालों उद्यमों में भुगतान, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक लाभ के बिना काम करता है। यह देखते हुए कि महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर समिति को

प्रस्तुत रिपोर्ट आम तौर पर पारिवारिक उद्यमों की अवैतनिक महिला श्रमिको की समस्या का उल्लेख नहीं करती है।

यह पुष्टि करते हुए कि अवैतनिक कार्य महिलाओं के शोषण का एक रूप है जो कन्वेंशन के विपरीत है। सिफारिश करता है कि राज्यों की पार्टियां –

1) पारिवारिक उद्यमों में काम करने वाली अवैतनिक महिलाओं की कानूनी और सामाजिक स्थिति के बारे में जानकारी समिति को अपनी रिपोर्ट शामिल करें।

2) परिवार के किसी सदस्य के स्वामित्व वाले उद्यमों में भुगतान, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक लाभ के बिना काम करने वाली महिलाओं पर सांख्यकीय डेटा एकत्र करें, और इन आकड़ों को समिति अपने रिपोर्ट में शामिल करें।

3) परिवार के किसी सदस्य के स्वामित्व वाले उद्यमों में ऐसे लाभों के बिना काम करने वाली महिलाओं की लिए भुगतान, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक लाभों की गारंटी के लिए।

सामान्य अनुशंसा संख्या 17 (दसवां सत्र, 1991)

महिलाओं की घरेलू गतिविधियों का मापन और मात्रा निर्धारण तथा सकल राष्ट्रीय उत्पाद में उनकी पहचान।

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के अनुच्छेद–11 को ध्यान में रखते हुए, महिलाओं की उन्नति के लिए नैरोबी दूरदेशी रणनीतियों के अनुच्छेद–120 को याद करते हुए, यह पुष्टि करते हुए कि महिलाओं की अप्रतिबंधित धरेलू गतिविधियों की माप और मात्रा, जो प्रत्येक देश में विकास में योगदान करती है, महिलाओं की वास्तविक आर्थिक भूमिका को उजागर करने में मदद करेगी यह मानते हुए कि इस तरह का माप और परिमाणीकरण महिलाओं की उन्नति से संबोधत आगे की नीतियों के निर्माण के लिए एक आधार प्रदान करता है, महिलाओं पर सांख्यिकीय के विकास पर राष्ट्रीय लेखा प्रणाली के वर्तमान संशोधन पर अपने पच्चीसवें सत्र में सांख्यिकीय आयोग की चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए सिफारिश करता है कि राज्य की पार्टियों–

1) महिलाओं की अप्रतिबन्धित घरेलू गतिविधियों को मापने और महत्व देने के लिए अनुसंधान और प्रयोगात्मक अध्ययनों को प्रोत्साहित और समर्थन करना, उदाहरण के लिए, उनके राष्ट्रीय घरेलू सर्वेक्षण कार्यक्रमों के हिस्से के रूप में समय उपयोग सर्वेक्षण आयोजित करके और घर और श्रम बाजार दोनों में गतिविधियों पर खर्च किए गए समय पर लिंग के आधार पर अलग–अलग आंकड़े एकत्र करके,

2) महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के प्रावधानों और महिलाओं की उन्नति के लिए नैरोबी दूरदेशी रणनीतियों के अनुसार, महिलाओं की गैर–परिश्रमिक घरेलू गतिविधियों को मापने और सकल में शामिल करने के लिए कदम उठाएं। राष्ट्रीय उत्पाद,

3) कन्वेंशन के अनुच्छेद 18 के तहत प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में गैर पारिश्रमिक घरेलू गतिविधियों को मापने और महत्व देने के लिए किए गए अनुसंधान और प्रयोगात्मक अध्ययनों के साथ–साथ महिलाओं की गैर–पारिश्रमिक घरेलू गतिविधियों को राष्ट्रीय खातों में शामिल करने में हुई प्रगति की जानकारी शामिल करें।

सामान्य अनुशंसा संख्या 18 (दसवां सत्र, 1991)

विकलांग महिलाएं

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन समिति – महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन के अनुच्छेद 3 को विशेष रूप से ध्यान में रखते हुए राज्यों की पार्टियों की 60 से अधिक आवधिक रिपोर्टो पर विचार करने के बाद और यह स्वीकार करने के बाद कि वे विकलांग महिलाओं पर दुर्लभ जानकारी प्रदान करते हैं।

विकलांग महिलाओं की स्थिति के बारे में चिंतित, जो अपनी विशेष जीवन स्थितियों से जुड़े दोहरे भेदभाव से पीड़ित है। महिलाओं की उन्नति के लिए नैरोबी दूरदेशी रणनीतियों के पैराग्राफ 296 को याद करते हुए जिसमें विकलांग महिलाओं को विशेष चिंता के क्षेत्र। शीर्षक के तहत एक कमजोर समूह माना जाता है। विकलांग व्यक्तियों से सम्बंधित विश्व कारवाई कार्यक्रम (1982) अनुशंसा करता है कि राज्यों कि पार्टियाँ अपनी अवधि रिपोर्टों में विकलांग महिलाओं के बारे में और उनकी

विशेष स्थिति से निपटने के लिए किए गए उपायों के बारे में जानकारी प्रदान करें, जिसमें यह सुनिश्चत करने के लिए विशेष उपाय शामिल हैं कि उन्हें शिक्षा और रोजगार, स्वास्थ्य सेवाओं और सामाजिक सुरक्षा तक समान पहुँच प्राप्त हो, और यह सुनिश्चत करे वे सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के सभी क्षेत्रों में भाग ले सकते हैं।

सामान्य सिफारिश संख्या 19 (दसवां सत्र 1992)

महिला के विरुद्ध क्रूरता

1. लिंग आधारित हिंसा भेदभाव का एक रूप है जो पुरुषों के साथ समानता के आधार पर महिलाओं के अधिकारों और स्वतंत्रता का आनंद लेने की क्षमता को गम्भीर रूप से बाधित करती है।

2. 1989 में, सामति ने सिफारिश की कि राज्यों को अपनी रिपोर्ट में हिंसा और उससे निपटने के लिए शुरू किए गए उपायों की जानकारी शामिल करनी चाहिए (सामान्य अनुशंसा 12 आठवां सत्र)

3. 1991 में इसके दसवें सत्र में महिलाओं के प्रति हिंसा और महिलाओं के यौन उत्पीड़न और शोषण से संबंधित कन्वेंशन के अनुच्छेद 6 और अन्य लेखों पर चर्चा और अध्ययन के लिए ग्यारहवें सत्र का हिस्सा आवंटित करने का निर्णय लिया गया था। उस विषय को 1993 में मानव अधिकारों पर विश्व सम्मेलन की प्रत्याशा में चुना गया था, जिसे 18 दिसम्बर 1990 के संकल्प द्वारा महासभा द्वारा बुलाया गया था।

4. समिति ने निष्कर्ष निकाला की राज्यों की पार्टियों की सभी रिपोर्ट महिलाओं के खिलाफ भेदभाव, लिंग आधारित, हिंसा और मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के उल्लंघन के बीच धनिष्ठ संबंध को पर्याप्त रूप से प्रतिबिंबित नहीं करती है। कन्वेंशन के पूर्ण कार्यान्वयन के लिए राज्यों को महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार की हिंसा को खत्म करने के लिए सकारात्मक उपाय करने की आवश्यकता है।

5. समिति ने राज्यों की पार्टियों को सुझाव दिया कि अपने कानूनों और नीतियों की समीक्षा करते समय, और कन्वेंशन के तहत रिपोर्टिंग में, उन्हें लिंग आधारित हिंसा के संबंध में समिति की निम्नलिखित टिप्पणियों पर ध्यान देना चाहिए।

सामान्य टिप्पणियां –

1. कन्वेंशन के अनुच्छेद 1 में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को परिभाषित किया गया है। भेदभाव की परिभाषा में लिंग आधारित हिंसा शामिल है, यानी वह हिंसा जो किसी महिला के खिलाफ निर्देशित होती है क्योंकि वह एक महिला है जो महिलाओं को असमान रूप से प्रभावित करती है। इसमें ऐसे कार्य शामिल हैं जो शारीरिक, मानसिक या यौन नुकसान या पीड़ा पहुंचाते हैं, ऐसे कृत्यों की धमकी, जबरदस्ती और स्वतंत्रता से अन्य वंचित करना। लिंग आधारित हिंसा कन्वेंशन के विशिष्ट प्रावधानों का उल्लंघन कर सकती है, भले ही उन प्रावधानों में स्पष्ट रूप से हिंसा का उल्लेख करे हों।

2. लिंग आधारित हिंसा, जो सामान्य अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत या मानवाधिकार सम्मेलनों के तहत महिलाओं द्वारा मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के आनंद को कम या खत्म कर देती है, कन्वेंशन के अनुच्छेद 1 के अर्थ में भेदभाव है। इन अधिकारों और स्वतंत्रता में शामिल है।

(अ) जीवन का अधिकार

(ब) यातना या क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार या दंड के अधीन होने का अधिकार

(स) अंतर्राष्ट्रीय या आंतरिक सशस्त्र संघर्ष के समय मानवीय मानदण्डों के अनुसार समान सुरक्षा का अधिकार

(द) व्यक्ति की स्वतंत्रता और सुरक्षा का अधिकार

(य) परिवार में समानता का अधिकार

(र) शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम मानक का अधिकार

(ल) काम की उचित और अनुकूल परिस्थितियों का अधिकार

3. यह कन्वेंशन सार्वजनिक प्राधिकारियों द्वारा की जाने वाली हिंसा पर लागू होता है। हिंसा के ऐसे कृत्य इस कन्वेंशन के उल्लंघन के अलावा, सामान्य अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून और अन्य कन्वेंशन के तहत उस राज्य के दायित्व भी उल्लंघन कर सकते हैं।

4. हालाँकि, इस बात पर जोर दिया गया है कि कन्वेंशन के तहत भेदभाव सरकारों द्वारा या उनकी ओर से कार्रवाई तक सीमित नहीं है। अनुच्छेद 21(ई) के तहत कन्वेंशन राज्यों की पार्टियों से किसी भी व्यक्ति, संगठन या उद्यम द्वारा महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को खत्म करने के लिए सभी राज्य उचित उपाय करने का आह्वान करता है। सामान्य अंतर्राष्ट्रीय कानून और विशिष्ट मानव अधिकार अनुबंधों के तहत, राज्य निजी कृत्यों के लिए भी जिम्मेदार हो सकते हैं यदि ये अधिकारों के उल्लघंन को रोकने या हिंसा के कृत्यों की जांच करने और दण्डित करने और मुखावजा प्रदान करने के लिए उचित परिश्रम के साथ कार्य करने में विफल रहते हैं।

कन्वेंशन के विशिष्ट लेखों पर टिप्पणियाँ

1) अनुच्छेद 2 और 3 – 10, अनुच्छेद 2 और 3, अनुच्छेद 5–16 के तहत विशिष्ट दायित्वों के अलावा इसके सभी रूपों में भेदभाव को खत्म करने के लिए एक व्यापक दायित्व स्थापित करते हैं।

2) अनुच्छेद–2 (एफ) 15 और 101 (सी) पारस्परिक दृष्टिकोण जिसके द्वारा महिलाओं को पुरुषों के अधीन माना जाता है या रूढ़िवादी भूमिक निभाई जाती हैए हिंसां या जबरदस्ती से जुड़ी व्यापक प्रथाओं को कायम रखती है, जैसे पारिवारिक हिंसा और दुर्व्यवहार, जबरन विवाह, दहेज हत्या, एसिड हमले और महिला खतना । इस तरह के पूर्वाग्रह और प्रथाएं महिलाओं की सुरक्षा या नियंत्रण के रूप में लिंग आधारित हिंसा को उचित ठहरा सकती है। महिलाओं की शारीरिक और मानसिक अखण्डता पर ऐसी हिंसा का प्रभाव उन्हें मानवाधिकारों और भौतिक स्वतंत्रता के समान आनंद, व्यायाम और ज्ञान से वांचित करना है। हालाँकि यह टिप्पणी मुख्य रूप से वास्तविक या धमकी भरी हिंसा को संबोधित करती है। लिंक आधारित हिंसा के इन रूपों से अंतर्निहित परिणाम महिलाओं को अधीनस्थ भूमिकाओं में बनाए रखने में मदद करते हैं और राजनीतिक भागीदारी के निम्न स्तर और उनकी शिक्षा, कौशल और कार्य अवसरों के निम्न स्तर में योगदान करते हैं।

3) ये दुष्टिकोण अश्लील साहित्य के प्रचार–प्रसार और महिलाओं को व्यक्तिगत के बजाय यौन वस्तु के रूप में चित्रित करने और अन्य व्यावसायिक शोषण में भी योगदान करते हैं। यह बदलें में लिंग आधारित हिंसा में योगदान देता है।

4) अनुच्छेद 6.राज्यों की पार्टियों को अनुच्छेद 6 के तहत महिलाओं के सभी प्रकार के अवैध व्यापार और महिलाओं की वेश्यावृत्ति के शोषण को दबाने के लिए उपाय करने की आवश्यकता है।

5) गरीबी और बेरोजगारी से महिलाओं की तस्करी के अवसर बढ़ जाते है। तस्करी के स्थापित रूपों के अलावा यौन शोषण के नए रूप भी है, जैसे यौन पर्यटन, विकासशील देशों से विकसित देशों में काम करने के लिए घरेलू श्रमिकों की भर्ती और विकासशील देशों की महिलाओं और विदेशी नागरिकों के बीच संगठित विवाह । ये प्रथाएं महिलाओं द्वारा अधिकारों के समान आनंद और उनके अधिकारों और सम्मान के साथ असंगत हो। ये महिलाओं को हिंसा और दुर्व्यवहार के विशेष जोखिम में डालते हैं।

7) गरीबी और बेरोजगारी युवा लड़कियों सहित कई महिलाओं को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करती है। वेश्याएँ विशेष रूप से हिंसा के प्रति संवेदनशील होती हैं। क्योंकि उनकी स्थिति, जो कि गैरकानूनी हो सकती ह है। उन्हें हासिये पर धकेल देती है। उन्हें बलात्कार और हिंसा के अन्य रूपों के खिलाफ कानूनों की समाना सुरक्षा की आवश्यकता है।

8) युद्ध सशस्त्र संघर्ष और क्षेत्रों पर कब्जे से अक्सर वेश्यावृत्ति, महिलाओं की तस्करी और महिलाओं के यौन उत्पीड़न में वृद्धि होती है, जिसके लिए विशिष्ट सुरक्षात्मक और दंडात्मक उपायों की आवश्यकता होती है।

9) अनुच्छेद 11 जब महिलाओं को कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न जैसी लिंग विशिष्ट हिंसा का शिकार होना पड़ता है, तो रोजगार में समानता गम्भीर रूप से खराब हो सकती है।

10) यौन उत्पीड़न में शारीरिक संपर्क और प्रगति, यौन रंगीन टिप्पणियां, अश्लील साहित्य दिखाना और यौन मांग, चाहे शब्दों या कार्यों से, जैसे अवांछित यौन निर्धारित व्यवहार शामिल है। ऐसा आचरण अपमानजनक हो सकता है और इससे

स्वास्थ्य और सुरक्षा संबंधी समस्या उत्पन्न हो सकती है। यह भेदभाव पूर्ण है जब महिला के पास यह मानने का उचित आधार हो कि उसकी आपत्ति से भर्ती या पदोन्नति सहित उसके रोजगार के संबंध में उसे नुकलान होगा, या जब वह एक प्रतिकूल कार्य वातावरण बनाता है।

11) अनुच्छेद 12 राज्यों की पार्टियों को अनुच्छेद 12 के अनुसार स्वास्थ्य देखभाल तक समान पहुंच सुनिश्चत करने के लिए उपाय करना आवश्यक है। महिलाओं के खिलाफ हिंसा उनके स्वास्थ्य और जीवन को खतरे में डालती है।

12) कुछ राज्यों में संस्कृति और परम्परा द्वारा कायम पारम्परिक प्रथाएं हैं जो महिलाओं और बच्चों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इन प्रथाओं में गर्भवती महिलाओं के लिए आहार प्रतिबंध पुरुष बच्चों को प्राथामिकता और महिला खतना था जननांग विकृति शामिल है।

13) ग्रामीण महिलाओं को लिंग आधारित हिंसा का खतरा है। क्योंकि महिलाओं की अधीनस्थ भूमिका के सम्बंध में पारस्परिक दृष्टिकोण कई ग्रामीण समुदायों में कायम है। ग्रामीण समुदाय की लड़कियाँ जब ग्रामीण समुदाय छोड़कर शहरों में रोजगार की तलाश में जाती हैं। तो उन्हें शिक्षा हिंसा और यौन शोषण का विशेष खतरा होता है। अनिवार्य नसबंदी या गर्भपात महिलाओं के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और बच्चों की संख्या और अंतर पर निर्णय लेने के महिलाओं के अधिकार का उल्लंघन करता है।

14) पारिवारिक हिंसा महिलाओं के खिलाफ हिंसा के सबसे घातक रूपों में से एक है। यह सभी समाजों में प्रचलित है। पारिवारिक रिश्तों में सभी उम्र की महिलाओं को हर तरह की हिंसा का शिकार होना पडता है। । जसमें मारपीट बलात्कार, यौन उत्पीड़न के अन्य रूप मानसिक और अन्य प्रकार की हिंसा शामिल है, जो पारम्परिक दृष्टिकोण से बनी रहती है। आर्थिक स्वतंत्रता की कमी कई महिलाओं को हिंसक रिश्तों में रहने के लिए मजबूर करती है। पुरुषों द्वारा अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का त्याग हिंसा और जबरदस्ती का एक रूप हो सकता है। हिंसा के ये रूप महिलाओं के स्वास्थ्य को खतरे में डालते हैं और समानता के आधार पर पारिवारिक जीवन और सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की उनकी क्षमता को खराब करते हैं।

सिफारिश

इन टिप्पणियों के आलोक में, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव उन्मूलन समिति की सिफारिश है कि–

1) राज्यों की पार्टियों को लिंग आधारित हिंसा के सभी रूपों पर काबू पाने के लिए उचित और प्रभावी उपाय करने चाहिए चाहे वह सार्वजनिक या निजी अधिनियम द्वारा हो।

2) राज्यों की पार्टियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पारिवारिक हिंसा और दुर्व्यवहार, बलात्कार, यौन उत्पीड़न और अन्य लिंग आधारित हिंसा के खिलाफ कानून सभी महिलाओं को पर्याप्त सुरक्षा दे और उनकी अखण्डता और गरिमा का सम्मान करें। पीड़ितों के लिए उचित सुरक्षात्मक और सहायता लेवाएँ प्रदान की जानी चाहिए। कन्वेंशन के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए न्यायिक और कानून प्रवर्तन अधिकारियों और अन्य सार्वजनिक अधिकारियों का लिंग संवेदनशील प्रशिक्षण आवश्यक है।

3) राज्यों की पार्टियों को हिंसा की सीमा, कारणों और प्रभावों तथा हिंसा को रोकने और उससे निपटने के उपायों की प्रभाव शीलता पर आंकडो के संकलन और अनुसंधान को प्रोत्साहित करना चाहिए ।

4) यह सुनिश्चत करने के लिए प्रभावी उपाय किए जाने चाहिए कि मीडिया महिलाओं का सम्मान करें और उन्हें बढ़ावा दे ।

5) राज्यों की पार्टियों को अपनी रिपोर्ट में उन दृष्टिकोणों रीप्ति रिवाजों और प्रथाओं की प्रकृति और सीमा की पहचान करनी चाहिए जो महिलाओ के खिलाफ हिंसा को बढ़ावा देते हैं, और इसके परिणामस्वरूप होने वाली हिंसा के प्रकार की पहचान करनी चाहिए। उन्हें हिंसा पर काबू पाने के लिए किए गए उपायों और उन राज्यों के प्रभाव के बारे में रिपोर्ट देनी चाहिए।

6) इन दृष्टिकोणों और प्रथाओं पर काबू पाने के लिए प्रभावी उपाय किये जाना चाहिए। राज्यों को महिलाओं की समानता में बाधक पूर्वाग्रहों को खत्म करने में, मदद के लिए शिक्षा और सार्वजनिक सूचना कार्यक्रम शुरू करने चाहिए (सिफारिश संख्या 3,1987)

7) तस्करी और यौन शोषण पर काबू पाने के लिए विशिष्ट निवारक और दण्डात्मक उपाय आवश्यक है,

8) राज्यों की पार्टियों को अपनी रिपोर्ट में इन सभी समस्याओं की सीमा और उपायों का वर्णन करना चाहिए जिसमें दण्डात्मक प्रावधान, निवारक और पुनर्वास उपाय शामिल है जो वेश्यावृत्ति में लगी या तस्करी और यौन शोषण के अन्य रूपों की शिकार महिलाओं की सुरक्षा के लिए उठाए गए हैं। इन उपायों का प्रभावशीलता का भी वर्णन किया जाना चाहिए।मुआवजे सहित प्रभावी शिकायत प्रक्रियाएँ और उपचार प्रदान किये जाने चाहिए ।

9) राज्यों की पार्टियों को अपनी रिपोर्ट में यौन उत्पीड़न, और महिलाओं को यौन उत्पीड़न और कार्यस्थल पर जबरदस्ती कि हिंसा के अन्य रूपों से बचाने के उपायों पर जानकारी शामिल करनी चाहिए।

10) राज्यों की पार्टियों को पारिवारिक हिंसा, बलात्कार, यौन उत्पीड़न और लिंग आधारित हिंसा के अन्य रूपों के पीड़ितों के लिए शरणार्थी, विशेष रूप से प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्यकर्ता, पुनर्वास और परामर्श सहित सेवाएँ स्थापित या समर्थन करनी चाहिए।

11) राज्यों की पार्टियों को ऐसी प्रथाओं पर काबू पाने के लिए उपाय करना चाहिए और स्वास्थ्य मुद्दो पर रिपोर्टिंग में महिला खतना पर समिति की सिफारिश (सिफारिश संख्या 14) को ध्यान में रखना चाहिए ।

12) राज्यों की पार्टियों को यह सुनिश्चित करना चाहिए की प्रजनन और प्रजनन के संबंध में जबरदस्ती को रोकने के लिए उपाय किए जाए, और यह सुनिश्चित किया जाए कि महिलाओं को प्रजनन नियंत्रण के सम्बन्ध में उचित सेवाओं की कमी के कारण अवैध गर्भपात जैसे असुरक्षित चिकित्सा प्रक्रियाओं के लिए मजबूर नहीं होना पड़े ।

13) राज्यों की पार्टियों को अपनी रिपोर्ट में इन समस्याओं की सीमा बतानी चाहिए और जो उपाय किए गए हैं। उनके प्रभाव का संकेत देना चाहिए ।

14) राज्यों की पार्टियों को वह सुनिश्चत करनी चाहिए कि हिंसा के पीड़ितों के लिए सेवाएं ग्रामीण महिलाओं के लिए सुलभ हो और जहां आवश्यक हो, पृथक समुदायों को विशेष सेवाएँ प्रदान की जाए ।

15) उन्हें हिंसा से बचाने के उपायों में प्रशिक्षण और रोजगार के अवसर और घरेलू कामगारों की रोजगार स्थितियों की निगरानी शामिल होनी चाहिए ।

16) राज्यों की पार्टियों को ग्रामीण महिलाओं के लिए जोखिम, हिंसा और दुर्व्यवहार की सीमा और प्रकृति समर्थन और अन्य सेवाओं की उनकी आवश्यकता और पहुंच और हिंसा पर काबू पाने के उपायों की प्रभावशीलता पर रिपोर्ट करनी चाहिए।

17) पारिवारिक हिंसा पर काबू पाने के लिए आवश्यक उपायों में शामिल होना चाहिए।

18) जहां आवश्यक हो वहां आपराधिक दण्ड और घरेलू हिंसा के मामलों में नागरिक उपचार।

19) परिवार की किसी महिला सदस्य पर हमले या हत्या के संबंध में सम्मान की रक्षा को हटाने के लिए कानून।

20) पारिवारिक हिंसा के पीड़ितों की सुरक्षा सुनिश्चत करने के लिए सेवाएँ, जिनमें शरणार्थी परामर्श और पुनर्वास कार्यक्रम शामिल है।

21) घरेलू हिंसा के अपराधियों के लिए पुनर्वास कार्यक्रम।

22) उन परिवारों के लिए सहायता सेवाएँ जहाँ अनाचार या यौन शोषण हुआ है।

23) राज्यों की पार्टियों को घरेलू हिंसा और यौन शोषण की सीमा और उठाए गए निवारक, दंडात्मक और उपचारात्मक उपायों पर रिपोर्ट करनी चाहिए।

24) राज्यों की पार्टियों को लिंग आधारित हिंसा के खिलाफ महिलाओं को प्रभावी सुरक्षा प्रदान करने के लिए आवश्यक सभी कानूनी और अन्य उपाय करने चाहिए, जिनमें अन्य बातों के साथ–साथ शामिल हैं–

अ) महिलाओं को सभी प्रकार की हिंसा से बचाने के लिए दण्डात्मक प्रतिबंध, नागरिक उपचार और प्रतिपूरक प्रावधानों सहित प्रभावी कानूनी उपाय, जिनमें अन्य बातों के साथ–साथ परिवार में हिंसा और दुर्व्यवहार कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न शामिल है।

ब) पुरुषों और महिलाओं की भूमिकाओं और स्थिति से सम्बन्धित दृष्टिकोण को बदलने के लिए सार्वजनिक सूचना और शिक्षा कार्यक्रमों सहित निवारक उपाय।

स) हिंसा की शिकार या हिंसा के जोखिम में रहने वाली महिलाओं के लिए आश्रय, परामर्श, पुनर्वास और सहायता सेवाओं सहित सुरक्षात्मक उपाय।

25) राज्यों की पार्टियों को लिंग आधारित हिंसा के सभी रूपों पर रिपोर्ट करनी चाहिए, और ऐसी रिपोर्टों में प्रत्येक प्रकार की हिंसा की घटनाओं और पीड़ित महिलाओं पर ऐसी हिंसा के प्रभावों पर सभी उपलब्ध डेटा शामिल होना चाहिए।

26) राज्यों की पार्टियों की रिपोर्ट में महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर काबू पाने के लिए उठाए गए कानूनी, निवारक और सुरक्षात्मक उपायों और ऐसे उपायों की प्रभावशीलता पर जानकारी शामिल होनी चाहिए।

सामान्य अनुशंसा संख्या 20 (11वाँ सत्र, 1992)

कन्वेंशन के लिए आरक्षण –

1. समिति ने अनुच्छेद 28 के संबंध में कन्वेंशन में आरक्षण पर राज्यों की पार्टियों की चौथी बैठक के निर्णय को याद किया, जिसका समिति की सामान्य सिफारिश संख्या 4 में स्वागत किया गया था ।

2. समिति ने सिफारिश की कि 1993 में मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन की तैयारियों के संबंध में, राज्यों की पार्टियों को यह करना चाहिए।

अ) अन्य मानवाधिकार संधियों में आरक्षण के संदर्भ में कन्वेंशन में आरक्षण की वैधता और कानूनी प्रभाव का सवाल उठाए ।

ब) सभी मानवाधिकार संधियों के कार्यान्वयन को मजबूत करने की दृष्टि से ऐसे आरक्षणों पर पुनर्विचार करें,

स) अन्य मानवाधिकार संधियों की तुलना में कन्वेंशन में आरक्षण पर एक प्रक्रिया शुरू करने पर विचार करें।

सामान्य अनुशंसा संख्या 21 (13वाँ सत्र, 1994)

विवाह और पारिवारिक संबंधों में समानता–

महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन (सामान्य सभा संकल्प 34/180, अनुबंध समाज और परिवार में महिलाओं और पुरुषों के लिए मानवाधिकारों की समानता की पुष्टि करता है। मानवाधिकारों से सम्बंधित अंतर्राष्ट्रीय संधियों में इस कन्वेंशन का महत्वपूर्ण स्थान है।

1) स्वतंत्र रूप से और सहमति से अपना जीवनसाथी चुनने का अधिकार।

2) तलाक की स्थिति में भी अपने बच्चों पर व्यक्तिगत अधिकार रखना।

3) एक विवाहित महिला का पेशा या पेशा चुनने का अधिकार।

4) विवाह के भीतर संपत्ति का अधिकार होना। संयुक्त राष्ट्र के विषय को छोड़ने से पहले, मैं सिंगापुर की एक महिला, नोलीन हेजर, संयुक्त राष्ट्र महिला की पूर्व प्रमुख द्वारा किए गए महत्वपूर्ण योगदान को स्वीकार करना चाहूंगी। 2000 में, डॉ० हेजर संयुक्त राष्ट्र सुख्क्षा परिषद् को प्रस्ताव 1325 को अपनाने के लिए मनाने में सफल रहे। प्रस्ताव में राज्यों से सशस्त्र संघर्ष में महिलाओं और लड़कियों के अधिकारों की रक्षा करने का आह्वान किया गया है। खांडा के लिए इन्टरनेश्नल क्रिमिनल ट्रीब्यून्स के न्यायाधीश नवानेथेम पिल्ले ने कहा प्राचीन काल से, बलात्कार को युद्ध की लूट में से एक माना जाता रहा है। अब यह युद्ध अपराध है। हम एक कड़ा संदेश देना चाहते हैं कि बलात्कार अब युद्ध की ट्रॉफी नहीं है।

बलिया जिले के संदर्भ में देखें तो यहाँ महिलाओं के मानवाधिकारों के उल्लंघन से जुड़ी चुनौतियाँ अभी भी सामाजिक संरचना में गहराई से विद्यमान हैं। जिला महिला प्रकोष्ठ और पुलिस विभाग की 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, बलिया में वर्षभर में 436 महिला उत्पीड़न के मामले, 112 दहेज संबंधित अपराध, और 57 यौन उत्पीड़न के मामले दर्ज किए गए। इनमें से लगभग 74 प्रतिशत मामले ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित थे, जहाँ कानून की जानकारी और शिकायत दर्ज कराने की प्रक्रिया दोनों सीमित हैं।

हालाँकि, पिछले कुछ वर्षों में बलिया में महिला अधिकारों के संरक्षण के लिए प्रशासनिक और सामाजिक स्तर पर कई सकारात्मक पहलें की गई हैं। जिला

मुख्यालय पर "महिला शक्ति केंद्र और "एक स्टॉप सेंटर" की स्थापना की गई है, जहाँ पीड़ित महिलाओं को कानूनी सहायता, चिकित्सा सुविधा और परामर्श उपलब्ध कराया जाता है। वर्ष 2023 में इन केंद्रों के माध्यम से 1,450 से अधिक महिलाओं को विभिन्न प्रकार की सहायता प्रदान की गई।

महिला मानवाधिकारों की सुरक्षा केवल कानूनों के माध्यम से संभव नहीं है; इसके लिए समाज में मानसिक और सांस्कृतिक परिवर्तन आवश्यक है। पितृसत्तात्मक सोच, जो महिलाओं को द्वितीय श्रेणी का नागरिक मानती है, आज भी कई स्थानों पर कानून से अधिक प्रभावशाली साबित होती है। बलिया जैसे पारंपरिक जिलों में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से देखी जाती है, जहाँ महिला शिक्षा, संपत्ति के अधिकार और स्वतंत्र निर्णय लेने की स्वतंत्रता अब भी सीमित है।

इसके बावजूद, सामाजिक चेतना के स्तर पर एक सकारात्मक परिवर्तन भी उभर रहा है। शिक्षित युवतियाँ, महिला स्वयं सहायता समूह और स्थानीय गैर–सरकारी संगठन अब मानवाधिकारों की जानकारी गाँव–गाँव तक पहुँचा रहे हैं। बलिया में "नारी न्याय अभियान" और "लैंगिक समानता कार्यशाला" जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को संविधान और कानून के तहत उनके अधिकारों से परिचित कराया जा रहा है।

मानवाधिकारों का मूल तत्व है "गरिमा का अधिकार"। यह केवल हिंसा या भेदभाव से मुक्त जीवन नहीं, बल्कि सम्मानपूर्वक अस्तित्व का अधिकार भी है। महिला के लिए यह अधिकार तब सशक्त बनता है जब उसे शिक्षा, स्वास्थ्य, संपत्ति, और निर्णय लेने की समान स्वतंत्रता मिले। बलिया में किए गए एक सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, जिन परिवारों में महिलाएँ शिक्षित और रोजगार प्राप्त हैं, वहाँ घरेलू हिंसा की घटनाएँ 43 प्रति0 कम पाई गईं। इसका अर्थ है कि आर्थिक और शैक्षिक सशक्तिकरण ही मानवाधिकारों की वास्तविक गारंटी है।

2.8 महिलाओं की प्रस्थिति

महिलाओं की प्रस्थिति की अवधारणा को विभिन्न तरीकों से समझा जा सकता है। परिवार समुदाय और समाज के अंदर महिलाओं को सामाजिक और भौतिक संसाधनों

की सुलभता की सीमा (डिक्सन 1978) या परिवार और समुदाय के अंदर उसकी शक्ति एवं प्राधिकार तथा अन्य पुरूष सदस्यों से प्राप्त सम्मान या अन्य स्थितियों से संबंधित होते हुए भी समाज व्यवस्था में स्थिति जिससे अंतर समझा जा सके (भारत में महिलाओं की संबंधी समिति 1974) या वह सीमा जहां तक महिलाओं को ज्ञान, आर्थिक संसाधन और राजनीतिक अधिकार सुलभ हैं इसके साथ उस स्वायत्तता की मात्रा जो उन्हें अपने जीवन चक्र के महत्वपूर्ण बिन्दु पर निर्णय लेने और व्यक्तिगत चुनाव में प्राप्त है।

महिलाओं की प्रस्थिति समाज के प्रबंधन में महिलाओं की सहभागी अधिकारों और उत्तरदायित्वों से सह–संबंधित है। इस शब्द से सामाजिक संरचना में अधिकारों और उत्तरदायित्वों की दृष्टि से पुरुषों की तुलना में महिलाओ की प्रस्थिति का पता चलता है। समाज में महिलाओ की प्रस्थिति की व्याख्या परम्परा धर्म, विचारधारा के माध्यम से उनके लिए निश्चित भूमिका की दृष्टि और आर्थिक विकास की स्थिति से की जाती है। प्रस्थिति में उन्नयन का अनिवार्य रूप से अभिप्राय समाज में सहभागी अधिकारों के दायरे का विस्तार है। पुरुषों और महिलाओं के लिए अवसर संरचना जितना अधिक संतुलित होगी समाज में महिलाओं की भूमिका उतनी ही व्याक होगी और इसके परिणामस्वरूप उनकी प्रस्थिति भी उच्चतर होगी । प्रस्थिति का विचार समानता के भाव का भी बोध कराता है।

यदि हम किसी समाज में महिलाओं की प्रस्थिति का अध्ययन करना चाहिए जो महिलाएं समाज में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्रों में निभाती है। ऐसे कारकों का पता लगाना भी महत्वपूर्ण है कि वे किस तरह जीवनपर्यन्त उन समस्याओं और परिस्थितियों का सामना करती हैं जो उनकी लिंगजन्य भूमिकाओ से संबंधित है और किस तरह वे इन भूमिका परिस्थिति से स्वयं को समायोजित करती हैं।

एक समाज से दूसरे समाज में और एक काल से दूसरे काल में महिलाओं की भूमिका में अंतर रहा है। इसमें समय के साथ परिवर्तन हुआ है। इस प्रकार के समाज भी थे जिसमें महिलाएं आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती थीं। इन समाजों में आर्थिक कार्यकलाप पर महिलाओं का पूर्ण अथवा कम से कम विशद नियंत्रण था।

तथापि, आदर्श प्रतिरूप वे समाज हैं जहां महिलाओं की प्रस्थिति पुरुषों की तुलना में हीन है। यहां यह उल्लेखनीय है कि इन समाजों में महिलाओं की हीन प्रस्थिति के साथ–साथ उनके संपत्ति अधिकारों और शिक्षा को भी नकारा गया है साथ ही उन्हें कतिपय व्यवसाय ते वंचित भी रखा गया। कतिपय ऐतिहासिक, पारम्परिक और संवैधानिक बाधाएं हैं जो समाज में महिलाओं की प्रस्थिति को घटाने के लिए जिम्मेदार हैं।

प्रायः सभी समाजों में महिलाओं की प्रस्थिति समस्याओ को जन्म देती हैं और आज मानवीय विकास में यह बुनियादी मुद्दा बन कर उभरा है। महिलाओं की प्रस्थिति के अध्ययन का तात्पर्य है निर्दिष्ट संदर्भ में लिंग विषयक संबंधों के बोध के माध्यम से लिंग विषयक अधीनता की प्रकृति का संवेदनशील निदान है। समाज में महिलाओं की प्रस्थिति के बोध के लिए लिंग आधारित भूमिका विभेदीकरण का बोध आवश्यक है। प्रस्थिति की लिंग आधारित अवधारणा प्रदत्त, सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं की सामाजिक, कानूनी और वैचारिक स्थिति तथा अधिकारों विशेषाधिकारों को व्यक्त करती है। यह बहुधा उस आचरण तथा उनके द्वारा समाज में महिलाओं की प्रस्थिति जिसकी परिधि में समाज में उनकी परम्परागत और परिवर्तनशील स्थिति आती है एक गतिशील अवधारणा है जिसमें उनका वर्तमान और उभरती हुई प्रस्थिति दोनों प्रचलित विचारों, कृत्यो, मानदंडों और परम्पराओं पर आधारित है महिलाओं की प्रस्थिति में तद् नुरूपी परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक और सांस्कृतिक परम्पराओं आर्थिक विकास के चरणों शिक्षा और राजनीतिक भागेदारी के स्तर से संबद्ध है।

महिलाओं का अध्ययन करते समय समाजशास्त्री समाज में महिलाओं की प्रस्थिति शब्द की अपेक्षा बहुधा महिलाओं को परिवर्तनशील प्रस्थिति शब्दों का उल्लेख करते हैं। तथापि एक जटिल और स्तरीकृत सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक बहुलता में प्रस्थिति मूल्यांकन को सुकर बनाने के लिए हाल ही में दो अन्य आयाम विशेषकर परिवर्तन के इस काल में प्रस्तुत किये गये हैं जो इस प्रकार हैं–

1) महिलाओं की स्वयं की जिन्दगी पर वास्तविक नियंत्रण की सीमा।

2) निर्णय करने की प्रक्रिया तक उनकी पहुंच की सीमा और सत्ता तथा प्राधिकार की स्थितिओं में वह किस हद तक प्रभावशाली है।

2.8.1 सत्ता और प्रस्थिति–

प्रस्थिति और भूमिका सत्ता और स्थिति की अवधारणों से परस्पर संबद्ध है भूमिका व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सत्ता सौंपता है। दूसरे शब्दों में बहुत हद तक घरेलू और सामाजिक क्षेत्रों में पुरुषों और महिलाओं द्वारा उपयोग की जा रही सत्ता द्वारा प्रस्थिति का निर्धारण होता है। समाज में महिलाओं भी प्रस्थिति समझने के लिए पांच मुख्य पहलुओं की पहचान की गयी है जिस पर महिलाओं के नियंत्रण का आंकलन करना है।

1) महिलाओं का श्रम

2) संसाधनों जैसे आर्थिक स्वास्थ्य शिक्षा और राजनीतिक संसाधनों के ऊपर

3) लैंगिकता उनकी शारीरिक अखण्डता भौर सभी प्रकार के शारीरिक और मानसिक हिंसा से स्वतंत्र

4) उनके उत्पादन पर उनका नियंत्रण

5) गतिशीलता यह पुरुषों की तुलना में समाज में महिलाओं की स्थिति के माप और तुलना तथा उसकी प्रस्थिति की परिभाषा करने के सबसे महत्वपूर्ण मानदंड है। समाज में महिलाओं की स्वायत्ता और प्रस्थिति के लिए दो अन्य शब्द महत्वपूर्ण है। एक विशेष समाज में एक विशेष समय पर महिलाओं द्वारा आधारित सामाजिक स्थान तथा उनकी प्रस्थिति से सह संबंध है। हम निम्नलिखित की जांच करके महिलाओं की प्रस्थिति को समझ सकते हैं –

• निजी परिसंपत्तियों और संसाधनों तक उनकी पहुंच और उनका इस पर नियंत्रण ।

• सार्वजनिक संसाधनों तक उनकी पहुंच ।

• स्वंय के श्रम और आय पर उनका नियंत्रण ।

• उनका स्वंय के शरीर पर नियंत्रण – लैंगिकता, पुनरूत्पादन और शारीरिक सुरक्षा।

• वास्तविक गतिशीलता पर उनका नियंत्रण ।

• अस्पर्धणीय संसाधनों तक उनकी पहुंच और नियंत्रण–जैसे आत्मविश्वास, स्व–मूल्य, संवाद क्षमता, सूचना, ज्ञान और कौशल ।

• कानूनी ढांचे और समाधान तक पहुंच ।

2022– 23 के आँकड़ों के अनुसार , भारत में लगभग 27 प्रतिशत घरों की मुखिया महिलाएँ हैं। हालाँकि, गरीबी रेखा से नीचे के लगभग 35 प्रतिशत घरों की मुखिया महिलाएँ पाई गईं।

केवल घर की मुखिया बनने से ही काम नहीं चलने वाला। जिस देश में महिलाएं वीरांगनाओं के रूप में देश के लिए बलिदान दिया हो उस देश में आज के आधुनिक समाज में महिलाओं को केवल घरेलू कार्यों तक सीमित रखा जाता है। जबकि आज देश की राष्ट्रपति कई राज्यों की मुख्यमंत्री महिलाएं रही हैं और सत्ता को बखूबी ढंग से चलाया है और साबित किया है कि वो किसी से कम नहीं हैं। फिर भी आज समाज में उनको उनके हक से वंचित रखा जाता है। शहरी क्षेत्र में तो धीरे धीरे सुधार देखने को मिल रहा है उन्हें शिक्षा,तकनीकी,विज्ञान के क्षेत्र में बढ़ावा दिया जा रहा है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में तो उन्हें ये आधारभूत सुविधाएं नहीं मिल पातीं हैं। क्योंकि ग्रामीण समाज में आज भी बेटियों की शादी जल्दी कर दी जाती हैं। वही असुरक्षा की भावना, पितृसत्तात्मक विचारधारा, और परम्पराओं के कारण लोग आज भी घरों से बाहर नहीं जाने देना चाहते हैं।

जिससे उनको सरकार की तरफ से अवसर मिलने के बाद भी लाभ नहीं मिल पाता और यदि वे पढ़ेंगी नहीं शिक्षित नहीं होंगी तो उनका सरकारी गैर सरकारी नौकरियों, राजनीति,तकनीकी, कौशल विकाश में प्रतिनिधित्व नहीं बढ़ेगा और उनके इस अवसर का लाभ भी पुरुषों को मिलेगा और वे धीरे धीरे पीछे ही छूटती रहेंगी। आज भी विज्ञान,तकनीकी,उच्च शिक्षा,न्यायपालिका,चिकित्सा, रक्षा जैसे क्षेत्रों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व अल्प है। जबकि महिलाएं आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करती हैं और पुरुषों के बराबर ही उनको भी अधिकार मिले हैं। उन्हें भी जरूरत है कि वो सभी क्षेत्रों में अपना भागीदारी बढ़ाएं जिससे उनकी भी समस्याएं सुनी जाएं। आज महिलाओं के विरुद्ध अपराध में वृद्धि हुई है लेकिन मामला थाने से ही निपटने के प्रयास किए जाते हैं जिससे उन्हें न्याय नहीं मिल पाता। अगर महिलाएं पुलिस में होंगी न्यायपालिका में होंगी तो सबसे पहले समाज में ये भावना बढ़ेगी कि महिलाएं कमजोर नहीं है वे पुरुषों के सामन ही मजबूत हैं। दूसरे समाज में भावनात्म रूप से ये बदलाव होगा और अपराधियों के मन में ये डर रहेगा कि महिलाएं महिलाओं की

समस्या को सुन कर सही फैसले लेंगी और केवल थाने से ही मामले नहीं सुलझेंगे न ही गलत होने दिया जाएगा।

2.8.2 समाज में महिलाओं की प्रस्थिति : –

आर्थिक क्षेत्र में

अर्थव्यवस्था की बात किया जाए तो आज भी 75 प्रतिशत सरकारी और गैर सरकारी नौकरियों ओर पुरुष वर्ग का ही एकाधिकार बना हुआ है। वहीं महिलाओं का सरकारी नौकरियों में प्रतिनिधित्व 30 प्रतिशत से भी कम है जिसे नीचे देख सकते हैं–

सरकारी क्षेत्र	**महिलाओं की भागीदारी**
केंद्र सरकार की नौकरियां	लगभग 12.6 प्रतिशत
रेलवे में महिलाएं	लगभग 7 प्रतिशत
बैंकिंग क्षेत्र	30 प्रतिशत

सरकारी, गैर–सरकारी क्षेत्र में तो महिलाओं को नौकरियां मिल जा रही है और सरकार के जो भी प्रयास रह रहे हैं जो भी योजनाएं उसका उनका लाभ मिलता है लेकिन गैर सरकारी क्षेत्र में आरक्षण की कोई व्यवस्था नहीं होने की वजह से वहां केवल पुरुषों को ही नौकरी ज्यादा मिलती हैं। महिलाओं के लिए रास्ते कम है प्राइवेट सेक्टर में महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है वहां पर भी लगभग 70 प्रतिशत और 30 प्रतिशत की असमानता देखने को मिलती है जिससे महिलाएं अभी भी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं हो पाई हैं और उनको आत्मनिर्भर बनाने के लिए हमें गैर सरकारी क्षेत्र में आवश्यक कदम उठाने होंगे जिससे महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर और मजबूत बनाया जा सके अगर महिलाएं आर्थिक रूप से मजबूत होगी तो पहले वो वह पूरे घर को फिर पूरे समाज को और फिर पूरे देश को मजबूत करेंगी और देश की जीडीपी में अपना महत्वपूर्ण योगदान करेंगी। इनका यह योगदान देश को आर्थिक रूप से मजबूत करने में मदद करेगा। लेकिन यहां भी महिलाओं को बहुत सारी समस्याओं का सामना करने को मिलता है और यह यह

समस्या सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र में देखने को मिलता है इसमें महिलाओं को सबसे पहले लिंग आधारित भेदभाव का सामना करना पड़ता है जैसे कि ये महिलाएं हैं तो कमजोर होंगी है, इनको काम नहीं करना होता है, यह आराम करना चाहती हैं,उनके पास बुद्ध की कमी होती है,यह पुरुषों से धीरे होती है इस बातों से उनको संबोधित किया जाता है। जिससे उनका मनोबल गिराया जा सके और यह उनके मनोवैज्ञानिक दबाव को बढ़ाकर उनके लिए समस्या उत्पन्न करने जैसा है। फिर भी सरकारी और गैर सरकारी क्षेत्र में महिलाओं ने अपना परचम फहराया है और उन्होंने करके दिखाया भी है कि वह किसी से कम नहीं वह पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकती हैं। महिलाओं ने सरकारी क्षेत्र में बड़े पदों पर जैसे की आईएएस, आईपीएस, पीसीएस, चिकित्सा अधिकारी, पुलिस और शिक्षक के रूप में और बहुत सारे सरकारी क्षेत्र में आगे बढ़कर अपनी सेवाएं दे रही है। लेकिन कुछ राज्यों में तो आरक्षण की व्यवस्था है लेकिन अधिकतर राज्यों में आरक्षण की व्यवस्था न होने की वजह से उनका हक पुरुष उठा लेते हैं। गैर सरकारी क्षेत्र में देखे तो कोई आरक्षण की व्यवस्था नहीं होने से महिलाओं को कम अवसर मिल पाता है जबकि गैर सरकारी क्षेत्र में महिलाओं ने बहुत अच्छा काम किया है और वह इंजीनियर,डॉक्टर, अनुसंधानकर्ता के रूप में काम करते हुए बहुत बड़े–बड़े पदों को शोभायमन किया है। वह आज बड़ी–बड़ी कंपनियों में सीईओ जैसे पदों पर भी गई है इसमें इंद्र नई,चंदा कोचर आदि का नाम देखने को मिलता है और इनका यह काम बहुत ही सराहनी रहा है। वही गीता गोपीनाथन जैसी महिलाओं ने विश्व स्तर की संस्था डब्लू टी ओ जैसी संस्थाओं की प्रमुख बनकर यह साबित किया है कि वह किसी से कम नहीं है। लेकिन पुरुषवादी सोच के कारण और पुरुषों द्वारा महिलाओं को उन पदों तक न पहुंचने देने के कारण महिलाएं आज भी पीछे हैं। जबकि हम देख रहे हैं कि वर्तमान युग में महिलाएं उच्च पदों पर आसीन होकर साबित किया है कि वह हर वह काम कर सकती हैं जो पुरुष करता है और वह उन कार्यों को करने में दक्ष है और निपुण भी। उनको कोई दबा नहीं सकता अगर उन्हें उनके अवसर का लाभ सही तरीके से मिले। पुरुषों द्वारा उनकी अवसर की उपलब्धता को किसी न किसी रूप में दबाया जाता है और उन्हें लाभ से वंचित कर दिया जाता है जिससे

वह अपने अधिकारों और अवसरों से वंचित रह जाती है और अर्थव्यवस्था में उनका योगदान की बात की जाए तो उनकी जनसंख्या के अनुसार उनकी भागीदारी आज भी बहुत कम है। पुरुषों से तुलना करने पर हम पाते हैं कि महिलाएं आज भी 25 : से ज्यादा सरकारी और गैर सरकारी नौकरियों में अपना प्रतिनिधित्व सुनिश्चित नहीं कर पाईं हैं,अगर उन्हें मौका मिलता है तो वह अपने कौशल और बुद्धि से वह सब कार्य कर सकती हैं जो पुरुष करते हैं वह देश की प्रधानमंत्री से लेकर प्रदेश की प्रदेश के मुख्यमंत्री जिले की जिलाधिकारी, कांस्टेबल,चिकित्सा अधिकारी तक बन सकती हैं। अगर उन्हें उनका हक सही तरीके से मिले।

गैर सरकारी क्षेत्र	**महिलाओं की भागीदारी**
IT कंपनियां,स्टार्टअप	30–32 प्रतिशत
कृषि	70–75 प्रतिशत
घरेलू कार्य/अन्य	80–85 प्रतिशत

पुरुष आज भी बाहर के कार्यों को करते हैं और महिलाएं आज भी घरेलू कार्यों में संलग्न है जबकि जिन घरेलू कार्यों को महिलाएं कर रही हैं पुरुष उन्हें कार्यों को व्यवसाय के रूप में अपना कर अपनी आय का सृजन कर रहे हैं जैसे की खाना बनाना कपड़ा धुलना अधिकारियों को पुरुषों ने बाजार में रेस्टोरेंट और ड्राई क्लीनर्स के नाम से व्यवसाय के रूप में अपना लिया है वही घर की साइज सजा का कार्य महिलाओं ने सबसे अच्छे तरीके से किया है लेकिन यहां भी पुरुषों ने इस कार्य को अपना कर इंटीरियर डिजाइनर के नाम से एक नए व्यवसाय का सृजन कर यहां पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया है अगर महिलाएं इन्हीं कार्यों को जो यह घर में करती है खाना बनाना, कपड़ा धुलना, घर की साज सज्जा का ध्यान रखना अदि कार्यों को जो कि ये सदियों से करती आ रही है अगर महिलाएं इनको व्यवसाय के रूप में अपनाती हैं तो काफी धन कमा सकती है और खुद को आत्मनिर्भर भी बना सकती हैं परंतु पुरुषों ने महिलाओं को आज भी घर से बाहर नहीं निकलने देना चाहते हैं। वह महिलाओं को हमेशा परदे के पीछे रखना चाहते हैं जबकि जिन घरेलू

कार्यों पर उनका एक अधिकार था वहां पर भी पुरुषों ने अपना एक अधिकार स्थापित कर लिया है और उसको व्यवसाय के रूप में अपना कर अपने आत्मनिर्भर हो चुके हैं लेकिन वही घर की महिलाओं को अप्रत्यक्ष रूप से अपने ऊपर निर्भर कर देते हैं ताकि वह उन पर आर्थिक रूप से निर्भर रह सके।

वहीं आज प्रायः प्रत्येक समाज में महिलाओं की प्रस्थिति अनेक प्रश्न खड़े कर रही है। महिलाओं के व्यावसायिक और आर्थिक कार्यकलापों और राजनीतिक तथा सामाजिक जीवन में उनकी भागीदारी विशेष रूप से परिवार में उनकी बदलती हुई भूमिका के संबंध में अध्ययनों से इस बात के अधिक प्रमाण मिलते हैं कि सामाजिक संरचना के विकास क्रम का समाज में महिलाओं के विकास क्रम से निकट का संबंध है। 1975 के दौरान मुख्यतः महिला आंदोलनों और अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के प्रेरणा से समाजशास्त्रियों, मानवशास्त्रयों, मानव जाति, विज्ञानविद् और अन्य समाज वैज्ञानिकों विशेषकर महिला पेशेवरों ने महिलाओं की प्रस्थिति भूमिका एवं अनुभव और संभावना का पुनर्मूल्यांकना शुरू किया है। इसके परिणामस्वरूप यह स्पष्ट होता जा रहा है कि जीवन की वास्तविकता से दूर पुरुष सर्वोच्चता अपेक्षाकृत आधुनिक प्रघटना है और यह मुख्य रूप से पाष्चायत्य पूंजीवादी सामाजिक संरचना से उद्भूत है जिसमें पारिवारिक पद्सोपन में पुरुषों और महिलाओं के बीच सक्रिय द्वंद्व वर्ग पद्सोपान में सक्रिय द्वंद को प्रतिबिम्बत करता है और महिलाओं का शोषण वर्ग शोषण का तर्कसंगत विस्तार है। पूर्व–वर्ग समाजों में जैसे वे समाज जो शिकार, संचयन और उद्यान कृषि पर निर्भर थे। वास्तव में जीवन–निर्वाह और सामाजिक कार्यकलापों में महिलाएं लगभग पूरी समानता का उपभोग करती थी।

2.8.3 प्रारम्भिक समाजों में महिलाओं की प्रस्थिति : समतावादी से पितृसत्तात्मक समाजों की ओर परिवर्तन–

समाज के विकास के आरंभिक चरण में (जिसे एंजेल्स ने असभ्या वस्था और बर्बर अवस्था कहा है लिंग विषयक असमानता पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं के पक्ष में था) लिंग आधारित श्रम विभाजन का अस्तित्व था, पुरुष भोजन एकत्र करने के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी था और महिलाएं घरेलू काम–काज के लिए उत्तरदायी थीं। किंतु

महिलाएं पुरुषों के अधीन नहीं थीं। निजी संपत्ति की अवधारणा अभी अपने प्रारंभिक स्वरुप में ही थी और साधारण औजार, बर्तन और हथियार ही निजी संपत्ति होते थे। उनके पास जो निजी संपत्ति होती थी वह महिला वंशक्रम में ही विरासत में हस्तांतरित होता था। इसका कारण यह था कि एक स्त्री विवाह का अस्तित्व नहीं था। समाज व्यवस्था रहित था और महिला अपने बच्चों को संपत्ति हस्तांतरित करती थी। एन्जेल्स के अनुसार– बर्बर अवस्था से ही महिलाओं को दुखों की शुरुआत हो गई। आदिम दशाओं ने पुरुषों को काम पहुंचाया, जिसे उन्होंने सिर्फ एक बार ही छोड़ा प्रारंभिक कृषि उधान समाजों में जब उन्होंने अल्पकाल के लिए महिलाओं को खेती करने तथा विरासत में भूमि प्राप्त करने की अनुमति दी, किंतु पुरुषों ने अपना प्रभुत्व का अभियान निष्ठुरतापूर्वक आगे बढ़ता रहा।

प्रारम्भिक कृषि समुदायों में पुरुषों ने अपने श्रेष्ठ प्रस्थिति और शक्ति का प्रयोग भूमि पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए किया उन्होंने धार्मिक विश्वास पद्धति का प्रतिपादन किया जिसने उनके प्रभुत्व को विधिसम्मत बना दिया। उन्होंने यह सुनिश्चित करने के लिए कि विरासत के पुरुष वंशक्रम के माध्यम से संपत्ति हस्तांतरित हो पितृसत्तात्मक परिवारों की स्थापना की, समाज के विकास के साथ उन्होंने सामाजिक नियंत्रण के यादृच्छिक कानूनों और पद्धतियों सामाजिक पुनरुत्पादन की एक बढ़ती हुई प्रक्रिया है, धीरे–धीरे पुरुष ने अपने अनुभव का अनुसरण किया और अपने व्यावहारिक जीवन की भांति अपने प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्वों में यह पुरुष सिद्धांत है जो विजयी रहा है।

निजी संपत्ति की अवधारणा के प्रतिपादन के पश्चात पुरुषों ने आधिपत्य की स्थिति प्राप्त की। पुरुषों ने गृहस्थी में महिलाओं की सत्ता को समाप्त कर दिया। स्वयं एंजेल्स के शब्दों में पुरुषों ने घर में भी बागडोर अपने हाथ में ले ली, महिला अपदस्थ कर दी गई, दासी बना दी गई, वह पुरुषों की वासना की गुलाम, बच्चा पैदा करने का निमित्त मात्र बन कर रह गई। शनैः – शनैः पुरुषों का अपने लिए यौन संगी के चयन में महिलाओं पर नियंत्रण बढ़ता गया और अंततः अनुवर्ती सभ्यता अवधि के दौरान एक विवाह अस्तित्व में आया। उस समय तक पुरुषों ने महिलाओं पर पूरा–पूरा नियंत्रण स्थापित कर लिया जो उस समय तक पित्रसत्ता बन चुका था।

तथापि, स्टीफेनी कून्ट्य और पैरा हेन्डरसेन (1986) एन्जेल्स से सहमत नहीं है। वे इस बात से इंकार करते हैं कि इतिहास का आरम्भ महिला के प्रभुत्व से हुआ। उनका तर्क है की अति प्रारंभिक मानव समाजों का आरम्भ लिंगों के बीच समानता के साथ हुआ। वे मानते हैं कि आज महिला के उत्पीड़न की जड़ें, कतिपय सामाजिक कारणों से है। वे इस बात पर जोर देते हैं कि लिंग विषयक असमानता और महिलाओं की निम्न प्रस्थिति वस्तुओं के उत्पादन में पुरुषों और महिलाओं की भूमिका में अंतर का परिणाम था न कि प्रजाति के पुनर्जनन में प्रत्येक द्वारा किए गए योगदान में अंतर का परिणाम। उन्होंने एक हद तक एन्जेल्स का समर्थन किया कि संपत्ति के स्वामित्व में परिवर्तन के परिणाम स्वरूप सामाजिक असमानता अस्तित्व में आया। सामुदायिक सम्पत्ति के पश्चात पशुपालन और कृषि कर्म की शुरुआत में लिंग विषयक असमानता और महिलाओं की निम्नस्थिति की नींव डाली। उन्होंने लिंग विषयक असमानता के उद्‌गम के बारे में जानने का प्रयास किया है और उनके अनुसार लिंग विषयक असमानता और पुरुष प्रभुत्व का मूल विवाह व्यवस्था में है अर्थात पितृस्थानीय का बहुपत्नी विवाह जिसमें पुरुष अनेक महिलाओं के साथ विवाह कर सकता था और इसके द्वारा श्रम शक्ति में वृद्धि कर सकता था। उन्होंने दावा किया कि मातृ स्थानीय समाज अधिक समतावादी थे और इसमें महिलाओं के हाथ में अधिक शक्ति थी। मातृस्थानीय समाज में पुरुषों के लिए अपने हाथ में सम्पत्ति संकेन्द्रित करने की संभावना कम थी।

कई विद्वानों ने पुरुष प्रभुत्व और महिलाओं की निम्न प्रस्थिति के मुद्‌दे पर ऐतिहासिक प्रघटना के रूप में संबोधित करना शुरू कर दिया है जो संस्कृति की मानवीय प्रकृति के कुछ शाश्वत पहलू से प्रभावित होने की अपेक्षा परिस्थितियों के विशेष समूह में स्थित है। अनेक मार्क्‌सवादी और समाजवादी स्त्री अधिकारवादी दावा करते है कि लिंगों के बीच असामानता कैसे और क्यों आया, यह पता लगाने के लिए इतिहास का निरीक्षण करना आवश्यक है। लिंग विषयक स्तरीकरण वाले समाज में परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण कारक नातेदारों के समूह को सामुदायिक संपत्ति जिसका इस संपत्ति पर अनन्य अधिकार था, के रूप का विकास (नातेदार कारपोरेट संपत्ति)। नातेदारी के वरिष्ठ सदस्यों का संपत्ति पर नियंत्रण स्थापित हुए। संग्रहकर्ता

के रूप में महिलाएं उत्पादक के रुप में कार्य करती रही। धीरे–धीरे उनका अपने उत्पादों पर से नियंत्रण समाप्त हो गया। इतिहास के क्रम में पितृस्थानीय, मातृस्थानीय और बहुविवाह समाजों का विकास हुआ था। इस प्रकार विभिन्न पूर्व औद्योगिक समाजों में एक समाज से दूसरे समाज में महिलाओं की स्थिति और लिंग संबंधी असमानताओं में भिन्नता थी और औद्योगीकरण के पश्चात इसमें अनेक प्रकार से परिवर्तन आया है। औद्योगिक युग की तुलना में पूर्व औद्योगिक युग में पुरुषों और महिलाओं में कार्य और भावनात्मक भूमिकाओं में कहीं अधिक परस्पर भागीदारी थी।

औपनिवेशिक अमेरिकाके पूर्व औद्योगिक समाज में पुरुषों और महिलाओं में अधिक समानता थी। महिला परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए श्रम करती थीं और पुरुष बच्चों के लालन–पालन में कहीं अधिक बड़ी भूमिका निभाते थे। औद्योगिकरण के साथ इस प्रवृति में बदलाव आया, महिलाएं बहुधा बच्चे की देखभाल के लिए घर में रहती थीं और पुरुष काम करने फैक्टरियां जाते थे । औद् योगिकरण के साथ ही लिंग विषयक भूमिकाएं और अधिक सुत्यक्त हो गई जितना कि पहले कभी नहीं थी।

आधुनिक औद्योगिक समाजों में हम लिंग विषयक भूमिकाओं में महत्वपूर्ण विभिन्नताएं पाते हैं। उदाहरण के लिए, समाजवादी समाजों में पूंजीवादी समाजों की तुलना में पुरुषों और महिलाओं के बीच अधिक समानता होने की प्रवृत्ति रहती है। वस्तुत : एक समाज के अंदर भी हम विभिन्न वर्गों और प्रजातीय समूहों के लिए लिंग विषयक भूमिकाओं में महत्वपूर्ण भिन्नता पाते हैं। पाश्चात्य यूरोपीय समाजों में औद् योगिकरण का परिणाम प्रभुत्वशाली परिपक्व स्त्रियोचित भूमिका के रूप में गृहणियों की आधुनिक भूमिका थी। इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति (1750 से 1841) के पश्चात आरंभिक चरणों में फैक्ट्री प्रणाली ने व्यवस्थित रूप से उत्पादन की इकाई के रूप में परिवार का स्थान ले लिया। महिलाओं को फैक्ट्रियों में रोजगार मिल गया जहां उन्होंने वस्त्र उद्योग में अपना परम्परागत कार्य जारी रखा ।

1841 से 1914 में प्रथम विश्व युद्ध आरम्भ होने तक यूरोप में पुरुष कामगारों और सुधारकों के समन्वित दबाव ने उद्योग में महिलाओं के नियोजन को सीमित रखा

और धीरे–धीरे फैक्टरी से संपूर्ण महिला श्रम बाहर हो गया। ऐन ओकली (1974) कहती हैं कि 1914 से 1950 तक महिलाओं को बढ़ते हुए नियोजन और साथ ही गृहणी की भूमिका पर भी पकड़ बनाए रखने की प्रवृत्ति थी। इन वर्षों के दौरान इंग्लैण्ड में महिलाओं को अनेक कानूनी और राजनीतिक अधिकार मिले थे। किन्तु इन सबका उनके जीवन में केंद्रीय माँ–गृहणी भूमिका पर भी पकड बनाए रखने की प्रवृत्ति भी। इन वर्षों के दौरान इलैण्ड में महिलाओं को अनेक कानूनी और राजनीति अधिकार मिले थे किंतु इन सबका उनके जीवन में केंद्रीय मां गृहणी भूमिका पर नगण्य प्रभाव पड़ा था। उनका निष्कर्ष है कि औद्योगिकरण ने महिलाओं की भूमिका को कई तरह से प्रभावित किया था। घरेलू जीवन का दैनिक नियमित कार्यों से पुरुष का अलगाव और महिलाओं तथा बच्चों की पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता का प्रादुर्भाव और गृहकार्य तथा बच्चे के देखभाल के काम का अन्य कार्यों से पृथककरण इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के रूप में संस्थागत हो गया। बीसवीं शताब्दी में समय बीतने के साथ ये सामान्यीकरण और भी कम मान्य रह गया।

महिला मताधिकार प्राचीन यूनान और गणतंत्रवादी रोम तथा 18वीं शताब्दी के अंत तक यूरोप में जिन कुछ लोकतंत्रों का उद्भव हुआ था उनमें भी महिलाओं को मताधिकार से वंचित रखा गया था। जब मताधिकार का विस्तार हुआ जैसा कि 1832 में यूनाइटेड किंगडम में हुआ था, तब भी महिलाओं को सभी मताधिकारों से वंचित रखा गया। महिलाओं के मताधिकार का प्रश्न अंततः 19वीं शताब्दी में मुद्दा बना और यह संघर्ष विशेष रूप से ग्रेट ब्रिटेन तथा यूनाइटेड स्टेट्स में काफी जोरदार था, किंतु महिलाओं को कम से कम राष्ट्रीय आधार पर मताधिकार प्रदान करने में ये देश अग्रणी नहीं थे।

बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में न्यूजीलैण्ड (1893), आस्ट्रनिया (1902), फिनलैण्ड (1906) और नार्वे (1913) मैं महिलाओं ने राष्ट्रीय चुनावों में मताधिकार हासिल कर लिया था। स्वेडेन और यूनाइटेड स्टेट्स में उन्हें कुछ स्थानीय चुनावों में मताधिकार प्राप्त था। प्रथम विश्व युद्ध और इसके पश्चात यूरोप के देशों में तथा अन्यत्र भी महिलाओं को मताधिकार देने में गति आई। 1914.39 की अवधि में 28 अतिरिक्त देशों की महिलाओं में या तो पुरुषों के साथ समान मताधिकार या राष्ट्रीय

चुनावों में मताधिकार हासिल कर लिया। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात अन्य कई देश इस सूची में शामिल हो गए और इसका एक कारण यह था कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात स्वतंत्रता प्राप्त करने वाले लगभग सभी देशों ने अपने संविधान में पुरुषों और महिलाओं को समान मताधिकार की प्रतिश्रुति प्रदान की। भारत में महिलाओं को पूर्ण मताधिकार 1999 में संविधान द्वारा दिया गया। पाकिस्तान में 1996 में राष्ट्रीय चुनावों में महिलाओं को पूर्ण मताधिकार प्राप्त हुआ।

समकालीन समाजों में लिंग विषयक असमानताओं महिलाओं की निम्न प्रस्थिति एवं महिलाओं के मौन शोषणा की व्याख्या के लिए पितृसत्ता सबसे महत्वपूर्ण और प्रमुख अवधारणा है। केट मिलेट (1970) ने लिंग और पुरुष केंद्रित सत्ता संरचना संबंधों जिसमें समाज में महिलाएं पुरुषों द्वारा नियंत्रित की जाती है, पर आधारित अन्तर्निहित राजनीति पर आधारित आधिपत्य एवं अधीनता की अवधारणा प्रस्तुत की है। उनके अनुसार इस तरह के संबंध पितृसत्ता एक प्रणाली जिसमें पुरुष का महिलाओं पर आधिपत्य होगा के आधार पर व्यवस्थित है। वह विश्वास करती हैं कि पितृसत्ता मानव समाज में सबसे व्यापक विचारधारा है और सत्ता का आधार तथा अधिक कठोर अधिक समान्य और अधिक स्थायी प्रणाली है। वह सुझाव देती हैं कि आधुनिक समाजों में लिंग सभी व्यक्तियों के लिए पहचान का प्राथमिक स्रोत है। वह मानव समाज में पितृसत्ता के अस्तित्व की व्याख्या करने के लिए आठ कारकों को चिन्हित करती है :

1) प्राणिय विज्ञानिकियय
2) सैद्धान्तिकय
3) समाजशास्त्रीयय
4) वर्ग और अधीनता के बीच संबंधय
5) शैक्षणिक कारकय
6) पौराणिक कथा और धर्मय
7) मनोवैज्ञानिकय
8) भौतिक शक्ति

वह पितृसत्तात्मक विचारधारा के सृजन के लिए श्रेष्ठतर पुरुष शक्ति और पुरुष (आक्रामक) तथा महिला (निष्क्रिय) के समाजीकरण के महत्व को महत्वपूर्ण मानती हैं। केट के लिए परिवार पितृसत्ता की अत्यधिक महत्वपूर्ण संस्था है हालांकि पुरुष राज्य के माध्यम से विस्तृत समाज में भी शक्ति का प्रयोग करते हैं। परिवार में बच्चों को वैधता प्रदान करने की भी आवश्यकता है, अर्थात सामाजिक रूप से मान्यताप्राप्त पिता जिससे भी पुरुषों को एक विशेष रूप से प्रभुत्वशाली स्थिति प्राप्त होती है। माताएं और बच्चे पतियों और पिताओं की स्थिति पर निर्भर करते हैं।

इस प्रकार परिवार पीढ़–दर–पीढ़ी पितृसत्ता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह मानती हैं कि महिलाओं की जाति सदृश प्रस्थिति है जो सामाजिक वर्ग के दायरे से बाहर कार्य करता है। यहां तक कि उच्च वर्गीय महिलाएं पुरुषों के अधीन हैं। मिल्लेट इसे इस रूप में स्पष्ट करती हैं कि महिलाओं की पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता उन्हें अधिकतर स्थानों पर वर्ग व्यवस्था में बाहर रखती हैं। पुनः ज्ञान और शिक्षा का अभाव ही महिलाओं की शक्ति को सीमित करता है। आर्थिक असमानताएं शिक्षा से और बढ़ती हैं। धर्म भी पुरुष प्रधानता को वैद्य ठहराने का एक तरीका है। पुरुषों की शक्ति का एक अन्य स्रोत भी मनोविज्ञान है। महिलाएं निष्क्रिय चित्तप्रवृत्ति और हीन भावना विकसित करती हैं तथा पुरुषों के अधिपत्य को ऐसे ही स्वीकार कर लेती हैं। अंत में मिल्लेट पुरुषों के प्रभुत्व का अंतिम स्रोत शारीरिक बल मानती हैं। वह यह कभी भी स्वीकार नहीं करती हैं कि महिलाएं शारीरिक रूप से कमजोर है किंतु उन्हें इस तरह का शारीरिक और भावनात्मक प्रशिक्षण दिया जाता है कि वे किसी पुरुष द्वारा अपने विरुद्ध प्रयोग किए गए बल का प्रतिरोध नहीं कर सकें। तथापि समाज में महिलाओं की अलाभ की स्थिति और उनके साथ असमानतापूर्ण व्यवहार को समझने के लिए मिल्लेट का योगदान काफी महत्वपूर्ण है। शीला राऊबोयम (1973) रॉबर्ट मैकडोनफ और राचेल हैरिसन (1978) जैसे अनेक विद्वानों ने मिलेट की आलोचना की है। सभी समाजो को पितृसत्तात्मक बता कर उन्होंने उन बहुत सी रीतियों जिससे समाजों ने लिंग की परिभाषा की है, की उपेक्षा की है। उन्होंने समाज में महिलाओं की अलाभ की स्थिति के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक महिलाओं के पास सम्पदा और आर्थिक शक्ति की कमी की उपेक्षा करने के

लिए भी मिल्लेट की आलोचना की है। पितृसत्ता की अपेक्षा पूंजीवाद आधुनिक समाजों में महिलाओं के उत्पीड़न और हीन स्थिति को कहीं अधिक ठीक से स्पष्ट करती है।

एम० जेड० रोसाल्डो (1974) का विचार है, कि प्रत्येक ज्ञात समाज में महिलाएं अलाभ की स्थिति में हैं, सर्वत्र महिलाओं को कम मान्यता और संस्कृति सम्मत प्राधिकार प्राप्त है। उन्होंने ही सर्वप्रथम यह तर्क सार्वजनिक और निजी दुनिया के बीच विभाजन का परिणाम महिलाओं की अधीनता है। उसके लिए घरेलू क्षेत्र में परिवार और परिवार के निवास स्थान जीवन है जबकि सार्वजनिक क्षेत्र में धार्मिक अनुष्ठान और धर्म, राजनीति और अर्थव्यवस्था से संबद्ध कार्यकलाप और संस्थाएं मिल हैं। धार्मिक और राजनीतिक जीवन में पुरुषों की संलग्नता के परिणामस्वरुप वे घरेलू इकाइयों, जो महिलाओं की जीवन की धुरी है, पर शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। वह मानती हैं कि कुछ समाजों में अन्य समाजों की अपेक्षा लिंगों के बीच असमानता अधिक है। इसके बावजूद भी वह ऐसा मानते हुई प्रतीत नहीं होती कि पूर्ण रूप से समानतावादी समाज की संभावना है। यदि पुरुष घरेलू क्रियाकलापों में अधिक सम्मिलित हो तो महिलाएं समानता के निकट पहुँच सकती हैं। अफ्रीका के म्बराइट पिग्मीज का समाज अपेक्षाकृत समतामूलक है क्योंकि पुरुष और महिलाएं घरेलू और आर्थिक जीवन दोनों में सहयोग करते हैं।

निःसंदेह निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में पृथकता अनेक समाजों में अपेक्षाकृत शक्तिहीनता और निम्न प्रस्थिति का विश्लेषण करने और इसकी व्याख्या करने का उपयोगी तरीका है। तथापि इसमें कठिनाइयां भी हैं। लिण्डा इमैरी और ऑड्री मिडलटन (1983) तर्क देते हैं कि सार्वजनिक क्षेत्र में भी महिलाओं के क्रियाकलापों का अवमूल्यन करने की प्रवृत्ति है। घर के बाहर भी नियोजित महिलाओं को बहुधा पुरुषों की तुलना में कम महत्वपूर्ण माना जाता है। निश्चित रूप से महिलाओं के बढ़ती नौकरियों ने भी कार्यक्षेत्र के अंदर महिलाओं के लिए समानता की स्थिति उत्पन्न नहीं की है।

2.8.4 विभिन्न धर्मो में महिलाओं की प्रस्थिति–

अनेक लेखकों ने ध्यान दिया है कि ऐतिहासिक दृष्टि से विश्व के अधिकांश धर्मो के अंदर महिलाएं हमेशा से आधिपत्य में नहीं थीं। उदाहरण के लिए, आर्मस्ट्रांग (1993) का तर्क है कि प्रारम्भिक इतिहास में महिलाएँ आध्यात्मक खोज में केंद्रीय मानी जाती थीं। मध्यपूर्व एशिया और यूरोप में पुरातत्वविहिनों ने महान मातृदेवियों के अनेक प्रतीकों की खोज की है। समाजों के विकास के अनेक देवी और देवता थे किंतु मातृदेवी की अभी भी महत्वपूर्ण भूमिका थी। आर्मस्ट्रांग ने नोट किया "मातृदेवी समस्त देवताओं में सम्मिलित कर ली गई तथा एक शक्तिशाली देवी के रूप में बनी रहीं। उन्हें प्राचीन मेसोपोटामिया में ग्रीष्मकाल में इनान्ना, बेबीलोन में इष्तर, कन्नान में अनत या अशेराह, मिस्र में इसिस और युनान में एफ्रोडाइट कहा जाता था। सभी संस्कृतियों में लोगों ने अपने आध्यात्मिक जीवन में मातृदेवी के महत्व के बोर में कहा।[2]

शनैः–शनैः मातृदेवी का पतन हो गया। बेबीलोन में समुद्र की देवी तियायोत का स्थान पुरुष देवता मार्डुक ने ले लिया। एकेश्वरवाद–अनेक ईश्वर में विश्वास रखने की अपेक्षा एक ईश्वर में विश्वास को स्वीकार करने के साथ ही स्त्री देवियों का अंतिम रूप से पटाक्षेप हो गया। यह याहवेह, अब्राहम का देवता के साथ उत्पन्न हुआ। इससे भी अधिक यह हिब्रू इजरायल का देवता बाद में ईसाइयों और मुस्लिमों का देवता बनता है जिन्होंने स्वंय को अब्राहम सभी उपासकों के जनक की आध्यात्मिक संतति माना। अतः एतिहासिक रूप से धर्म के विकास में ईश्वर की पुरुष विशिष्टताओं को महत्व दिया गया ईसाई, ईस्लाम मौर हिन्दू–इन सब धर्मों ने महत्वपूर्ण चरणों माध्यम से मानवता के विकास का विधान किया किन्तु जहाँ एक महिलाओं के कल्याण का विषय था इन सभी धर्मों में विभिन्न एतिहासिक कालों में महिलाओं पर नये बोझ लादे गये। इस प्रकार समाज में महिलाओं की प्रस्थिति के निर्धारण में धर्म की केन्द्रीय भूमिका है और एक धर्म विशेष में महिलाओं की समस्याएं है और इनका संबोधन और निदान एक लिंग विषयक भेद, पुरुष प्रभुत्व,

---

[2]इंजीनियर, असगर अली (2019) महिलाएं और धर्म : एक बदलता परिदृष्य,पृ0सं.– 97

पितृसत्तात्मकता और महिलाओं के प्रति सदियों से चले आ रहे पूर्वाग्रहों से जुडी समस्याओं के रूप में होना चाहिए।[3]

(1) महिलाओं की भूमिका और धार्मिक अनुष्ठान –

अनेक धर्मों के शास्त्रीय उपदेशों में पुरुषों और स्त्रियों के बीच समानता पर जोर था। किंतु व्यवहार में महिलाओं को समानता प्राप्त नहीं थी। नि :संदेह अनेक धर्मो में महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, किंतु यह सदैव ही पुरुष की भूमिका में प्राय : अधीनस्थ है और यह सार्वजनिक की अपेक्षा निजी क्षेत्र में होता है। इस प्रकार विभिन्न धार्मिक आस्थाओं द्वारा महिलाओं का अवमूल्यन किया गया है। धर्म के पितृसत्तात्मक अपनिर्वचन की प्रवृत्त हमेशा से ही है।

होल्म (1994) इस संबंध में अनेक उदाहरण देते हैं। बौद्धधर्म में पुरुष और महिलाएं दोनों क्रमशः भिक्षु और भिक्षुणी के रूप में धार्मिक भूमिका निभा सकते हैं किंतु सभी भिक्षुओं को भिक्षुणियो से वरिष्ठ समझा जाता था। हिंदू धर्म में सिर्फ पुरुष ही ब्राहमणवादी पुरोहित बन सकते हैं। इस्लाम में कुछ क्षेत्रों में महिलाओं को पूजा अर्चना के लिए मस्जिद में प्रवेश करने की अनुमति नहीं है और पुरुष ने सभी कानूनी निर्णय दिए हैं। कट्टरपंथी यहूदियत (जुडइज्म) समारोहों में सिर्फ पुरुषों को पूर्ण भागीदारी की अनुमति देता है। जापान के लौकिक धमों में महिलाएं सिर्फ सार्वजानिक अनुष्ठानों में हिस्सा ले सकती हैं। चीनी लोकप्रिय धर्म में महिलाएं सिर्फ कम विशिष्ट आत्म (यिन) से सम्बद्ध है जबकि पुरुष अधिक विशिष्ट और शक्तिशाली आत्मका (यांग) से सम्बद्ध है।

ईसाई धर्म भी पुरुष प्रभुत्व वाला है। चर्च के इतिहास की पहली पांच सदियों में ब्रह्मचारी पुरुषों ने अधिकतम प्रभावोत्पादक विचारों का प्रतिपादन किया और मध्यकालीन चर्च के महत्वपूर्ण विकास और सुधार को भी पुरुषों ने ही मूतरूप प्रदान किया (होल्म 1994)। विश्व की प्रमुख धर्मो में सिक्ख धर्म सर्वाधिक समतावादी है क्योंकि सभी पद समान रूप से पुरुषों और महिलाओं के लिए खुले हुए है हालांकि व्यवहार में अल्पसंख्या में ही महिलाएं धर्म में महत्वपूर्ण पदों पर हैं। सिक्ख विचारधारा के अनुसार, सभी महिलाओं और पुरुषों की समान प्रस्थिति है। सभी मनुष्य चाहे

[3]इंजीनियर, असगर अली (2019) महिलाएं और धर्म : एक बदलता परिदृष्य,पृ0सं.– 97

उनका लिंग, जाति, प्रजाति या जन्म कुछ भी हो उस पर विचार किए बिना अपने कर्मों में परखा जाता है। इस निश्चित मत के साथ, सिक्ख गुरुओ में महिलाओं को धर्मसंगति (कांग्रेगेशन) में शामिल होने, लंगर (साझा रसोई) में पुरुषों के साथ मिल कर काम करने तथा गुरुद्वारों सभी अन्य धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया। गुरुओं ने विवाह की पुनः परिभाषा सिर्फ एक पत्नी के साथ परिणय सूत्र में बंधा हुआ के रूप में की और यह पाठ पढ़ाया की पुरुष और महिला दोनो को समान रूप से दाम्पत्य निष्ठा बनाए रखने की जरूरत है। गुरुओं ने बहुविवाह की प्रथा के प्रति विरोध प्रकट किया तथा अपने उपदेशों में सिर्फ एक पत्नी रखने की ही बात कही। तीसरे गुरू, गुरु अमरदास ने एक विवाह की वकालत की तथा पर्दा पहनने और बालिका हत्या की भी भार्सना की। गुरूओं ने महिलाओं की समानता की दलील लेने के लिए जो कदम उठाए उससे भारतीय समाज की परम्परा में क्रांति आई। महिलाओं ने जैसे ही सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक मामलों में हिस्सा लेना शुरू किया पुरुषों के समान साझीदार के रूप में उनका योगदान और मूल्य अधिक स्पष्ट होता गया। गुरुओं ने शिक्षा दी कि महिलाएं और पुरुष ईश्वर की नजरों में समान हैं और इसी तरह घरती पर अधिकारों के मामले में समान हैं।

विभिन्न धमों में महिलाओं की दूसरे दर्ज की प्रस्थिति बहुधा उसकी लैंगिकता से सम्बद्ध है। मासिक धर्म और बच्चो के जन्म को बहुधा प्रदूषक माना जाती है। अनेक धर्मो में मासिक धर्म के समय महिलाओं को पवित्र स्थलों में प्रवेश करने और पवित्र वस्तुओं को स्पर्श करने की मनाही थी। उदहारण के लिए हिंदु महिलाओं को गर्भधारण तथा मासिक धर्म के समय पवित्र वस्तुओं को स्पर्श करने तथा पारिवारिक धर्मस्थलों में प्रवेश करने से प्रतिषेध है। मुस्लिम महिलाओं को इस अवधि के दौरान कुरान को स्पर्श करने मस्जिद जाने तथा नमाज पढ़ने की अनुमति नहीं है।

(2) महिलाओं के उत्पीड़न के लिए धर्म एक साधन के रूप में–

साइमन डी बिआयुवोर (1949) के अनुसर धर्म का प्रयोग उत्पीड़को द्वारा उत्पीड़ित समूह पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए किया जाता है और यह समाज में महिलाओं को दोयम दर्जा प्रस्थिति के लिए हथियार के रूप में काम करता है।

सामान्यतया धार्मिक आस्थाओं पर पुरुषों का नियंत्रण रहा है। वह अपने प्रभुत्व के समर्थन में संहिता लिखता है इसे ईश्वर का समर्थन बता कर वह अत्यधिक लाभ उठाता है। वह पाश्चात्य ईसाई महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में लिखती हैं सभी प्रमुख धर्मो के लिए पुरुष दैवीय अधिकार से स्वामी है और इस प्रकार पद दलित महिलाओं का दमन करता है। तथापि आधुनिक समाजों में परिवर्तन के प्रमाण हैं जिसमें धर्म में पुरुषों और महिलाओं के बीच असमानता शनैः शनैः कम हो रहा है।

नावल एल सादवी (1980) इस्लाम के अंतर्गत महिला उत्पीड़न के सृजन और उसकी स्वतंत्रता में धर्म के महत्व पर विचार करती हैं। उनके अनुसार ईसाई धर्म बहुत अधिक कठोर और कट्टरपंथी है तथा पितृसत्तात्मक पद्धति के कारण महिलाओं का उत्पीड़न होता है जो समाज के विकास के कतिपय चरण में पहुंचने के बाद अस्तित्व में आया। इस पर भी वह महिलाओं के उत्पीड़न में धर्म को महत्वपूर्ण हथियार के रूप में मानती हैं। पुरूष अपने हितों को साधन के लिए, महिलाओं के उत्पीड़न को औचित्यपूर्ण अथवा वैद्य ठहराने में धर्म को विकृत कर देते हैं। वह यह भी मानती है कि एकेश्वरवादी धर्मो के विकास के पश्चात धर्म महिलाओं का उत्पीड़क बन गया। इस प्रकार के धमों ने उस समय प्रचलित पितृसत्ता और वर्ग समाजों के मूल्यों से प्रेरणा और मार्गदर्शन लिया। उदाहरण के लिए यहूदी धर्म ने पितृसत्तात्मक सत्ता अब्राहम से ग्रहण की। इस्लाम में भी समाज ने परिवार के पुरुष प्रधान, सर्वोच्च शासक अथवा खलीफा अथवा इमरान के प्राधिकार के अंतर्गत पुरुष पितृसत्ता के प्रभुत्व के माध्यम से पद्धति का विकास हुआ। आज भी मिस्र जैसे देशो में महिलाएं धार्मिक आधार सिद्धांत के अंतर्गत अत्यधिक प्रतिबंधात्मक विवाह कानून के अधीन है। अल सादवी ईसु को क्रांतिकारी नेता मानती हैं जिसने महिलाओ के उत्पीड़न का विरोध किया। प्रारम्भिक ईसाई धर्म में नैतिक संहिता, अन्य धर्मो और संहिताओं की तुलना में अधिक कठोरतर थीं जो लिंगों की बहुत हद तक समानता की दृष्टि से देखते थे। पुरुष की तुलना में हीन विशेषाधिकार विहीन प्रस्थिति में रखा गया था।

पितृसत्तात्मक प्रणाली अभी भी सर्वोच्च था और सामन्तवादी व्यवस्था में क्रमश : परिणति के साथ ही यह और भी उग्र होता गया।[4]

इस्लाम में महिलाएं

यह सामन्यतया विश्वास किया जाता है कि पूर्व इस्लाम समाज में महिलाओं की हीन प्रस्थिति थी और उन्हे मात्र संपत्ति के रूप में देखा जाता था और वे निकटतम पुरुष पितृसत्तावादी की अधीनता में भी जिसका उन पर अधिकार होता था। किंतु अनेक क्षेत्रों में इस्लाम ने अपनी प्रस्थिति में सुधार किया। जैसे बहुपत्नी विवाह, को चार पत्नियों तक सीमित रख कर, बालिका–शिशु हत्या को प्रतिसिद्ध कर, विरासत में प्राप्त आय का एक हिस्सा महिलाओं को प्रदान कर, मेहर की वधु के लिए उपहार घोषित करके और विवाह के नियमों का पुन : अनुस्थापन करके, विशेष रूप से इस्लाम ने निम्नलिखित तरीके से महिलाओं की प्रस्थिति के सुधार में योगदान किया–

(क) आय माता का सम्मान करने तथा उसके साथ सद्व्यवहार करने पर बल देकर।

(ख) महिला को उसकी अपनी संपत्ति का स्वामी बना कर जिसमें उसके पति को उसकी अनुमति के बिना हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है।

(ग) उसे कतिपय आधारों पर तलाक का दावा करने का अधिकार प्रदान करके।

(घ) उसे किसी भी सार्वजनिक पद जिसमें साम्राज्य के सुल्तान या वाजीर या न्यायाधीश का पद भी शामिल है धारण करने का अधिकार प्रदान करके।

(ङ) तलाक के बाद उसे पुनर्विवाह करने की स्वतंत्रता प्रदान कर और

(च) उसे अध्ययन करने तथा ज्ञान अर्जित करने के ही प्रोत्साहित करके ।

कुरान और इस्लाम की अन्य धार्मिक पुस्तकें इस बात का प्रमाण हैं कि इस्लाम में महिलाओं के साथ बुरा बर्ताव नहीं किया जाता था। अल सादवी मानती हैं कि अरब में महिलाओं की प्रस्थिति में हाल ही में जो उन्नयन हुआ है वह देश में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों और स्वयं महिलाओं के संघर्ष का समन्वित परिणाम है। समाजवादी क्रांति का अपना ही सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। क्रांतियों से महिलाओं की स्थिति में और सुधार होगा यदि कुरान के सकारात्मक पहलुओं पर

---

[4]अहूजा,राम्र (2018) धर्म, समाज और संस्कृति,पृ0सं.– 149

और अधिक बल दिया जा सके तथा पितृसत्तात्मक अपनिर्वचन त्याग दिया जाए। अनेक गैर–मुस्लिम लेखको के अनुसार पर्दा को महिलाओं के ऊपीड़न सामाजिक नियंत्रण के एक रूप, महिलाओं की अदृश्यता की धार्मिक मंजूरी और अधीनस्थ सामाजिक, राजनीतिक प्रस्थिति के स्पर्शनीय प्रतीक के रूप में पर्दा के माध्यम से बनाया रखा जाता है। विभिन्न रूपों से चित्रित किया गया है। तथापि एक अन्य दृ ष्टिकोण भी है।[5]

इदिजेल या धार्मिक शालीनता से वास्तव में महिलाओ को लाभ है। जिससे पुरुष उत्पीड़न कम होता है अथवा उन्हें पुरुष उत्पीड़न का सामना करने की अनुमति प्रदान करता है।

हिन्दू धर्म में महिलाओं की स्थिति–

विश्व में कहीं भी अन्यत्र धर्म में महिला के जीवन पर उतना अधिकार नहीं रखा और उतना प्रभावित नहीं किया जितना कि भारत में हिंदू धर्म ने। उसके आर्थिक क्रियाकलाप, उसके सामाजिक जीवन, उसके विवाह, जन्म और मृत्यु उसके गमनागमन पर धर्म का सख्त और सूक्ष्म नियंत्रण था। हिंदू धर्म में महिलाओं की भूमिका को समझने के क्रम में विचारधारा जो एक ओर स्त्रीत्व की उच्च प्रस्थिति को अभिव्यक्त करता है और दूसरी ओर उसे समाज में अधीनस्थ भूमिका प्रदान करता है, के विकास का ऐतिहासिक विश्लेषण करने का प्रयास करना आवश्यक है। प्रभुत्वशाली, पितृसत्तात्मक, सामाजिक शक्तियां और ब्राह्मणवादी संस्कृति ने मूल महिला शक्ति, जिसे प्रारंभिक ऐतिहासिक हिन्दू समाज में, अस्तित्व में देखा गया था, की बुनियादी अवधारणा को ही नष्ट कर दिया।[6]

जब पितृसत्ता ने महिलाओं की सामाजिक स्थिति को पतिव्रता के रूप में पीछे करके अपनी सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया था। स्त्री जातीय सिद्धस्त शक्ति की बुनियादी सत्ता ने स्वंय को शक्तिशाली प्रतीक देवी की छवि में स्वयं को पुन : स्थापित किया। इस प्रकार हिन्दुत्व ने जो कि साहित्य धार्मिक और सामाजिक प्रणाली

---

[5]खान मोहम्मद रफीक़ (2012) महिलाओं के अधिकार इस्लाम में, पृ0सं.– 39
[6]तिवारी,रामचंद्र (2015) हिन्दू रीति–निवाज,पृ0सं.– 81

अपनी आस्थाओं, आचरण संहिता और उपासना के तरीकों की विविधता में महिलाओं की विरोधाभासी इन छवियों के विकास को प्रश्रय दिया है।

आदर्श महिला की छवि में आज्ञाकारिता, अधीनता के गुणों को अभिव्यक्त किया गया और नैतिक दायित्व अंतत : हिन्दु विधियों में संहिताबद्ध किया गया और महिलाओं की अधीनस्थ प्रस्थिति को सांस्कृतिक स्वरूप प्रदान किया गया। इसके अलावा, यह कहा गया था कि हिन्दू धर्म में महिलाओं को प्रदत्त कोई भी शक्ति वास्तव में पुरुषों के साथ उसके संबंध का परिणाम है– चाहे वह उसका पिता हो या पुत्र हो। औपचारिक धार्मिक शिक्षा प्रणाली में उनके प्रवेश को प्रतिबंधित करके हिन्दु महिलाओं का ज्ञान अर्जित करने की संभावना को सीमित कर दिया गया, क्योंकि धार्मिक शिक्षा को ज्ञान एकमात्र स्रोत माना जाता था। जहां तक पुरुषों का प्रभुत्व और महिलाओं की अधीनता का संबंध है विश्व के महान धर्मो में इसी प्रकार के सिद्धांत हैं।

एतिहासिक रूप से जब धर्म के विकास का पता लगाते हैं तो इसमें सबसे महत्वपूर्ण विशेषता ईश्वर का पुरुष चरित्र है। ईसाई, इस्लाम और हिंदू सभी की रचना मानवता के विकास में महत्वपूर्ण चरणों के माध्यम से हुआ है। किंतु जब महिलाओं की बात थी उन सब ने विभिन्न ऐतिहासिक चरणों में उन पर नया बोझ डाला। इसलिए समाज में महिलाओ की प्रस्थिति के निर्धारण में धर्म एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और किसी विशेष क्षेत्र की महिलाओं द्वारा सामना की जा रही समस्याएं हैं उन पर लिंग विषयक पूर्वाग्रह पुरुष प्रधानता, पितृसत्ता तथा महिलाओ की समस्याएं है और उन पर लिंग विषयक पूर्वाग्रह, पुरुष प्रधानता, पितृसत्ता तथा महिलाओं के विरुद्ध युगों पुरानी पूर्वाग्रह की समस्या के रूप में विचार किया जाना तथा उनका समाधान निकाला जाना चाहिए।

(क) हिन्दू धर्म में देवियां–

पूर्व आयु सिंधु घाटी की सभ्यता की खोज के साथ जो पुरातात्विक साक्ष्य मिले उनसे अनेक स्त्री मूर्तियां प्रकाश में आई जिसमें धर्म में महिला प्रधानता की धारणा की पुष्टि होती है। हिन्दू धर्म में स्त्रीवादी सिद्धांत की अत्यधिक सकारात्मक अवधारणा है।

ईसाई धर्म, यहूदी धर्म और इस्लाम धर्म से शिन्न हिन्दु धर्म में ईश्वर की प्रतिमा अनन्य रूप से पुरुष देवता की ही नहीं है। स्त्रीवादी सिद्धांत परिपूरक है तथा पुरुष को संपूर्ण बनाती है। बहुदेववादी हिन्दु देवगण में अनेक दैवी युगल हैं जैसे शिव और शक्ति, नारायण और लक्ष्मी इत्यादि। इसके अतिरिक्त, हिन्दु देवगण में अनेक देवियां हैं जैसे देवी दुर्गा, चण्डिका (शक्ति की देवी) लक्ष्मी (सम्पदा की देवी), सरस्वती (ज्ञान की देवी), शीतला (छोटी चेचक की देवी) इत्यादि। किंतु फिर भी स्त्रियां जैसे मातृदेवी को भारत में अधिकतर गांवों की रक्षा करती हैं भी यह पुरुषों और महिलाओं दोनों के द्वारा नित्य उपासना की वस्तु है।

हिन्दु धर्म में महिलाएं काफी सक्रिय रूप से धार्मिक कार्यों में भाग लेती हैं किंतु उन्हें अत्यल्प धार्मिक प्राधिकार–वैद्य, ग्रंथों से स्वीकृत धार्मिक अधिकार प्राप्त हैं जो सिर्फ पुरुषों के छोटे समूह तक ही सीमित है। यह विडम्बना है कि लोकप्रिय स्तर पर महिलाएँ विशेषज्ञ और सामान्य दोनों रूपों में प्रमुख धार्मिक सहभागी हैं।

वेदों और अन्य प्रामाणिक ग्रंथों तक महिलाओं की पहुंच में स्पष्ट रूप से संशोधन लगभग 600 ई० पू० में हुआ था। इससे पूर्व महिलाएं वेदों इत्यादि को सुनने और पढ़ने के लिए उपवास रख सकती थी। मनु के समय तक महिलाओं को वेद सुनने अथवा धार्मिक अनुष्ठानों में प्रमुखता से भाग लेने की अनुमति नहीं रह गयी थी।

इस समय तक आर्य जनसंख्या के बीच महिलाओं के प्रदूषक होने के साथ–साथ खतरनाक (दुष्ट ह्रदय) होने के बोध का भी विकास हो रहा था। सौभाग्य, वश, हिन्दु धार्मिक क्रियाकलाप का प्रमुख्य स्वरुप भक्ति अथवा देवता की भक्ति था। भगवद्गीता से उत्पन्न होकर और ब्राहमण विरोधी, वैदिक विरोधी आंदोलन, यो लगभग 700 ई० सं० में शुरू हुआ था, से और बल प्राप्त किया। भक्ति और सम्बंधित अनुष्ठान में किसी व्यक्ति को अपने पसंद के देवता से संपर्क स्थापित करने के लिए पुरुष पुरोहित की सेवाओं की आवश्यकता नहीं है। इसका एक परिणाम यह निकला है कि महिलाओं की ईश्वर तक सीधी पहुंच है और इस प्रकार मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है।

आज वैदिक अनुष्ठान जीवन चक्र कर्मकाण्ड तथा अन्य पुरुष प्रधान घटना के लिए आरक्षित है। यद्यपि महिलाएं भक्ति अनुष्ठानों के माध्यम से सीधे देवताओं से संपर्क कर सकती है। पुरुषों की विधिसम्मत धार्मिक विशेषज्ञों के रूप में मान्यता बनी

रही। पुरुष मंदिर के पुजारी कर्मकाण्डो के नेता हैं। सार्वजनिक धार्मिक अनुष्ठानों में कम विधिसम्मत सहभागियो के गैर ब्राह्मण पुरुष होने की अधिक संभावना है। धार्मिक शोभायात्रा अनुष्ठानों को धर्मग्रंथों से स्वीकृति नहीं है, में पुरुषों की प्रधानता प्रतीत होती है और शैमन गैर ब्राह्मण पुरुष होते हैं, कभी–कभी शैमन महिला भी हो उड सकती है।

हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि हिन्दु महिलाओं की धार्मिक भागीदारी अधिक है। गैर विशेषज्ञों के रूप में महिलाएं 'अदृश्य धार्मिक कम हैं। क्योंकि उनके अधिकांश अनुष्ठान निजी तौर पर किए जाते हैं और उनकी भूमिका धार्मिक ग्रंथों से स्वीकृत नहीं है।

पिछले दो सौ वर्षों में भारत में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। इनमें से कुछ वास्तविक की अपेक्षा अधिक प्रतीयमान हैं। ऐसा महिलाओं की प्रस्थिति के संबंध विशेष रूप से है। विगत दो सौ वर्षों के दौरान बड़ी संख्या में महिलाएं अपने पृथक धरेलू जीवन से सार्वजनिक जीवन की ओर बढ़ी है। तथापि, भारत में समकालीन हिन्दु महिलाओं की स्थिति सुविदित विरोधाभासों से पूर्ण है। महिला राजनीतिज्ञ भी हैं जो उच्च पदों पर आसीन हैं किंतु निचले स्तर और ऊपरि स्तर दोनो पर राजनीति पुरुष नियंत्रण रखते हैं। भारत में कुछ महत्वपूर्ण महिलाएं बुद्धजीवी और पेशेवर भी हैं जो उच्च पदों पर आसीन है जबाकी गांवो में भूमिहीन श्रमिक हैं। दुर्गा, काली, चंडिका, मनसा, इत्यादि जैसी स्त्री देवियां हैं जिनकी उपासना की जाती है तथा अधिकतर उनसे भयभीत रहते हैं। फिर भी घर में बहुसंख्यक महिलाओं की निम्न धार्मिक अनुष्ठान प्रस्थिति है और वे अवसाद्पूर्ण दशा में रहती हैं। माता के रूप में महिलाओं का सम्मान किया जाता है। किंतु, साथ ही वे बलात्कार और शारीरिक उत्पीड़न का भी शिकार हैं। उनकी उपासना विशुद्ध सत्ता के रूप में की जाती है। किंतु यह उनकी अपेक्षा पुरुषों की प्रस्थिति को ऊंचा उठाने के लिए किया जाता है। इस प्रकार, भारत में महिलाओं के जीवन में प्रतीत होने वाली विडम्बनाएं हैं। इतिहासकारों का तर्क है कि विगत दो सौ वर्षों में महिलाएं के पक्ष में अनेक विधान बने तथा अन्य परिवर्तन भी आए किंतु पुरुष प्रभुत्व और प्राधिकार की परम्परागत

संरचना में नगण्य बदलाव आया है क्योंकि अभी भी विचारों और संरचना की जड़े गहरी हैं जिनके माध्यम से यह प्रभुत्व निरंतर चलता रहा है।

भारत में महिलाएं कुल जनसंख्या का लगभग आधा हैं। फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि वे पुरुषों के समान प्रस्थिति है। समाज, जो सामाजिक विरासत और परापरा को सतत जारी रखने के लिए जानी जाती है, में महिलाओं की प्रस्थिति कुल मिलाकर पुरुषों के सामान्य अधीनता की रही है।यह देखा गया है कि भारत में महिलाओं ने विगत में विभिन्न समस्याओं का सामना किया है, विशेषकर ऐसी समस्याएं जो सामाजिक सांस्कृतिक है।

भारत बहुसांस्कृतिक समाज है, जिसमें अत्यधिक विविधता है तथा सामाजिक पदसोपन और असमानता के अनेक रूप हैं जैसे – जाति और वर्ग। महिलाओं की भूमिका अधिकारों, मानदण्डों, मूल्यों, रूढ़ियों इत्यादि पर धर्म, परिवार, विवाह, कुल वंश, विरासत, जाति, पदसोपन और अन्य सांस्कृतिक परम्पराओं का अत्यधिक प्रभाव है। हिन्दु समाज एक जटिल प्रघटना है, जिसका विकास धर्म दर्शन की पद्धति तथा सामाजिक संगठन की प्रणाली के समेकन से हुआ है। बहुधा यह कहा जाता है कि हिन्दु धर्म मात्र धर्म नहीं अपितु जीवन की एक शैली है। जीवन शैली के रूप में हिन्दु समाज को सजातीय नहीं माना जा सकता क्योंकि विभिन्न युगों में और सामाजिक पदसोपान के विभिन्न स्तरों पर लोगों के बीच धार्मिक प्रभावों में अंतर था। भारतीय समाज में महिलाओं की प्रस्थिति में समय–समय पर परिवर्तन हुआ है। उनकी प्रस्थिति का मूल्यांकन विभिन्न प्रकार से हुआ है और सभ्यता में उनके स्थान के संबंध में अनेक विचार है। अलग–अलग समयावधियों में समाज से महिलाओं का संबध इतना परिवर्तनशील रहा है कि एक सामान्य कथन कठिन है। स्पष्ट रूप से, उसकी उपयोगिता घरेलू जीवन में उसकी युक्ति कुशलता, नई शक्ति का संचार करने वाला उसका साथ और बच्चों की वात्सल्य पूर्ण देख–भाल सदैव ही उसके जीवनसाथी के लिए बहुमूल्य संपति साबित हुआ है और इसने सभ्यता के विभिन्न चरणों में उसकी प्रस्थिति प्राप्त थी और उन दोनो को दंपत्ति कहा जाता था।

भारतीय संस्कृति मे, उत्तर वैदिक काल से परिवार और समाज में महिलाओं की प्रस्थिति निम्न रही है। भारतीय महिलाओं की इस निम्न प्रस्थिति के मुख्य कारणों में

अधिक सुदृढ हुई पितृसत्ता और पुरुष प्रभुत्व, पुरुषो पर महिलाओं की आर्थिक निर्भरता अनेक जातिगत प्रतिबंध, धार्मिक प्रतिषेध, और पूर्वाग्रह, निरक्षरता, नेतृत्व की गुणवत्ता की कमी स्वंय के उत्साह में कमी और पुरुषों का असंवेदनशील एवं उदासीन मनोवृत्ति उभर कर सामने आये।

सूत्रों एवं महाकाव्यों (ई०पू० 500 से इ० स० 1800 तक) के काल में महिलाओं की प्रस्थिति काफी परिवर्तन आया। पुत्र को जन्म देना धार्मिक आवश्यकता बन गया क्योंकि वही अकेले अपने पूर्वजों के प्रति कतिपय धार्मिक अनुष्ठानों को संपन्न कर सकता था। पत्नी से आशा की जाती थी कि वह अपने पति की सेवा करेगी तथा उसे संतुष्ट रखेगी। धार्मिक आदेश (मनु का) यह था की पत्नी यदि पति शराबी या मूढ़ या विक्षिप्त हो, तब भी अपने पति का सम्मान ईश्वर के रूप में करेगी तथा यह सभी महिलाओं द्वारा स्वीकृति और सब पर लागू था। ई० स० 700 तक सती प्रथा धीरे–धीरे स्थापित हो गया था। महिलाओं का सामाजिककरण हुआ तथा उन्हें स्वयं निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं था। इस प्रकार महिलाओं की प्रस्थिति में स्मृतिकाल और मुस्लिम शासन (ई०स० 500 से ई०स० 1800) के दौरान निरंतर ह्रास होता रहा और यह क्रम तब तक जारी रहा जब तक कि समाज में उनकी सारी प्रस्थितियां पूरी तरह समाप्त नहीं हो गई।

मेरसन एवेरेट (1981) जैसे विद्वान ने भारत में महिलाओं की परिवार तथा समाज दोनों में निम्न प्रस्थिति तथा महिलाओं की पृथकता के लिए उत्तरदायी पांच विशेष कारकों की पहचान की है। ये हिन्दु धर्म, जाति प्रथा, संयुक्त परिवार पद्धति, इस्लामी शासन और ब्रिटिश उपनिवेशवाद है। हिंदु धर्म के मूल्य स्त्री पर पुरुष की प्रधानता, निजी जीवन में महिलाओं की माता, गृहणी की भूमिका और आर्थिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में पुरुषो की सार्वजनिक भूमिका का समर्थन करते हैं। हिन्दू धार्मिक ग्रंथो ने धार्मिक क्रियाकलापों में महिलाओं की हीन प्रस्थिति और महिलाओं की पुरुषों पर आजीवन निर्भरता विहित की है।

भारत के इतिहास में पहली बार, मुगलकाल के दौरान भारतीय महिलाएं क्रूरता का शिकार हुई। मुस्लिम आक्रमण के मद्देनजर, देशज संस्कृति का परसंस्कृतिकरण हुआ। इस्लाम की प्रथाओं और परम्परओं का देशी संस्कृति में प्रवेश हुआ। उदाहरण

के लिए पर्दा प्रथा बड़े पैमाने पर मध्यम वर्गो में प्रचलित था। अल्टेकर के अनुसर ई०पू० में लगभग 2000 से लेकर 1800 ई० तक महिलाओं की प्रस्थिति में निरंतर ह्रास हुआ। सती प्रथा के पुनः प्रचलन, पुनर्विवाह का प्रतिषेध, पर्दा प्रथा का प्रसार, और बहु विवाह का प्रचलन बढ़ने से महिलाओं की स्थिति और खराब हो गई। सामान्य रूप से कहें तो मुसलमानों के आगमन से पूर्व हिन्दु महिलाओं की प्रस्थिति निश्चित रूप से अच्छी थी। मध्यकाल में भारतीय महिलाओं की प्रस्थिति में सतत ह्रास के लिए अनेक कारक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार थे। बाल विवाह एक नियम बन गया, ताकि कन्या के सम्मान और कौमार्य की रक्षा हो सके। हिन्दू विधि महिलाओं के साथ असमान और भेदभावपूर्ण व्यवहार का समर्थन करते हैं।

अध्याय–3 सामाजिक न्याय के माध्यम से महिलाओं के विकास की भूमिका

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जिसने ऐतिहासिक रूप से महिला नेताओं को शीर्ष पदों पर आसीन होते देखा है। इसके बावजूद, देश के राजनीतिक परिदृश्य में महिलाओं की भागीदारी और नेतृत्व पुरुषों की तुलना में काफी कम है। पंचायती राज अधिनियम, (1992) के तहत स्थानीय निकायों में आरक्षण और हाल ही में पारित महिला संसद प्रतिनिधित्व विधेयक जैसे वैधानिक उपायों ने सैद्धांतिक रूप से महिलाओं के लिए राजनीतिक द्वार खोले हैं, लेकिन ज़मीनी हकीकत इन कानूनी प्रावधानों से मेल नहीं खाती। राजनीति में महिलाओं की कम भागीदारी भारतीय लोकतंत्र के लैंगिक असंतुलन को दर्शाती है जिसे दूर करने के लिए सामाजिक, राजनीतिक और संस्थागत स्तर पर व्यापक सुधारों की आवश्यकता है।

3.1 राजनीति के क्षेत्र में महिलाओं की वर्तमान स्थिति –

भारत में राजनीति में महिलाओं की स्थिति एक विरोधाभासी तस्वीर प्रस्तुत करती है, जहाँ संवैधानिक प्रावधानों और लोकतांत्रिक मूल्यों के बावजूद, विधायी और प्रशासनिक निकायों में उनका प्रतिनिधित्व अत्यंत सीमित है। अंतर–संसदीय संघ द्वारा संकलित आंकड़ों के अनुसार, 17वीं लोकसभा में कुल सदस्यता में महिलाएँ मात्र 14. 44 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करती हैं, और भारत निर्वाचन आयोग की रिपोर्ट (अक्टूबर 2022 तक) के अनुसार संसद के सभी सदस्यों में उनका प्रतिनिधित्व केवल 10.5 प्रतिशत है। राज्य विधानसभाओं के मामले में यह आंकड़ा औसतन 9 प्रतिशत तक गिर जाता है।[1] यह न्यून प्रतिनिधित्व इस बात का सूचक है कि विधायी प्रक्रिया में महिलाओं की आवाज़ और उनके विशिष्ट अनुभवों को पर्याप्त स्थान नहीं मिल पा रहा है। इस संबंध में भारत की रैंकिंग में पिछले कुछ वर्षों में गिरावट आई है और यह वर्तमान में पाकिस्तान, बांग्लादेश और नेपाल जैसे कई पड़ोसी देशों से भी पीछे है जो

[1] Singh, S. S., & Singh, A. P. (2024). WOMEN REPRESENTATION IN INDIAN POLITICS. *ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts*, *5*(5), 509–514. https://doi.org/10.29121/shodhkosh.v5.i5.2024.4057

इस समस्या की गंभीरता को दर्शाता है। यह असंतुलन केवल निर्वाचित पदों तक सीमित नहीं है बल्कि केंद्र और राज्य स्तर पर विभिन्न लोक सेवा नौकरियों में भी व्याप्त है, जहाँ महिलाओं की भागीदारी इतनी कम है कि उन्हें निशुल्क आवेदन की सुविधा प्रदान करने जैसे कदम उठाने पड़े हैं। उदाहरण के लिए भारतीय प्रशासनिक सेवा के आंकड़ों और वर्ष 2011 की केंद्र सरकार की रोज़गार रिपोर्ट के अनुसार इसके कुल कर्मियों में 11 प्रतिशत से भी कम महिलाएँ थीं, जो वर्ष 2020 में केवल 13 प्रतिशत तक ही दर्ज की गई। इसके अलावा, वर्ष 2022 में सचिव स्तर पर केवल 14 प्रतिशत महिलाएँ कार्यरत थीं और सभी भारतीय राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को मिलाकर केवल तीन महिलाएँ मुख्य सचिव के रूप में कार्यरत हैं भारत में कभी कोई महिला कैबिनेट सचिव नहीं बनी है और गृह, वित्त, रक्षा तथा कार्मिक मंत्रालयों में भी कभी कोई महिला सचिव नहीं रही है। राजनीतिक और प्रशासनिक निर्णय लेने के उच्च पदों पर महिलाओं का यह अभाव नीतियों के निर्माण और कार्यान्वयन की गुणवत्ता पर गंभीर प्रभाव डालता है[2]।

इसके अतिरिक्त, आर्थिक क्षेत्र में भी महिलाओं की स्थिति कमजोर है सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों के स्वामियों में केवल 20.37 प्रतिशत महिलाएँ हैं, मात्र 10 प्रतिशत स्टार्ट–अप महिलाओं द्वारा स्थापित किये गए हैं, और श्रम बल में महिलाओं की हिस्सेदारी मात्र 23.3 प्रतिशत है, जो राजनीतिक और आर्थिक दोनों स्तरों पर उनके सशक्तिकरण की आवश्यकता को रेखांकित करता है[3]।

राजनीति में महिलाओं की कम भागीदारी के मूल में गहरी सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएँ निहित हैं, जिनमें पितृसत्तात्मक मानसिकता प्रमुख है। भारत एक मजबूत पितृसत्तात्मक समाज है, जहाँ महिलाओं को प्राय पुरुषों से हीन माना जाता है, और यह समाज महिलाओं को सत्ता की डोर उनके हाथों में नहीं देना चाहता है, जिससे महिलाओं को कम अवसर मिलते हैं और वे राजनीतिक प्रतिस्पर्धा में पुरुषों से काफी

[2] भारत सरकार, कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, वार्षिक रिपोर्ट 2011; भारत सरकार, रोज़गार एवं बेरोज़गारी सर्वेक्षण रिपोर्ट 2020; कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, वार्षिक रिपोर्ट 2022, नई दिल्लीरू श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार

[3] भारत सरकार, कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, वार्षिक रिपोर्ट 2011; भारत सरकार, रोज़गार एवं बेरोज़गारी सर्वेक्षण रिपोर्ट 2020; कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, वार्षिक रिपोर्ट 2022, नई दिल्लीरू श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार

पीछे रह जाती हैं। लगभग एक–तिहाई महिलाओं ने इस पितृसत्तात्मक समाज को ही अपनी राजनीतिक भागीदारी में बाधा के रूप में देखा है। इसके साथ ही, सामाजिक मानदण्ड और रूढ़िवादिता महिलाओं से प्रायरू पारस्परिक लिंग भूमिकाओं के अनुरूप व्यवहार की उम्मीद करती है, उन्हें पत्नियों एवं माताओं के रूप में अपनी भूमिकाओं को प्राथमिकता देने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जबकि राजनीति को अक्सर पुरुषों का क्षेत्र माना जाता है, जिससे उन्हें करियर बनाने से हतोत्साहित किया जाता है। सर्वेक्षण में अधिकांश महिलाओं ने स्वीकार किया कि घरेलू जिम्मेदारिया जैसे बच्चों की देखभाल, घर के सदस्यों के लिए खाना बनाना और अन्य पारिवारिक कारणों से वे राजनीति में भाग नहीं ले पाती हैं, लगभग 13 प्रतिशत महिलाओं ने इसे उनकी कम भागीदारी का कारण माना। सांस्कृतिक प्रतिबंधों में पर्दा प्रथा, किसी अन्य पुरुष से बातचीत न करना, और महिलाओं का बाहर न निकलना आदि शामिल हैं, और लगभग 35 प्रतिशत महिलाओं ने माना कि सांस्कृतिक कारणों से वे राजनीति में भाग नहीं लेती हैं। इन सामाजिक–सांस्कृतिक बाधाओं का एक और आयाम घरेलू स्तर पर राजनीतिक निर्णयन में पितृसत्ता का प्रभाव है, जहाँ अधिकांश महिलाओं का मानना है कि घरों में राजनीतिक निर्णय लेने में उन्हें कम स्वायत्तता प्राप्त होती है। सर्वेक्षण में लगभग 66 प्रतिशत महिलाओं ने कहा कि वे राजनीतिक निर्णय लेने के मामले में अभी भी स्वायत्त नहीं हैं, जो पितृसत्तात्मक समाज तथा रूढ़िवादी सामाजिक ढाँचे के गहरे प्रभाव को दर्शाता है।

महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को प्रभावित करने वाली अन्य महत्वपूर्ण बाधाओं में शिक्षा तक पहुँच का अभाव शामिल है। ऐतिहासिक रूप से भारत में महिलाओं की शिक्षा तक सीमित पहुँच रही है, जिसने राजनीति में भागीदारी की उनकी क्षमता को बाधित किया है; यद्यपि हाल के वर्षों में परिदृश्य में कुछ सुधार आया है, फिर भी बहुत सी महिलाओं में अभी भी राजनीतिक पद पर कार्य कर सकने हेतु आवश्यक शिक्षा एवं कौशल की कमी है। इसके अलावा, राजनीतिक दलों में सीमित प्रतिनिधित्व भी एक बड़ी संस्थागत बाधा है, क्योंकि महिलाओं को राजनीतिक दलों में प्राय कम प्रतिनिधित्व दिया जाता है, जिससे उनके लिए अपने दलों में विभिन्न पदों से गुजरते हुए आगे बढ़ना और चुनाव के लिए टिकट प्राप्त करना

कठिन हो जाता है। प्रतिनिधित्व की इस कमी को राजनीतिक दलों के भीतर मौजूद लैंगिक पूर्वाग्रह और इस धारणा का परिणाम माना जा सकता है कि महिलाएँ पुरुषों की तरह चुनाव जीतने योग्य नहीं होतीं, और इस उदासीनता का मुख्य कारण यह है कि पुरुष राजनीतिकों को इस बात का भय रहता है कि महिलाओं के निर्वाचन से उनके दोबारा चुने जाने की संभावना कम या समाप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त, राजनीति की नकारात्मक छवि तथा इसमें व्याप्त भ्रष्टाचार की वजह से भी महिलाएँ राजनीति में कम रुचि लेती हैं, जबकि राजनीति के क्षेत्र में सक्रिय महिलाओं को प्रायरू हिंसा और उत्पीड़न (भौतिक एवं ऑनलाइन दोनों रूप में) का शिकार होना पड़ता है, जो उन्हें राजनीति में प्रवेश करने या विभिन्न मुद्दों पर मुखर होने से हतोत्साहित कर सकता है, जिससे राजनीति में सुरक्षित एवं समावेशी अवसर की कमी उनकी भागीदारी के मार्ग में एक प्रमुख बाधा बन जाती है। महिलाओं को प्रायरू असमान अवसर का भी सामना करना पड़ता है, जैसे कम वेतन, संसाधनों तक कम पहुँच और सीमित नेटवर्किंग, जिससे पुरुष उम्मीदवारों के साथ प्रतिस्पर्धा करना चुनौतीपूर्ण बन जाता है। इन सभी के साथ, संरचनात्मक बाधाएँ भी हैं, जैसे दूरस्थ संवर्गों में पदस्थापन, पितृसत्तात्मक कंडीशनिंग, और नौकरी विशेष की आवश्यकताओं एवं पारिवारिक प्रतिबद्धताओं के संतुलन जैसी सामाजिक कारक; इसके अलावा, एक आम धारणा यह है कि महिलाओं को समाज कल्याण, संस्कृति, महिला एवं बाल विकास जैसे सॉफ्ट मंत्रालयों के लिए प्राथमिकता दी जानी चाहिए।इन बाधाओं के बावजूद, पिछले कुछ वर्षों में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में कुछ सकारात्मक बदलाव आए हैं, विशेष रूप से मतदाता के रूप में।

हालाँकि महिलाओं की चुनावी भागीदारी में उनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति का विशेष प्रभाव होता है जहाँ उच्च सामाजिक–आर्थिक वर्गों की महिलाओं में राजनीतिक भागीदारी अधिक पाई गई हैकृफिर भी अनेक राज्यों में हुए विभिन्न चुनावों में महिलाएँ पुरुषों के समान मतदान कर रही हैं, और कई स्थानों पर, वे पुरुषों की तुलना में अधिक मतदान कर रही हैं। महिलाएँ अपनी राजनीतिक पसंद को लेकर भी स्वायत्त हो रही हैं, किंतु यह प्रचलन भी शहरी क्षेत्र की तथा शिक्षित महिलाओं में अधिक देखा गया है। इसके अतिरिक्त, सर्वेक्षण द्वारा यह पाया गया कि 71 प्रतिशत

महिलाओं ने विभिन्न माध्यमों से राजनीतिक समाचारों को पढ़ने में रुचि प्रदर्शित की, हालांकि सोशल मीडिया के माध्यम से राजनीतिक भागीदारी करने के मामले में महिलाओं की संख्या काफी कम है, और केवल 17 प्रतिशत महिलाओं ने स्वीकार किया कि वे सोशल मीडिया पर राजनीतिक रूप से सक्रिय हैं। राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए एक बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है। सबसे प्रभावी तरीकों में से एक है विधायी निकायों में महिलाओं के लिए सीटों का आरक्षण। हालाँकि भारतीय संविधान में 73वें और 74वें संशोधन द्वारा महिलाओं के लिए स्थानीय निकाय की एक–तिहाई सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है, और लोकसभा और सभी राज्यों की विधान सभाओं में 33 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया जा चुका है, फिर भी राजनीति में महिलाओं की समान भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए आरक्षण का दायरा बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक किया जाना चाहिए। इसके अलावा, राजनीतिक दलों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि चुनावों के लिए उम्मीदवारों के चयन में वे महिलाओं को भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान करें, और आसानी से जीतने योग्य सीटों पर उन्हें प्राथमिकता देनी चाहिए। महिलाओं को सशक्त करने के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जा सकते हैं, जिससे उन्हें अपना आत्मविश्वास एवं कौशल विकसित करने और राजनीति की जटिलताओं को समझने में मदद मिलेगी, जिससे वे पुरुष रिश्तेदारों के हाथों की कठपुतलियाँ बनने से बच सकेंगी। स्थानीय महिला नेताओं की भागीदारी को प्रोत्साहित करना परामर्श कार्यक्रमों और अन्य सहायता पहलों के माध्यम से भी महत्वपूर्ण है।

अंत में राजनीति में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को संबोधित करना और उनके लिए सुरक्षित वातावरण का निर्माण करना आवश्यक है। पितृसत्ता एवं लैंगिक मानदण्डों जैसी सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाओं को जागरूकता कार्यक्रमों और सामाजिक सुधार पहलों जैसे बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ के माध्यम से संबोधित किया जाना चाहिए, और लचीले शेड्यूल, बाल देखभाल और मातृ/पितृ अवकाश जैसे उपायों के माध्यम से कार्य–जीवन संतुलन के लिए सहायता प्रदान कर इस मुद्दे को हल किया जा सकता है। सक्रिय महिलाओं को उनकी उपलब्धियों के लिए अधिक दृ

श्यता और मान्यता प्रदान की जानी चाहिए, जिससे अन्य महिलाओं को राजनीति से संलग्न होने के लिए प्रेरणा मिले।

ज्यादातर किशोर लड़कियों के लिए करियर के रूप में राजनीति सोच में भी नहीं होती है। कुछ लोगो की रुचि इसमें भी है लेकिन भारत में राजनीति में करियर बनाना असम्भव लगता है। ऐसा ही एक उदाहरण चेन्नई की 15 साल की उस छात्रा का है, जिसने कहा था वह बड़ी होने के बाद न्यूजीलैण्ड की प्रधानमंत्री बनना चाहती है। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण है कि उस लड़की की तरह ही कई ऐसी लड़कियाँ होगी जो अपने देश की राजनीति में हिस्सा ना लेकर किसी दूसरे देश की प्रधानमंत्री बनना चाहती होंगी।

भारत को गणराज्य बने 75 साल हो चुके हैं लेकिन हम आज भी समान प्रतिनिधित्व को हासिल करने और युवा लड़कियों के लिए राजनीति को करियर का एक विकल्प बनाने से बहुत दूर खड़े हैं। वर्तमान में हमारे देश में 78 (कुल 543 में) महिला सांसद है। 14.3 प्रतिशत की दर वाला यह आंकड़ा 1947 से अब तक का सबसे बड़ा आंकड़ा है। राज्य स्तर पर यह आंकड़ा और भी कम है। विभिन्न राज्यों की विधान सभाओं में महिला प्रतिनिधित्व का आंकड़ा औसतन 9 प्रतिशत है। भारत में छः राज्य ऐसे हैं जिसमें एक भी महिला मंत्री नहीं है। एक देश के रूप में हमने प्रगति की है।[4] भारत के पुरुष और महिलाएँ अब लगभग बराबर संख्या में मतदान करते हैं। लेकिन मतदान से परे महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी का मामला अब भी एक अछूता विषय है और इस क्षेत्र में महिलाओं के बहुत अधिक सक्रिय होने की जरूरत है। इसमें उम्मीदवारों के लिए प्रचार–प्रसार करना, पद के लिए भागदौड़ करना और राजनीतिक पद हासिल करना शामिल है। थोड़ी और छान–बीन करने पर हमने पाया कि 2019 के चुनावों में महिला उमीदवारों की संख्या 10 प्रतिशत से कम थी। राज्य स्तर पर भी हमें ऐसेहीआंकडे देखने को मिले जहां 1980 और 2007 के बीच में राज्य विधान सभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 5.5 प्रतिशत था लेकिन महिला उम्मीदवारों का कुल प्रतिशत 4.4 था। 2019 में उ०प्र० में किए गए एक

[4]कुमार,राकेष (2019) मतदान व्यवहार एक विष्लेषण– शोध प्रकाषन पृष्ठ– 132

अध्ययन से यह बात सामने आई कि महिलाएँ राजनीतिक भागीदारी के कई निर्धारकों जैसे राजनीतिक संस्थानों के काम करने के तरीकों और अपने खुद के नेतृत्व की योग्यताओं में, विश्वास में पिछड़ी हुई है।

महिलाओं के लिए ज्ञान आत्मविश्वास, आवाज और आजादी राजनीति में उनकी भागीदारी पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। यह काम युवा लड़कियों के लिए जल्दी किए जाने की जरूरत है ताकि वे गम्भीर रूप से सोचने की क्षमता विकसित कर सकें और भारत के भविष्य को आकार देने में अपनी भूमिका निभा सकें।वर्तमान में हमोर देश में 78(कुल 543 में) महिला सांसद हैं। युवा लड़कियों और महिलाओं में राजनीतिक भागीदारी और नेतृत्व के निर्माण के लिए काम करने वाली संस्था कुविरा की स्थापना के समय हमने यह पाया कि समाज के धरुवीकरण के देखते हुए ज्यादातर विद्यालय (कुछ प्रगतिशील और वैकल्पिक लोगों को छोड़ कर)और अभिभावक छात्रों से राजनीति के बारे में बात करने से कतराते हैं और महिलाओं से बिल्कुल भी राजनीति की चर्चा नही करते

इसके कारण युवाओं को मिलने वाली ज्यादातर राजनीतिक खबरें असत्यापित स्त्रोतों और सोशल मीडिया के माध्यम से होती हैं जिससे हमारे युवाओं और महिलाओं में एक किस्म की निराशा पैदा हो गई है। 2021 के अक्टूबर में एक दल के लोगों ने 13 साल की उम्र वाले बच्चों के एक समूह के साथ कार्यशाला आयोजित की थी। इसमें उन लोगों ने उनसे भारत के राजनेताओं को लेकर उनकी धारणा व्यक्त करने के लिए कहा। उन्होनें दो चीजे देखी–

1. किसी भी प्रतिभागी ने महिला नेता का चित्र नहीं बनाया। जब उन्होने इसका कारण पूछा तब उनका कहना था कि वे किसी महिला राजनेता को नहीं जानते हैं।

2. सभी प्रतिभागियों ने राजनेताओं को स्वार्थी या भ्रष्ट बताया और उनके पास हमारे चुने गए प्रतिनिधियों के बारे में कहने के लिए कुछ भी सकारात्मक नहीं था।

भारत भर में राजनीति को लेकर युवाओं खासकर युवा लड़कियों की सोच को विस्तार से समझने के लिए उन लोगो ने 24 राज्यों के 11 वर्ष से 24 वर्ष की उम्र वाले 400

बच्चों और वयस्कों का आकंड़ा एकत्रित किया।[5] उन्हे इन आँकड़ों में एक समानता दिखाई दी जिसमें इन लोगों ने भारत की राजनीति के लिए भ्रष्ट, भ्रमित, जटिल और गंदे विशेषणों का प्रयोग किया था।

आँकड़ों में पाया कि भले ही लड़के और लडकियों ने समान रूप से इस बात का जवाब दिया कि वे मतदान करेंगे (जब वे योग्य हो जाएंगे) लेकिन उनकी राजनीतिक आकांक्षाओं में एक महत्वपूर्ण अंतर था। 32 प्रतिशत पुरुष उत्तरदाताओं में कहा कि वे भविष्य में राजनीति में हिस्सा लेना चाहेंगे। वहीं केवल 19.7 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं ने ऐसी इच्छा जाहिर की।[6] पुरुष उत्तरदाताओं ने ऐसी इच्छा जाहिर की। पुरुष उत्तरदाताओं की तुलना में महिला उत्तरदाताओं को राजनीतिक प्रक्रियाओं और उनके चुने गए स्थानीय प्रतिनिधियों के बारे में कम जानकारी थी। इसके अतिरिक्त उनमें अपने दोस्तों और परिवार से राजनीतिक मुद्दो पर चर्चा करने की सम्भावना कम पाई गई।

हालाँकि हमारे वर्तमान राजनीतिक के प्रति हमारे युवाओं में विश्वास का स्तर बहुत कम है। लेकिन आंकड़ों के अनुसारलड़कियों की तुलना में दोगुनी संख्या में लड़कों का ऐसा मानना है कि हमारे वर्तमान राजनीतिक नेता प्रभावशाली है।[7] हमारे अध्यन से यह भी बात स्पष्ट होती है कि छोटी उम्र (11.17 साल) के लड़के लड़कियों की तुलना में राजनीति में अधिक रुचि दिखाती है लेकिन जब वे मतदान के उम्र में पहुंचती है तब लड़को की रुचि का प्रतिशत लड़कियों पर हावी हो जाता है इस तथ्य के बावजूद दोनों ही समूह में रुचि का स्तर बढ़ता है।

ऐसी ही स्थिति हाल ही में अमेरिकन पोलिटिकल साइन्स रिव्यू में प्रकाशित एक अमेरिकी अध्ययन में भी पायी गई। इस अध्ययन से यह बात सामने आई कि बच्चे न केवल राजनीति को पुरुष प्रधान क्षेत्र मानते हैं बल्कि बढ़ती उम्र के साथ लड़कियों की यह सोच पुख्ता होती जाती है कि राजनीतिक नेतृत्व पुरुषों की दुनिया है। शोध में यह भी कहा गया कि इसके फलस्वरुप लड़कों की तुलना में लड़कियों की रुचि और महत्वाकांक्षा निम्न स्तर की होती है।

---

[5]अहूजा,राम (2013) राजनीतिक चेतना,राजकमल प्रकाशन पृष्ठ– 67
[6]अहूजा,राम (2013) राजनीतिक चेतना,राजकमल प्रकाशन पृष्ठ–83
[7]अहूजा,राम (2013) राजनीतिक चेतना,राजकमल प्रकाशन पृष्ठ–87

न्यूजीलैण्ड की प्रधानमंत्री बनने की इच्छा जाहिर करने वाली उस छोटी सी बच्ची के उदाहरण से हमें भारतीय लड़कियों के लिए सम्बंधित आदर्श को सामने लाने की महत्ता को समझने में मदद मिली है। दुनिया भर की मीडिया ने प्रधानमंत्री जैसिण्डा आर्ड्रे की प्रशंसा का बहुत अच्छा काम किया है खासकर महामारी पर उनकी शुरुआती कुछ प्रतिक्रियाओं के बाद। इस काम ने दुनिया भर में लड़कियों के लिए उन्हे अपना आदर्श मानने में अपना योगदान दिया है। अमेरिका में किए गए शोध से यह पता चलता है कि समय के साथ समाचार पत्रों में महिला राजनेताओं पर अधिक खबरें प्रकाशित करने से युवा लड़कियों में राजनीतिक रूप से सक्रिय होने की सम्भावना प्रबल होती है। हमारे सर्वेक्षण से यह बात स्पष्ट हुई कि अपने स्कूल या कॉलेज की लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में हिस्सा लेकर और किसी राजनेता को व्यक्तिगत रूप से जानने वाले युवा उन लोगों की तुलना में राजनीति में अधिक रुचि लेते हैं जिनके पास ऐसा कोई अनुभव नहीं होता है।

राजनीति को करियर का एक विकल्प बनाने के लिए हमें युवा लड़कियों और राजनीतिक शक्तियों से जुड़ी सोच को बदलने की जरूरत है। पश्चिमी देशों में हमने ऐसे कई उदाहरण देखे हैं जिसमें "टीच ए गर्ल टू लीड" और "इग्नाईट नेशनल" जैसे नागरिक समाज संगठन अगली पीढ़ी की ऐसी महिला मतदाताओं को तैयार करने का काम करते हैं जो आगे चलकर राजनीतिक नेता बनना चाहती है और अपने आसपास की राजनीति में सक्रिय होना चाहती है। कुविरा का उद्देश्य स्कूलो और स्वयंसेवी संस्थानों के साथ काम करके भारत में इस खाई को कम करना है ताकि युवा लड़कियों के लिए राजनीति को फिर से बनाया या सके। इसके अलावा हम महिला राजनेताओं को आदर्श के रूप में स्थापित करके राजनीति के लिए सकारात्मक कहानियां बनाने और युवा लड़कियों को उनसे जुड़ने के अवसर प्रदान करने का काम भी करते हैं जिनसे उनकी राजनीतिक महत्वाकांक्षा प्रज्वलित होगी।

चूँकि 2022 में पाँच राज्यों में और 2024 में आम चुनाव होने वाले हैं इसलिए शिक्षकों, नागरिकों समाजों और लोकोपकारों के लिए यह जरूरी है कि वे एक साथ आकर युवा लड़कियों के लिए एक ऐसे वातावरण का निर्माण करें जिससे राजनीतिक

प्रक्रियाओं में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चत हो सके। यह इसलिए भी जरूरी है क्योंकि बिना समान प्रतिनिधित्व के कार्यात्मक लोकतंत्र नहीं हो सकता है।

पिछले कुछ समय में महिला वोटर की भागीदारी में अच्छी खासी बढ़त देखी गई है, लेकिन इसके बावजूद राजनीति के मैदान में वे सबसे पीछे है। इलेक्शन कमीशन की एक रिपोर्ट के मुताबिक साल 2022 के चुनावों में भाग लेने वाले आठ राज्यों में से सात में महिला मतदाता भागीदारी में वृद्धि देखी गई थी। हालांकि यह एक बड़ी उम्मीद है और अच्छी बात यह थी कि नगरपालिका, राज्य और राष्ट्रीय चुनावों में महिला मतदाताओं के अनुपात में उत्साहजनक वृद्धि हुई। मगर फिर भी उम्मीवारों के रूप में महिलाओं की संख्या काफी कम थी। इतना ही नहीं इंटर पार्लियामेंट्री यूनियन ने एक डेटा दिया था, जिसमें दिखाया गया कि 17वीं लोकसभा के सदस्यों में केवल 14.44 प्रतिशत महिलाएँ ही हैं।

भारतीय चुनाव आयोग (ईसीआई) की हालिया रिपोर्ट भी इसी पैटर्न की ओर इशारा करती है और बताती है कि अक्टूबर, 2021 तक संसद सदस्यों के बीच मात्र 10.5 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी थी। यही हाल राज्य विधानसभाओं का भी दिखा जहां विधान सभा में महिला सदस्यों की संख्या में मामूली 9 प्रति0 औसत अनुपात देखा गया।[8]

इसी के साथ भारत अन्य देशों से नीचे गिरता जा रहा है। आंकडो पर गौर करें तो मई 2022 तक पाकिस्तान की राजनीति में महिलाओ का प्रतिनिधित्व 20 प्रतिशत बांग्लादेश में और नेपाल 34 प्रतिशत थी। इस मामले में भारत भी तीन देशों से निचले पायदान पर आ खड़ा हुआ है। इसी के अनुसार, आजादी के बाद से, लोकसभा में महिलाओं के प्रतिनिधित्व का स्तर 10 प्रतिशत बढ़ने में भी कामयाब नहीं होता है।

3.1.1 बलिया जिले के संदर्भ में

बलिया जिला भारत के राजनीतिक इतिहास में अपनी विशेष पहचान रखता है। इसे "क्रांतिकारियों की धरती" कहा जाता है, जहाँ लोकनायक जयप्रकाश नारायण,

[8]भारतीय चुनाव आयोग रिपोर्ट (2021)

चितरंजन मिश्र और मंगल पांडे जैसे स्वतंत्रता सेनानियों ने लोकतंत्र और सामाजिक चेतना के नए अध्याय लिखे। यह वही भूमि है जिसने 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान अपने प्रशासनिक नियंत्रण को ब्रिटिश शासन से मुक्त कर "गणराज्य बलिया" की स्थापना की थी। किंतु इस गौरवशाली ऐतिहासिक विरासत के बावजूद, आज़ादी के 75 वर्षों के पश्चात भी इस जिले की राजनीति में महिलाओं की स्थिति अत्यंत सीमित और प्रतीकात्मक बनी हुई है। जनसंख्या में लगभग 48.2 प्रतिशत महिलाएँ होने के बावजूद, वे राजनीतिक शक्ति–संरचना में बहुत कम दिखाई देती हैं। यह असमानता केवल प्रतिनिधित्व की नहीं, बल्कि निर्णय लेने के अधिकार और सामाजिक स्वीकृति की भी है।

राजनीति में महिलाओं की भागीदारी का सबसे बड़ा माध्यम स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ हैं। उत्तर प्रदेश में 2015 में पंचायतों में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण लागू किया गया था, जिसका उद्देश्य था कि महिलाएँ स्थानीय शासन में सीधे भाग ले सकें और ग्रामीण विकास के निर्णयों में अपनी भूमिका निभा सकें। बलिया जिले में कुल 894 ग्राम पंचायतें हैं, जिनमें से लगभग 447 पंचायतों में महिलाएँ प्रधान के पद पर निर्वाचित हैं। यह संख्या दिखने में प्रभावशाली लगती है, परंतु वास्तविकता यह है कि इनमें से अधिकांश महिलाएँ केवल नाममात्र की प्रधान हैं। जिला पंचायत कार्यालय की एक आंतरिक रिपोर्ट (2023)[9] के अनुसार, लगभग 60–65 प्रतिशत महिला प्रधानों के स्थान पर उनके पति या परिजन ही वास्तविक निर्णय लेते हैं। स्थानीय भाषा में इसे "प्रधान पति संस्कृति" कहा जाता है, जो महिला प्रतिनिधित्व की मूल भावना को कमज़ोर कर देती है। ग्राम सभा बैठकों, वित्तीय प्रस्तावों और योजना स्वीकृति की फाइलों पर पुरुषों के हस्ताक्षर आम बात हैं, जबकि निर्वाचित महिला प्रधान अक्सर इन प्रक्रियाओं से दूर रखी जाती हैं।

फिर भी, इस स्थिति के बीच कुछ प्रेरक उदाहरण भी हैं। रसड़ा, सोहांव, बेरुआरबारी और मुरलीछपरा ब्लॉक की कई महिला प्रधानों ने इस प्रवृत्ति को चुनौती दी है। उदाहरण के लिए, सोहांव ब्लॉक की सुनीता देवी ने अपने ग्राम पंचायत में स्वच्छता अभियान, बालिका शिक्षा और जल संरक्षण योजनाओं में उत्कृष्ट नेतृत्व

[9] जिला पंचायत कार्यालय। वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट 2023। बलियाः जिला पंचायत कार्यालय, उत्तर प्रदेश सरकार।

दिखाया है। इसी प्रकार, रसड़ा की मीना यादव ने स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से 120 से अधिक महिलाओं को स्वरोजगार से जोड़ा। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि जब महिलाओं को अवसर और सहयोग मिलता है, तो वे ग्रामीण शासन की दिशा ही बदल सकती हैं।

नगर निकाय स्तर पर भी महिलाओं की उपस्थिति बढ़ी है, किंतु प्रभाव सीमित है। बलिया नगर पालिका परिषद, रसड़ा, सिकंदरपुर और बैरिया जैसे नगर निकायों में महिला पार्षदों की भागीदारी लगभग 41 प्रतिशत तक पहुँच गई है। 2023 के नगर निकाय चुनावों में कुल 198 वार्डों में से 82 वार्ड महिलाओं के हिस्से आए[10]। इसके बावजूद, चेयरपर्सन या वाइस चेयरपर्सन जैसे निर्णायक पदों पर पुरुषों का वर्चस्व कायम है। कई बार देखा गया है कि महिला पार्षद निर्णय प्रक्रिया में केवल औपचारिक भूमिका निभाती हैं, जबकि वास्तविक नियंत्रण राजनीतिक दलों या उनके पारिवारिक सहयोगियों के पास रहता है।

यदि विधानसभा और संसदीय राजनीति की बात करें, तो बलिया में महिलाओं की स्थिति और अधिक सीमित है। जिले में कुल छह विधानसभा सीटें हैं बलिया नगर, रसड़ा, बेल्थरा रोड, बांसडीह, सिकंदरपुर और बैरिया परंतु वर्ष 2022 के विधानसभा चुनाव में इनमें से किसी सीट से कोई भी महिला उम्मीदवार विजयी नहीं हुई। कुल 49 प्रत्याशियों में केवल 5 महिलाएँ चुनाव मैदान में उतरीं और उन्हें मिलकर कुल मतों का 1.8 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त हुआ। इसी प्रकार, 2019 के लोकसभा चुनाव में बलिया संसदीय क्षेत्र से एक महिला उम्मीदवार ने नामांकन किया, परंतु उन्हें केवल 1.6 प्रतिशत वोट मिले। यह स्थिति दर्शाती है कि राष्ट्रीय और राज्य स्तर की राजनीति में बलिया की महिलाएँ अभी भी हाशिये पर हैं।

राजनीतिक दलों के भीतर भी महिलाओं की भूमिका सीमित है। बलिया जिले के प्रमुख दलोंकृभारतीय जनता पार्टी, समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी और कांग्रेस के जिला संगठनों में महिला पदाधिकारियों की संख्या 15 प्रतिशत से कम है। कई बार महिलाओं को "महिला मोर्चा" या "सेल" जैसे उपसमूहों में सीमित रखा जाता है, जहाँ उनकी भूमिका मुख्यतः संगठनात्मक गतिविधियों तक सीमित होती है,

[10] जिला पंचायत कार्यालय। वार्षिक प्रशासनिक रिपोर्ट 2023। बलियाः जिला पंचायत कार्यालय, उत्तर प्रदेश सरकार।

नीति–निर्माण या टिकट वितरण जैसे निर्णायक मामलों में नहीं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि जिन महिलाओं को राजनीतिक दलों द्वारा उम्मीदवार बनाया जाता है, वे अधिकतर या तो किसी राजनीतिक परिवार से आती हैं या किसी प्रभावशाली पुरुष नेता की निकट संबंधी होती हैं। इस प्रकार, लोकतांत्रिक राजनीति में महिलाओं की भागीदारी अब भी पारिवारिक विरासत पर आधारित अधिक है, जनआंदोलन या वैचारिक नेतृत्व पर नहीं।

शिक्षा और सामाजिक जागरूकता का स्तर भी महिला राजनीतिक भागीदारी पर गहरा प्रभाव डालता है। बलिया में महिला साक्षरता दर लगभग 69.2 प्रतिशत है, परंतु उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं की संख्या अभी भी सीमित है। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की कमी, बाल विवाह और आर्थिक निर्भरता महिलाओं के सार्वजनिक जीवन में प्रवेश को रोकते हैं। स्थानीय सर्वेक्षणों से यह स्पष्ट हुआ है कि जिले की 64 प्रतिशत महिलाएँ राजनीति में रुचि नहीं रखतीं, जबकि 27 प्रतिशत महिलाएँ रुचि तो रखती हैं, परंतु परिवार या समाज की अनुमति न मिलने के कारण वे चुनाव या राजनीतिक गतिविधियों में शामिल नहीं हो पातीं।

सकारात्मक पक्ष यह है कि स्थानीय प्रशासन और सामाजिक संगठनों ने महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिकरण के लिए पहलें शुरू की हैं। वर्ष 2023 में "महिला नेतृत्व विकास कार्यक्रम के तहत 225 महिला प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दिया गया, जिसमें पंचायत प्रबंधन, वित्तीय निर्णय प्रक्रिया, कानून की जानकारी और सार्वजनिक भाषण कौशल पर कार्यशालाएँ आयोजित की गईं। इसी वर्ष महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा "नारी शक्ति मंच" के अंतर्गत ग्रामीण महिलाओं के लिए 18 जागरूकता शिविर लगाए गए, जिनमें उन्हें राजनीतिक भागीदारी और संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूक किया गया।

बलिया में राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति का सबसे बड़ा संकट यह है कि उनका प्रतिनिधित्व संरचनात्मक कम और प्रतीकात्मक अधिक है। अधिकांश महिलाएँ आरक्षण नीति की वजह से राजनीति में आई हैं, लेकिन संस्थागत समर्थन और सामाजिक स्वीकृति के अभाव में वे स्वतंत्र निर्णय लेने की स्थिति में नहीं हैं। पितृसत्तात्मक मानसिकता अब भी यह मानती है कि राजनीति पुरुषों का कार्यक्षेत्र है,

और महिला को केवल औपचारिक भूमिका निभानी चाहिए। इसके साथ ही, आर्थिक संसाधनों की कमी भी महिलाओं को चुनावी प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी से रोकती है। राजनीतिक अभियान में धन, जनसंपर्क और प्रचार साधनों की आवश्यकता होती है, और महिलाएँ इन संसाधनों पर नियंत्रण नहीं रखतीं।

फिर भी, बलिया की नई पीढ़ी की महिलाएँ इस प्रवृत्ति को बदल रही हैं। स्थानीय कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में छात्र राजनीति में महिला भागीदारी बढ़ रही है। बी.एन.एस.डी. कॉलेज और टाउन डिग्री कॉलेज में छात्रसंघ चुनावों में पिछले पाँच वर्षों में महिला प्रत्याशियों की भागीदारी में 38 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है। शिक्षित युवतियाँ अब पंचायत, छात्र राजनीति, स्वयं सहायता समूह और गैर–सरकारी संगठनों के माध्यम से नेतृत्व की भूमिका निभा रही हैं। यह परिवर्तन दर्शाता है कि आने वाले वर्षों में बलिया की राजनीति में महिला नेतृत्व अधिक प्रभावी रूप से उभरेगा।

निष्कर्षत:, बलिया जिले की राजनीति में महिलाएँ वर्तमान में संक्रमण काल से गुजर रही हैं। वे अब केवल आरक्षण की देन नहीं रहीं, बल्कि अपने अधिकारों, शिक्षा और आत्मविश्वास के बल पर सार्वजनिक जीवन में अपनी पहचान बना रही हैं। हालांकि चुनौतियाँकृजैसे प्रधान पति प्रथा, सामाजिक पूर्वाग्रह, आर्थिक निर्भरता और राजनीतिक दलों में अवसर की कमीकृअब भी मौजूद हैं, परंतु परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है। जब बलिया की महिलाएँ केवल नाम के लिए नहीं, बल्कि निर्णय और नीति निर्माण की भागीदार बनेंगी, तभी यह जिला वास्तव में लोकतांत्रिक समानता और लैंगिक न्याय के आदर्शों को साकार कर सकेगा।

3.2 भारत की नौकरशाही में महिलाओं की स्थिति

नौकरशाही यानि ब्यूरोक्रेसी में भी महिलाओं का यही हाल है। राष्ट्रीय और राज्य दोनो स्तरों पर विभिन्न सार्वजनिक सेवा पदों पर महिलाओं की भागीदारी इतनी कम है, उनमें से कुछ रोल्स में उम्मीदवारों के लिए फीस में छूट भी दी जाती है। 1951 और 2020 के बीच पद संभालने वाले 11,569 आईएएस अधिकारियों की कुल संख्या में से केवल 1,527 महिलाएं थी।

वहीं साल 2022 तक आईएएस सचिवों में केवल 14 प्रतिशत ही महिलाएं थी। यानि 92 पदों में से केवल 13 पर महिलाएं थीं। वरिष्ठ पदों में तो यह स्थिति और भी गम्भीर है। भारतीय राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में केवल तीन ही मुख्य सचिव हैं। भारत में कभी कोई महिला कैबिनेट सचिव नहीं रही। गृह, वित्त, रक्षा और कार्मिक मंत्रालय में महिला सचिव नहीं रहीं है।

संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) के नए अधिकारिक आंकड़ों में भी यह अंतर देखा गया है। साल 2019 के दौरान लगभग 3.67 लाख महिला उम्मीदवारों ने यूपीएससी परीक्षा के लिए आवेदन जमा किए थे। हालांकि इनमें से 1.77 लाख परीक्षा देने के लिए आए और मात्र 1,534 महिलाए योग्यता मानदण्डो को पारित करने में सफल रही। इसकी तुलना में कुल 7.68 लाख पुरुष उम्मीदवारों ने परीक्षा के लिए आवेदन जमा किए थे। इनमें से 3.90 लाख ने परीक्षा दी। इसके अलावा, यह भी देखा गया कि महिला उम्मीदवार पुरुषों की तुलना में अपनी सेवा से स्वैछिक सेवानिवृत्ति चुनने के प्रति इंक्लाईड रहती है। पितृसत्तात्मक समाज और इस नौकरी के साथ पारिवारिक प्रतिबद्धताओं को संतुलित करने वाला दबाव होता है, जिसके कारण महिलाएँ सिविल सेवाओं में अपनी भागीदारी नहीं दे पाती हैं। शायद यही कारण है कि ब्यूरोक्रेस में, 2011 और 2020 के बीच केवल 2 प्रतिशत ही वृद्धि देखी गई। बलिया जिले में नौकरशाही में महिलाओं की भागीदारी धीरे–धीरे बढ़ रही है, परंतु अब भी यह स्थिति संख्या और प्रभाव दोनों दृष्टियों से सीमित है। जिला प्रशासन के 2024 के आँकड़ों के अनुसार, बलिया में कुल 326 राजपत्रित अधिकारियों में केवल 47 महिलाएँ (लगभग 14.4 प्रतिशत) कार्यरत हैं। इनमें से अधिकांश शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज कल्याण और बाल विकास जैसे "सॉफ्ट सेक्टर" विभागों में नियुक्त हैं, जबकि राजस्व, पुलिस, विकास प्राधिकरण या तकनीकी विभागों में महिला अधिकारियों की संख्या बहुत कम है।

वर्तमान में बलिया में एक महिला जिला विकास अधिकारी, दो उप–जिलाधिकारी और पाँच पुलिस उपाधीक्षक के पदों पर कार्यरत हैं। शिक्षा विभाग में लगभग 38 प्रतिशत महिला कर्मचारी, जबकि प्रशासनिक सेवा कैडर में यह अनुपात मात्र 10–12 प्रतिशत है। सामाजिक दृष्टि से यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि महिलाओं की नौकरशाही में

उपस्थिति अब प्रतीकात्मक स्तर से आगे बढ़ रही है, परंतु उच्च पदों तक पहुँचना अभी भी कठिन है।

महिला कर्मचारियों ने हाल के वर्षों में प्रशासनिक पारदर्शिता, बालिका शिक्षा, पोषण मिशन और महिला सुरक्षा अभियानों में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। तथापि, पारिवारिक दबाव, ग्रामीण पोस्टिंग की चुनौतियाँ और सुरक्षा संबंधी चिंताएँ अब भी महिला नौकरशाही की राह में प्रमुख अवरोध हैं। बलिया में महिलाओं का नौकरशाही में प्रवेश सामाजिक परिवर्तन की दिशा में सकारात्मक संकेत है।

3.3 महिलाओं के समक्ष चुनौतियां

हमारे देश में महिला के लिए क्या सही है और क्या नहीं, यह सदियों पहले पितृसत्तात्मक समाज तय कर चुका है। पारम्परिक लैंगिक अपेक्षाएं और तमाम रूढ़ियाँ अक्सर में महिलाओं के अनुभव और कल को आकार देती है। ये प्रचलित सामाजिक मानदण्ड महिलाओं को राजनीति में उतरने से हतोत्साहित करते हैं। यह तो हम सभी जानते हैं। कि आज भी प्रचलित धारणा यही है कि महिलाओं की प्राथमिक भूमिकाएं एक पत्नी, बहू, बेटी और मां होने के इर्द–गिर्द घूमनी चाहिए। राजनीति और ब्यूरोक्रेसी के क्षेत्र को आज भी पुरुषों के लिए ही आरक्षित माना जाता है। आपको नहीं लगता कि देश के इतने महत्वपूर्ण संस्थाओं से महिलाओं का बहिष्कार करना लोकतंत्र के सिद्धांतो को स्थापित करने की संभावनाओं को सीमित करता है। यह सवाल सिर्फ पूछे ही नहीं जाने चाहिए, बल्कि इनका हल भी महत्वपूर्ण है। अब आप ही बताइए क्या महिलाएँ वाकई आजाद हैं?

भारतीय समाज पुरुष प्रधान होने से पुरुष अपने आप को श्रेष्ठ मानता है और नारी को अपनी तुलना में तुच्छ ही समझता है। इस प्रकार की मानसिकता को बदलना आवश्यक है। वर्तमान समय में शिक्षा का विकास होने के कारण और महिलाओं के शिक्षित होने के कारण स्थिति में परिवर्तन दिखाई देता है। क्योंकि महिलायें शिक्षित होकर परिस्थितियों का सामना करना सीख गई हैं। अपने अधिकारों और को पहचानने लगी हैं। इसलिए राजनीति में आकर पुरुष के साथ देश के विकास में अपने को भागीदार बनाना चाहती हैं, लेकिन इसमें पूरी तरह वह सफल

नहीं है, क्योंकि राजनीति में आने के लिए जिस तरह के हथकण्डे पुरुष अपनाता है उसे नारी नहीं अपना सकती। जिससे आज नारियों को समान सहभागिता नहीं मिल पाई है। मनी मसल्स और मैन पावर के कारण लोगों का चुनाव पर विश्वास डगमगाने लगा है इस चुनावी प्रवृत्ति का सबसे बुरा असर महिलाओं की राजनीतिक हैसियत पर खड़ा है।

आज हम पंचायत स्तर पर पाते हैं कि महिलाओं को आरक्षण देकर गांव की और शहरों की राजनीति तक स्थान तो अच्छा मिला है, लेकिन वहां भी कई दोष पाए गए हैं जिससे उसे पुरुष के अधीन ही कार्य करना पड़ रहा है अगर हम राज्यों की विधान सभा व संसद में देखे तो वहां पर भी महिला का स्थान नगण्य है। महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देने की बात कई सालों से की जा रही है लेकिन आज तक वो विधेयक पारित नहीं हुआ है, वह विधेयक अब संसद की दहलीज पार कर पाएगा यह आज न तो लोकसभा को पता है और न ही सरकार को। सामाजिक, राजनीतिक और अन्य कार्य क्षेत्रों में महिलाओं के सामने आने वाले मुश्किलों को दूर करने वाली बात कही जाती है व उसका हल भी निकाला जाता है, लेकिन उसका पालन नहीं किया जाता है। समाज को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि ऐसाक्यों होता है?

महिला की स्थिति के बारे में कहा जाता है कि चुनावमें तथा रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े हुए प्रश्नों पर अपने राय जाहिर करने की तरह ही राजनितिक प्रकिया में महिलाओं की भागीदारी में एक क्रमिक वृद्धि के बावजूद राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का समर्थ अभी तक महिलाओं के पास नहीं है, इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का कारण राजनीतिक दलों और महिलाओं की संख्या बहुत कम पायी जाती है। हमारा आधुनिक भारतीय समाज आज भी राजनीति में महिलाओं के लिए समान प्रतिनिधित्व के सिद्धांत को अपनाने में हिचकिचा रहा है, जिस कारण से महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं बढ़ पा रही है।

आज भारत में महिलाऐं सभी क्षेत्रों में आ रही है। वे अपने मेहनत व लगन के बल पर सभी क्षेत्रों में सफलता के झण्डे गाड़ रही है। तो फिर राजनीति के क्षेत्र में पीछे क्यों हो रही है? इतिहास और वर्तमान गवाह है कि भारतीय महिलाओं ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के वर्चस्व को तोड़ा है और कई क्षेत्रों में तो पुरुषो से भी

अधिक प्रभावी भूमिका है। लेकिन वे राजनीति के क्षेत्र में पुरुषों के मुकाबले बहुत पीछे भी छूट गई हैं। महिलाओं को समान वैधानिक व राजनीतिक अधिकार दिये जाने चाहिए तभी भारत की आजादी सार्थक हो पाएगी।[11]

राजनीति में महिलाओं की पर्याप्त भागीदारी और सत्ता में उनकी समान हिस्सेदारी के बिना हमारी आधुनिकता, विकास और सभ्यता, सब कुछ बेमानी है। इसलिए राजनीति में महिलाओं की पर्याप्त भागीदारी के लिए समाज के सभी वर्गो को प्रयास करने होंगे। सभी लोगो को अपने जिम्मेदारी का निर्वहन करना होगा। एक ओर राजनीति महिलाओं की कमी को तो झेल ही रही है। दूसरी ओर आम भारतीय महिलाऐं भी राजनीतिक रूप से अक्रियाशील ही है। वे विभिन्न स्तरों के चुनाव में मतदान तो करती हैं, लेकिन उनका मत आधिकार उसी उम्मीदवार को जाता है,जिससे उसके पुरुष रिश्तेदार चाहते हैं। वास्तव में महिलायें अपने मताधिकार का तो उपभोग करती हैं, लेकिन पारिवारिक बंधनो के चलते वे अपने राजनीतिक अधिकारों का सही तरीके से उपयोग नहीं कर पाती।

राजनीतिक दल महिला आरक्षण के हिमायती तो हैं,और वे महिलाओं को राजनीतिक रूप से जागरूक और क्रियाशील बनाने की जरूरत पर बल देते हैं, लेकिन हकीकत कुछ और ही दिखाई देती है। राजनीतिक दल महिलाओं को राजनीति में भागीदार और सत्ता के हिस्सेदार की वकालत तो करते हैं लेकिन व्यवहार में उनकी कार्यप्रणाली बिलकुल उलट है, यही कारण है कि महिला उम्मीदवार को न तो अधिक टिकट ही दिए जाते हैं और न ही उन्हें संगठन में कोई महत्वपूर्ण जिम्मेदारी सौंपी जाती है। लेकिन अब स्थिति बदलने वाली है क्योंकि महिलाएँ राजनीतिक रूप से धीरे–धीरे जागरूक हो रही हैं। वे राजनीति में भागीदारी और सत्ता में हिस्सेदारी चाहती हैं इसलिए ती मेधा पाठकर, अरूधंती राय, वन्दना शिवा और अरूणा जैसी महिला राजनीतिज्ञो की जमात उभाकर सामने लाना चाहती है।

पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओ को 33 प्रतिशत आरक्षण देते समय हमारे पुरुष प्रधान समाज के प्रतिनिधि अच्छी तरह जानते थे कि इन चुनाव में जो महिलायें

[11]श्रीवास्तव,सरोजनी (2015) भारतीय राजनीति में महिलाएं,प्राची प्रकाशन पृष्ठ–58

विजयप्राप्त करने के बाद सत्ता में भागीदारी निभाने को आगे आएंगी तो उनमें से अधिकतर वे महिलाएं होंगी जो अशिक्षित और राजनीतिक रूप से निष्क्रिय होंगी तथा परम्परागत रूप से पुरुषों की मुट्ठी में कैद होंगी और उन्हें कठपुतली की भांति अपने इशारे पर नचाना आसान होगा, और यह बात वैसे ही हुई जैसा पुरुष प्रधान व्यवस्था में घरेलू महिलाओं को इसलिए जाने दिया कि वे पदासीन होते हुए भी पुरुषों के चंगुल से बाहर जाने वाली नहीं थी, किंतु वे महिलाओं को दिल्ली और अन्य प्रांतो की राजधानियो में भेजना इसलिए पसंद नहीं करते क्योंकि उन्हें महिलाओं के अपने हाथ से निकल जाने का डर है।

आज नहीं तो कल संसद में महिला आरक्षण विधेयक पारित हो जाएगा लेकिन प्रश्न ये उठता है कि आम भारतीय महिला वास्तव में चाहती क्या है? क्या सिर्फ समाज में समानता का अधिकार? समानता के आधार पर पुरुषों जैसा मान–सम्मान, इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए राजनीतिक अधिकार और आरक्षण तो जरूरी है ही, लेकिन साथ ही आवश्यकता है पुरुषों की रूढ़िवादिता, सोच में मौलिक बदलाव लाने की। पुरुष प्रधान राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन करने की और महिलाओं को हीन भावना से उबारकर राजनीतिक रूप से जागृत करने की। हमें अपनी विधायिका में सशक्त राजनीतिज्ञ चाहिए न कि डमी और कठपुतली। राजनीतिज्ञ जो पुरुषों के इशारे पर चलते रहें इसलिए जरूरी है कि विधायिका में महिलाओं को आरक्षण देने के साथ–साथ उन्हे राजनीतिक रूप से जागरूक भी किया जाए ताकि वे सच्चे अर्थों में राजनीतिक भागीदारी पा सके, स्वतंत्र राजनीतिक निर्णय ले सके और देश के लिए सार्थक काम कर सके। महिला का आत्मसम्मान देश को विकास की ओर शीघ्र ही पहुंचा देगा।

पूरी दुनिया में आज महिला आंदोलन का शोर है इन्हें विभिन्न प्रकार के अधिकार दिये जाने की बात की जा रही है। महिला सशक्तिकरण पर जोर भी दिया जा रहा है, लेकिन फिर भी स्थिति जैसी की वैसी है। महिलाओं को राजनीतिक रूप से सक्षम और सक्रिय कैसे बनाया जाए इस पर समाज और शासन को चिंतन करना चाहिए। महिलाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाया जाना भी उनकी राजनीतिक स्थिति में सुधार का एक लक्षण माना जा सकता है। देश को आजाद हुए आज कई साल हो

गए हैं। जिनमें स्व० इंदिरा गांधी को छोड़कर जितनी भी महिलायें राजनीति में आई हैं वे राजनीतिक रूप में डमी ही साबित हुई है। जब महिला किसी महत्वपूर्ण पद पर पहुंचती है तो उसने उम्मीद की जाती है कि वे आम महिलाओं की बेहतरी के लिए कुछ खास करेगी लेकिन से उच्च कुल महिला राजनीतिज्ञ ऊँचे पद पर पहुंच कर अन्य महिलाओं के दर्द को दूर करना चाहती है तो उसे अन्य लोगों का सहयोग पूरी तरह नहीं मिल पाता है।

महिलाओं पर अत्याचार की घटनाएँ बढ़ रही है, महिला सांसद एक शब्द नहीं बोल पाती है। इस बदहाली का एकमात्र कारण है कि महिलाओं की राजनीतिक चेतना में कमी। अब इस स्थिति को बदला जाना आवश्यक है। महिलाओं को राजनीतिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे पुरुष रिश्तेदारों के हाथों की कठपुतलियां न बनी रह जाए। विधाधिका में 33 प्रतिशत आरक्षण जरूरी है राजनीतिक जागरूकता अति आवश्यक है। महिलाओं के राजनीतिक परिवेश को बदलने के लिए कुछ बातों पर ध्यान देना जरूरी है, जैसे महिलाओं को राजनीतिक रूप से क्रियाशील बनाया जाए, स्वस्थ व सकारात्मक सामाजिक संरचना का निर्माण आर्थिक आत्मनिर्भरता और पारिवारिक उत्तरदायित्वो को सहज बनाया जा सके। समुचित शिक्षा की व्यवस्था की जाए, नारी के प्रति सोचने व समझने का सकारात्मक नजरिया बढ़ाया जाय और उसे पूरी सुरक्षा दिया जाना चाहिए। प्रतिनिधि संस्थाओं में उसे सहभागी बनाया जाए, राजनीतिक दलों व महिला संगठनों का दायित्व उन्हें सौपा जाए और अगर कोई भी व्यक्ति महिला के साथ दुर्व्यवहार करता है तो उसे कड़ी सजा दी जाए।[12]

यह विचार भी व्यक्त किया जाता है कि स्थानीय सरकार में महिला राजनीतिक प्रतिनिधि अपने पुरुष रिश्तेदारों के लिए केवल एक साधन मात्र हैं। यदि ऐसा होता तो हमें राजनीति नेताओं द्वारा लैंगिक आधार पर चयन किए गए नीति विकल्पों में कोई अंतर दिखाई नहीं पड़ना चाहिए क्योंकि आरक्षित सीटों पर महिला नेताओं द्वारा पद्धारण किए जाने के मामले में भी इन्हे पुरुषों द्वारा ही नियंत्रित किया जाएगा। पश्चिम बंगाल और राजस्थान में 265 ग्राम सभाओं पर एकत्रित किए गए डेटा का

[12]चौधरी,मोदन लाल (2018) महिला सशक्तिकरण,राजकमल प्रकाशन पृष्ठ–51

उपयोग करते हुए पाते हैं कि एक पार्षद की सीट के आरक्षण का सार्वजनिक वस्तुओं के प्रावधान पर बड़ा प्रभाव होता है, जबकि महिला नेता महिलाओं द्वारा अधिक मूल्यवान समझी जाने वाली सार्वजनिक वस्तुओं में अधिक निवेश करती है ।

अन्य अध्ययन महिला राजनीतिक नेताओं की प्रभावशीलता की ओर इशारा करते हैं लेकिन यहां अनुभव महत्वपूर्ण है। महाराष्ट्र में 2008 में किए गए एक सर्वेक्षण में पाया गया है कि जिस गाँव की मुखिया महिला है वहां बुनियादी सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता बेहतर है, जब उसका कार्यकाल 3–3.5 वर्ष रहा हो। अफरीदी एवं अन्य द्वारा किए गए एक आईजीसी अध्ययन (2017) में यह पाया गया कि जिन महिला नेताओं को कार्य का कोई भी पूर्व अनुभव नहीं है वे शुरुआत में अच्छी प्रकार से कार्य नहीं कर पातीं, परंतु वे तेजी से सीखते हैं और उन रक्षित सीटो पर पुरुष नेताओं के समान ही कार्य करती है। इसलिए सकारात्मक कार्रवाई और राजनीति में महिलाओं की भागीदारी से संबोधित नीतियो की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए क्षमता–निर्माण और संस्थागत समर्थन की आवश्यकता है।

पुनर्वितरण नीतियों के साथ महिला राजनीतिक नेताओं के जुड़ाव को देखते हुए, कोई भी यह सोच सकता है कि वे कम से कम लघु से मध्यम अवधि में आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में कम प्रभावी है। एक आईजीसी अध्ययन में भालोत्रा एवं अन्य (2018)[13] इसके विपरीत साक्ष्य देते हैं। 1992–2012 की अवधि के लिए भारत में 4,265 विधानसभा क्षेत्रों के आंकड़ो की जांच करते हुए, वे पाते हैं कि महिला विधायक पुरुष विधायकों की तुलना में अपने निर्वाचन क्षेत्रों में प्रति वर्ष लगभग 1.8 प्रतिशत अधिक अंको से आर्थिक निष्पादन को बढ़ाती है। शोधकर्ता इस आश्चर्यजनक परिणाम का श्रेय महिला नेताओं के कम भ्रष्ट अधिक कुशल और अपने पुरुष समकक्षों से अधिक प्रेरित होने को देते हैं।

परंतु क्या शक्ति सम्पन्न महिलाएँ वास्तव में कम भ्रष्ट होती हैं? यह एक अनुत्तरित प्रश्न है। ग्रामीण बिहार में एक मानव निर्मित क्षेत्र प्रयोग के आधार पर, गंगाधरन, जैन, मैत्रा, और वेस्सी (2015)[14] यह दर्शाते हैं कि ऐसे गांव जहां पहले एक

[13] Baskaran, T., Bhalotra, S., Min, B., & Uppal, Y. (2018). "Women Legislators and Economic Performance." IGC Working Paper

[14] Gangadharan, L., Jain, T., Maitra, P., & Vecci, J. (2015). "Social Identity and Governance: The Behavioral Response to Female Leaders." European Economic Review, 90(C), 302–325

महिला गाँव की मुखिया रह चुकी है, वहां ऐसा देखा गया है कि एक नेता के रूप में कार्य करते हुए महिलाएं पुरुषों की तुलना में संसाधनों के नियोजन हेतु अधिक तत्पर होती हैं। लेखको द्वारा इस संबंध में की गई व्याख्या में यह संभावना व्यक्त की गई है कि महिला नेताओं को खराब व्यवहार किए जाने की आशंका रहती है, जिसके कारण वे दूसरों की तुलना में अपने आपको कमजोर मानने लगती हैं और नकारात्मक व्यवहार करती हैं अथवा एक ऐसे वातावरण में जहां महिलाओं को नेतृत्व के कुछ ही अवसर उपलब्ध होते हैं, वे केवल लघुकालिक परिणामों के लिए कार्य करती हैं और जब उन्हे कोई अवसर प्राप्त होता है तो वे एक–बारगी निर्णय लेती हैं क्योंकि उन्हें फिर से चुने जाने की उम्मीद नहीं होती है। लेकिन यह पाया जाता है कि महिला राजनीतिक नेताओं की उपस्थिति के अन्य सकारात्मक सामाजिक परिणाम भी होते हैं।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ो का विश्लेषण करते हुए अय्यर और मणि (2012) यह पाते हैं कि 1993 के संशोधन के परिणाम स्वरुप महिलाओं की बढ़ती राजनीतिक भागीदारी के बाद महिलाओं के खिलाफ रिकॉर्ड किए गए अपराधों में 26 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हुई है। गहराई से अध्ययन करने पर, शोधकर्ताओ को पता चलता है कि इसका कारण महिलाओं के खिलाफ होने वाले वास्तविक अपराधों में वृद्धि नहीं, बल्कि ऐसे अपराधों की बढ़ती रिपोर्टिंग है। महिला राजनीतिक प्रतिनिधियों के अधीन पुलिस की संवेदनशीलता में वृद्धि हुई है, जो महिलाओं को अपनी चिंताओं को उठाने के लिए प्रोत्साहित करती है।[15]

जबकि आमतौर पर यह माना जाता है कि महिला राजनीतिक नेता समाज में लड़ कियों और महिलाओं के लिए रोल मॉडल के रूप में काम कर सकती हैं, लेकिन राजनीतिक उम्मीदवारी के लिए कार्य करता हुआ नहीं दिखाई पड़ता है। 1980–2007 के दौरान भारत के सभी राज्यों के चुनावों को शामिल करने वाले निर्वाचन क्षेत्र–स्तर के आंकड़ो का विश्लेषण करते हुए, भालोत्रा, क्लाट्स–फिगुएरस और अय्यर (2018)[16] पाते हैं कि एक महिला की चुनावी जीत के बाद नई महिला उम्मीदवारों के प्रवेश में

[15] Iyer, L., Mani, A., Mishra, P., & Topalova, P. (2012). "The Power of Political Voice: Women's Political Representation and Crime in India." American Economic Journal: Applied Economics, 4(4), 165–193

[16] Bhalotra, S., Clots-Figueras, I., & Iyer, L. (2018). "Women as Policy Makers: Evidence from a Randomized Policy Experiment in India

गिरावट आती है। यह गिरावट लैंगिक पूर्वाग्रह वाले राज्यों तथा पुरुषों द्वारा नेतृत्व किए जाने वाले राजनीतिक दलों में अधिक देखी जाती है, जोकि गैर पारम्परिक भूमिका निभा रही महिलाओं के खिलाफ पुरुषों की अक्रामक प्रतिक्रिया के संगत है।

भारत मे लिंगानुपात (प्रत्येक 1,000 पुरुष मतदाताओं पर महिला मतदाताओं की संख्या) में 1960 के दशक में 715 से बढ़कर 2000 के दशक में 883 तक प्रभावशाली वृद्धि प्रदर्शित हुई है तथा 2019 के आम चुनाव में पहली बार पुरुषों की तुलना में महिलाओं द्वारा अधिक मतदान किए जाने की संभावना थी। फिर भी, महिलाओं को राजनीतिक रूप से उन्मुख सार्वजनिक गतिविधियों जैसे चुनाव अभियान या विरोध प्रदर्शन में भाग लेने या किसी राजनीतिक पार्टी के साथ पहचान स्थापित करने की सम्भावना कम होती है।[17]

उ०प्र० (अय्यर और मणि 2018)[18] में किए गए एक सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि सबसे बड़ा लैंगिक अंतराल वास्तव में चुनावी भागीदारी (उदाहरण के लिए, ग्राम सभाओं में भाग लेने) में हैं। लैंगिक अंतराल को आंशिक रूप से इन कारकों द्वारा समझाया जाता है जैसे कि महिलाओं को राजनीतिक संस्थानों और चुनावी नियमों के बारे में काफी कम जानकारी होती है, वे स्व–मूल्यांकन किए गए नेतृत्व कौशल के संबंध में पुरुषो से पीछे होती हैं, और उन्हें बाहर जाने के लिए अनुमति की आवश्यकता होती है।

राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की उपस्थिति बढ़ाने के तरीकों की खोज करते हुए, म०प्र० में एक प्रयोग (प्रिल्लामान 2018)[19] यह दर्शाता है कि जिन महिलाओं ने स्व–सहायता समूह (एसएचजी) में भाग लिया था। उनके ग्राम सभा की बैठकों में भाग लेने या स्थानीय नेताओं पर दावा करने की दो गुना अधिक सम्भावना थी। यह बताया गया है कि सकारात्मक प्रभाव काफी हद तक महिलाओं की उस समन्वित कार्रवाई का परिणाम है जिसमें वे प्रतिनिधित्व की मांग करने के साथ–साथ पुरुषों की अक्रामक प्रतिक्रिया का विरोध करती हैं। ऊपर उल्लिखित अध्ययन में चट्टोपाध्याय

---

[17]भारत की जनसंख्या रिपोर्ट–2012

[18] Iyer, L. & Mani, A. 2018. "The Road Not Taken: Gender Gaps along Paths to Political Power". CAGE Online Working Paper Series 368, Competitive Advantage in the Global Economy (CAGE), University of Warwick

[19] Prillaman, S. A. (2018). "How Women's Groups Close India's Political Gender Gap: Evidence from a Natural Experiment in Rural Madhya Pradesh." Poverty Action Lab (J-PAL), Working Paper I

और डफ्लों (2004)[20] यह दर्शाते हैं कि नीति निर्धारण प्रक्रिया में महिलाओं के भाग लेने की तब अधिक सम्भावना होती है जब उनकी ग्राम परिषद की नेता एक महिला हो। जब महिला प्रधान होती है, तो ग्राम संसद में प्रतिभागियों की संख्या में महिलाओं का प्रतिशत काफी अधिक होता है । इन गांवों की महिलाओ द्वारा पिछले छह महीनों में प्रधान से अनुरोध या शिकायत करने की सम्भावना भी दो गुनी बढ़ जाती है। यह स्थिति इस विचार के संगत हैं कि राजनीतिक संचार नागरिको और नेताओं के समान लिंग के होने से प्रभावित होता है। उन्होंने इस सम्भावना को भी सामने रखा कि इस प्रकार नीति निर्धारण प्रक्रिया में ग्रामीण महिलाओं की बढ़ी हुई भागीदारी महिला प्रधानों के नीतिगत निर्णयों में भूमिका निभा सकती है।[21]

[20] Chattopadhyay, R., & Duflo, E. (2004). "Women as Policy Makers: Evidence from a Randomized Policy Experiment in India." Econometrica, 72(5), 1409-1443।

[21] चौधरी,मोहनलाल (2020) पंचायत में महिलाओं का प्रतिनिधित्व : एक अध्ययन पृष्ठ–42

अध्याय – 4: भारत में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति

भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका प्राचीन काल से ही अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। वैदिक युग में महिलाएँ शिक्षा, दर्शन, युद्धकला और निर्णय लेने में पुरुषों के समान अधिकार रखती थीं। गार्गी, मैत्रेयी, अपाला जैसी विदुषी महिलाओं ने समाज में अपने ज्ञान और नेतृत्व का उदाहरण प्रस्तुत किया। किंतु समय के साथ सामाजिक संरचना में परिवर्तन हुआ और औपनिवेशिक काल तक आते–आते महिलाओं की स्थिति कमजोर होती चली गई। विदेशी शासन के दौरान पितृसत्तात्मक सोच, बाल विवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियों ने महिलाओं को घर की चारदीवारी में सीमित कर दिया।

स्वतंत्रता आंदोलन ने इस परिदृश्य को बदला। महात्मा गांधी, पंडिता रमाबाई, सरोजिनी नायडू, कस्तूरबा गांधी जैसी विभूतियों ने महिलाओं को सामाजिक और राजनीतिक चेतना से जोड़ा। स्वतंत्र भारत में संविधान ने समानता, स्वतंत्रता और गरिमा का अधिकार देकर महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक ठोस कदम रखा।

वर्तमान समय में महिला उद्यमिता भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था दोनों के लिए परिवर्तन का प्रतीक बन गई है। महिलाएँ केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि उत्पादक और नवाचार की वाहक बन रही हैं। वे छोटे और मध्यम उद्योगों, सेवा क्षेत्र, कृषि–आधारित उद्योगों तथा डिजिटल मंचों पर अपनी पहचान बना रही हैं। इससे न केवल उनका आत्मनिर्भरता का स्तर बढ़ा है, बल्कि समाज में आर्थिक समानता और लैंगिक संतुलन की दिशा में भी सकारात्मक परिवर्तन आया है। इस प्रकार, महिला उद्यमिता आज भारतीय समाज की प्रगति, सामाजिक न्याय और समावेशी विकास की धुरी बन चुकी है।

4.1 महिला सशक्तिकरण और लैंगिक समानता का वैश्विक परिप्रेक्ष्य

महिला सशक्तिकरण आज केवल किसी देश या समाज का विषय नहीं रहा, बल्कि यह एक वैश्विक सामाजिकदृआर्थिक परिवर्तन की धुरी बन चुका है। इसका

अर्थ केवल महिलाओं को अधिकार देना नहीं है, बल्कि उन्हें ऐसे अवसर और वातावरण प्रदान करना है जिसमें वे अपनी क्षमताओं का पूर्ण विकास कर सकें और समाज के निर्णय–निर्माण की प्रक्रिया में समान रूप से भागीदारी निभा सकें। महिला सशक्तिकरण का विचार मानव सभ्यता के विकास के साथ जुड़ा हुआ है, किंतु इसका संगठित रूप 19वीं और 20वीं सदी में तब सामने आया जब विश्वभर में नारी अधिकार आंदोलन ने गति पकड़ी।

(क) ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

18वीं सदी के अंत में फ्रांस और इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के दौरान महिलाओं ने कार्यबल में प्रवेश किया, किंतु उन्हें वेतन, अवसर और सम्मान में पुरुषों के समान अधिकार नहीं मिले। 1848 में अमेरिका के सेनेका फॉल्स सम्मेलन में पहली बार महिलाओं के मताधिकार और समान अवसरों की मांग की गई, जिसने अंतरराष्ट्रीय महिला आंदोलन को दिशा दी। 20वीं सदी में प्रथम विश्व युद्ध और द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान महिलाओं ने उद्योग, चिकित्सा, शिक्षा और सैन्य सेवा जैसे क्षेत्रों में पुरुषों के समान योगदान दिया, जिससे समाज ने उनकी कार्यक्षमता को स्वीकार करना प्रारंभ किया।

1945 में संयुक्त राष्ट्र संगठन की स्थापना के साथ ही लैंगिक समानता को एक वैश्विक मुद्दे के रूप में मान्यता मिली। 1948 में स्वीकृत मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा ने यह स्पष्ट किया कि "सभी मानव प्राणी समान गरिमा और अधिकारों के साथ जन्म लेते हैं।" यह महिला सशक्तिकरण के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहली ठोस घोषणा थी।

(ख) वैश्विक पहल और सम्मेलन

1975 में मैक्सिको सिटी में आयोजित पहला विश्व महिला सम्मेलन वैश्विक नीतियों के लिए मील का पत्थर साबित हुआ। इसके बाद 1980 (कोपेनहेगन), 1985 (नैरोबी) और 1995 (बीजिंग) में हुए सम्मेलन ने महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर व्यापक विमर्श प्रस्तुत किया। विशेष रूप से 1995 का बीजिंग घोषणा पत्र और कार्ययोजना महिला सशक्तिकरण की दिशा में

सबसे प्रभावशाली दस्तावेज माना जाता है। इसमें 12 प्रमुख क्षेत्रों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, हिंसा, शक्ति–साझेदारी, रोजगार, और मीडिया में लैंगिक समानता सुनिश्चित करने की रणनीतियाँ प्रस्तुत की गईं।

इसी क्रम में 2000 में संयुक्त राष्ट्र ने मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स और बाद में 2015 में सतत विकास लक्ष्य को अपनाया। इनमें लक्ष्य संख्या 5 विशेष रूप से "लैंगिक समानता प्राप्त करना और सभी महिलाओं एवं बालिकाओं को सशक्त बनाना" पर केंद्रित है। SDG–5 महिलाओं के खिलाफ भेदभाव, हिंसा और असमानता को समाप्त कर शिक्षा, नेतृत्व, स्वास्थ्य और आर्थिक भागीदारी में समान अवसर प्रदान करने की दिशा में कार्यरत है।

ग) वैश्विक स्तर पर स्थिति और प्रगति

विश्व आर्थिक मंच द्वारा जारी के अनुसार, 2024 तक भी वैश्विक स्तर पर पुरुषों और महिलाओं के बीच पूर्ण समानता हासिल नहीं हो सकी है। रिपोर्ट बताती है कि वर्तमान गति से लैंगिक समानता प्राप्त करने में अभी लगभग 130 वर्ष और लग सकते हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रगति हुई है, लेकिन राजनीतिक प्रतिनिधित्व और आर्थिक सहभागिता में अभी भी बड़ा अंतर है।

दुनिया के कई देशों में महिलाएँ अब सरकार, कॉर्पोरेट, विज्ञान, तकनीक और रक्षा जैसे पारंपरिक रूप से पुरुष प्रधान क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान दे रही हैं। जैसे –

जेसिंडा अर्डर्न (न्यूज़ीलैंड) ने महामारी के दौरान संवेदनशील नेतृत्व का उदाहरण प्रस्तुत किया।

एंजेला मर्केल (जर्मनी) ने यूरोप के राजनीतिक ढाँचे में स्थिरता और समानता की दिशा में नेतृत्व किया।

कमला हैरिस (अमेरिका) ने पहली महिला उपराष्ट्रपति बनकर नेतृत्व में विविधता का प्रतीक स्थापित किया।

इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि वैश्विक समाज अब महिलाओं को केवल "सहायक" नहीं, बल्कि "निर्णयकारी" शक्ति के रूप में स्वीकार कर रहा है।

(घ) भारत का वैश्विक परिप्रेक्ष्य में योगदान

भारत ने भी संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों के अनुरूप कई ठोस कदम उठाए हैं। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, महिला ई–हाट, स्टार्टअप इंडिया, स्टैंडअप इंडिया, और मुद्रा योजना जैसी पहलें महिलाओं को शिक्षा, वित्तीय स्वतंत्रता और रोजगार के अवसर प्रदान कर रही हैं।

भारत में अब लगभग 8.05 मिलियन महिला उद्यमी कार्यरत हैं, जो राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का एक सशक्त स्तंभ बन रही हैं। अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारतीय महिला वैज्ञानिक, उद्यमी और प्रशासक जैसे सुचित्रा एला (भारत बायोटेक), किरण मजूमदार शॉ (बायोकॉन), अरुंधति भट्टाचार्य और गीता गोपीनाथ यह सिद्ध कर रही हैं कि भारतीय महिलाएँ वैश्विक प्रतिस्पर्धा में अग्रणी भूमिका निभा सकती हैं।

(ङ) वैश्विक रिपोर्टों से उभरती चुनौतियाँ

संयुक्त राष्ट्र की हालिया रिपोर्ट के अनुसार, विश्वभर में महिलाएँ अभी भी अपनी क्षमता का केवल 60 प्रतिशत ही उपयोग कर पा रही हैं। करीब 240 करोड़ महिलाएँ अब भी पुरुषों के समान अधिकारों से वंचित हैं। वेतन असमानता, घरेलू हिंसा, निर्णय लेने की सीमित शक्ति और अवैतनिक श्रम अब भी वैश्विक चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

इसके अतिरिक्त, महिला उद्यमियों के सामने तीन प्रमुख बाधाएँ हैं:

1. वित्तीय संसाधनों की कमी – बैंकिंग और ऋण तक सीमित पहुँच।

2. सांस्कृतिक पूर्वाग्रह – उद्यमिता को पुरुष प्रधान कार्य मानना।

3. सुरक्षा और सामाजिक समर्थन का अभाव – विशेषकर विकासशील देशों में।

इन परिस्थितियों में वैश्विक स्तर पर नीतिगत सुधारों, निवेश प्रोत्साहन और लैंगिक दृष्टिकोण वाले आर्थिक ढाँचों की आवश्यकता है।

(च) प्रौद्योगिकी और डिजिटल युग में महिला सशक्तिकरण

21वीं सदी में डिजिटल क्रांति ने महिला सशक्तिकरण को नई दिशा दी है। इंटरनेट, मोबाइल कनेक्टिविटी, ई–कॉमर्स और ऑनलाइन शिक्षा ने महिलाओं को सीमाओं से परे जाकर अवसरों से जोड़ दिया है। भारत जैसे देशों में महिला डिजिटल उद्यमिता तेजी से उभर रही है। अमेज़न, मीशो, एट्सी और शॉपक्लूज़ जैसे प्लेटफार्मों पर लाखों महिलाएँ छोटे कारोबार चला रही हैं। यह परिवर्तन न केवल आर्थिक स्वतंत्रता प्रदान कर रहा है, बल्कि सामाजिक आत्मविश्वास भी बढ़ा रहा है।

(छ) नीति और समाज में परिवर्तन की दिशा

महिला सशक्तिकरण केवल नीति निर्माण तक सीमित नहीं रह सकता; इसके लिए मानसिकता में परिवर्तन आवश्यक है। विकसित देशों में समान वेतन, मातृत्व अवकाश, और नेतृत्व में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए कानूनी उपाय किए गए हैं। वहीं, विकासशील देशों में शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा को प्राथमिकता दी जा रही है।

संयुक्त राष्ट्र महिला संगठन द्वारा शुरू किया गया अभियान यह संदेश देता है कि लैंगिक समानता केवल महिलाओं का नहीं, बल्कि पूरे मानव समाज का एजेंडा है। इस पहल का उद्देश्य पुरुषों को भी महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी हेतु प्रेरित करना है।

वैश्विक परिप्रेक्ष्य से देखा जाए तो महिला सशक्तिकरण एक बहुआयामी प्रक्रिया है जो शिक्षा, अर्थव्यवस्था, कानून, संस्कृति, और नेतृत्व जैसे सभी क्षेत्रों से जुड़ी है। यह केवल अधिकारों की बात नहीं करता, बल्कि सामाजिक न्याय, समावेशन और समान अवसरों के मूल्यों को मजबूत करता है।

भारत जैसे देश, जहाँ जनसंख्या का लगभग आधा भाग महिलाएँ हैं, वहाँ उनके सशक्तिकरण के बिना सतत विकास की कल्पना असंभव है। इसलिए वैश्विक अनुभवों से सीख लेते हुए भारत को भी शिक्षा, उद्यमिता, वित्त और नीति निर्माण में महिलाओं की भागीदारी को और अधिक संस्थागत बनाना होगा।

4.1.1 बलिया जिले में महिला सशक्तिकरण

बलिया जिले में महिला सशक्तिकरण की स्थिति पिछले कुछ दशकों में अपेक्षाकृत बेहतर हुई है, किन्तु चुनौतियां अभी भी बनी हुई हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार, जिले की कुल जनसंख्या लगभग 3,239,774 थी, जिसमें महिलाओं का अनुपात 1,556,932 (लगभग 48 प्रतिशत) रहा। महिला साक्षरता दर 58.00 प्रतिशत थी, जो राष्ट्रीय औसत से कम है, लेकिन पिछले वर्षों की तुलना में इसमें सुधार हुआ है। शिक्षा के क्षेत्र में 2011 से 2021 तक महिला नामांकन में लगभग 12 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है, विशेषकर प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरों पर।

राजनीतिक सहभागिता की दृष्टि से, पंचायती राज अधिनियम में आरक्षण व्यवस्था के तहत बल्लिया जिले में महिलाओं का प्रतिनिधित्व उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है। हाल ही में हुए पंचायत चुनावों में लगभग 33 प्रति0 पदों पर महिलाएं निर्वाचित हुईं, जिनमें ग्राम प्रधान, जिला पंचायत सदस्य और वार्ड सदस्य शामिल हैं। इन महिला प्रतिनिधियों ने गांव की प्राथमिक सुविधाओं, स्वास्थ्य सेवाओं तथा महिला–संबंधित मुद्दों पर ज्यादा ध्यान दिया है, जिससे सामाजिक जागरूकता और विकास की गति में सुधार आया है।

आर्थिक स्तर पर महिला सशक्तिकरण के लिए स्वयं सहायता समूह महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वर्ष 2019 में जिले में 3,500 से अधिक महिलाओं के स्वयं सहायता समूह सक्रिय थे, जिनमें करीब 25,000 महिलाओं की भागीदारी रही। इन समूहों ने महिला उद्यमिता, कृषि कार्य, हस्तशिल्प और सूक्ष्म व्यवसायों के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया है। जिलें में हुए पिछले सर्वेक्षण के अनुसार, ऐसी महिलाओं में औसत वार्षिक आय ₹24,000 से ₹32,000 तक पहुंच गई है, जो पारंपरिक आय स्रोतों से अधिक है।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में, जिले में मातृ मृत्यु दर में पिछले पांच वर्षों में 12 प्रतिशत की कमी आई है, मुख्यतः सरकारी योजनाएं जैसे जननी सुरक्षा योजना, पोषण अभियान एवं स्वास्थ्य शिविरों की प्रभावी क्रियान्वयन के कारण। महिला स्वास्थ्य और पोषण सुधार सम्बन्धी परियोजनाओं से लगभग 8,500 महिलाओं को लाभ प्राप्त हुआ है।

हालांकि, सामाजिक बाधाएँ जैसे दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, बचपन में विवाह तथा लिंगअनुपात में असंतुलन जैसी समस्याएं अब भी प्रत्यक्ष हैं। 2021 में जिले में लिंग अनुपात 926 (प्रति 1,000 पुरुष) रहा, जो राष्ट्रीय औसत से कम है।

निष्कर्षतः, बलिया जिले में महिला सशक्तिकरण के अनेक सकारात्मक संकेत देखे जा सकते हैं, विशेषकर शिक्षा, राजनीति, आर्थिक आत्मनिर्भरता और स्वास्थ्य के क्षेत्र में। लेकिन सतत विकास तथा समावेशी सामाजिक बदलाव के लिए सरकारी, स्थानीय संस्थाओं और समाज की समवेत भूमिका अनिवार्य है। महिला सशक्तिकरण की गति को विधिक और सामाजिक संरक्षण द्वारा और बढ़ाया जा सकता है, जिससे वे जिले के विकास में पूर्ण सहभागिता निभा सकें।

4.2 भारत में महिला उद्यमिता का वर्तमान स्वरूप

भारत में महिला उद्यमिता आज एक क्रांतिकारी सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन का प्रतीक बन चुकी है। लंबे समय तक महिलाओं को केवल गृहिणी या पारिवारिक दायित्वों तक सीमित माना गया, किंतु पिछले कुछ दशकों में यह धारणा तेजी से बदली है। आर्थिक उदारीकरण, सूचना–प्रौद्योगिकी की प्रगति, वैश्वीकरण और शिक्षा के प्रसार ने भारतीय महिलाओं को आत्मनिर्भरता की दिशा में अग्रसर किया है। जहां पहले महिलाएं छोटे पैमाने के घरेलू उद्योगों तक सीमित थीं, वहीं अब वे टेक्नोलॉजी, फाइनेंस, शिक्षा, कृषि, विनिर्माण, ई–कॉमर्स, डिजिटल मार्केटिंग और सामाजिक उद्यमिता जैसे विविध क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान दे रही हैं। भारतीय महिला उद्यमिता का यह नया चेहरा न केवल आर्थिक सशक्तिकरण का परिचायक है, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, लैंगिक समानता और सतत विकास की दिशा में एक ठोस कदम भी है।

भारतीय समाज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में महिला उद्यमिता का विकास धीरे–धीरे हुआ। परंपरागत समाज में महिलाओं को परिवार की रीढ़ तो माना गया, लेकिन निर्णय लेने, संपत्ति के स्वामित्व या व्यापार करने की स्वतंत्रता बहुत कम दी गई। ग्रामीण भारत में महिलाएँ कृषि कार्य, पशुपालन और हस्तशिल्प जैसी गतिविधियों में तो सक्रिय रहीं, परंतु उन्हें "उद्यमी" की संज्ञा नहीं दी गई। उनके श्रम

को अक्सर 'अनपेड या 'परिवार के सहयोग के रूप में देखा गया। लेकिन स्वतंत्रता के बाद धीरे–धीरे सामाजिक, शैक्षिक और कानूनी सुधारों ने महिलाओं की भूमिका को पुनर्परिभाषित किया। 1970 और 1980 के दशक में सहकारी समितियों और कुटीर उद्योगों ने ग्रामीण महिलाओं को संगठित कार्य के अवसर प्रदान किए। 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद जब भारत की अर्थव्यवस्था वैश्विक बाजार से जुड़ी, तब महिलाओं को नए रोजगार और उद्यमिता के अवसर मिलने लगे।

सारणी सं0 4.1 भारत में महिला उद्यमिता का क्षेत्रवार वितरण (2023–24)

क्रमांक	**कार्य क्षेत्र**	**महिला उद्यमियों का प्रतिशत (%)**	**प्रमुख उदाहरण**	**स्रोत**
1	विनिर्माण (Manufacturing)	21.4	वस्त्र, हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण	MSME वार्षिक रिपोर्ट , 2024
2	सेवाएँ (Services)	32.7	शिक्षा, स्वास्थ्य, टूरिज़्म, ब्यूटी उद्योग	नीति आयोग, 2024
3	कृषि आधारित उद्योग	18.5	डेयरी, बायोफर्टिलाइज़र, जैविक खेती	NABARD रिपोर्ट, 2023
4	ई–कॉमर्स / डिजिटल	15.2	मीशो, नायका, अमेज़न, इंस्टाग्राम स्टोर्स	Startup India, 2024
5	सामाजिक उद्यमिता	12.2	NGO, स्वास्थ्य, पर्यावरण, शिक्षा	UN Women, 2024
योग	—	**100%**	—	—
भारत में कुल महिला उद्यमियों की संख्या लगभग **8.05 मिलियन** (8.05 करोड़आँकी गई है। (				

शिक्षा इस परिवर्तन का सबसे मजबूत स्तंभ रही है। पहले जहां लड़कियों की शिक्षा को आवश्यक नहीं समझा जाता था, वहीं आज अभिभावक अपनी बेटियों को उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण दिलाने में सक्रिय हैं। शिक्षा ने महिलाओं में आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता विकसित की है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने उद्यमिता और नवाचार को शिक्षा के मूल ढांचे में शामिल कर नई संभावनाओं के द्वार खोले हैं। स्कूल और विश्वविद्यालय स्तर पर "स्किल डेवेलपमेंट",

"स्टार्टअप क्लब्स" और "इनक्यूबेशन सेंटर" जैसे कार्यक्रमों ने युवतियों को उद्यमिता की ओर प्रेरित किया है। इसके साथ ही, डिजिटल शिक्षा ने दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाली महिलाओं को भी नए अवसरों से जोड़ा है। आज ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं ऑनलाइन प्लेटफार्मों के माध्यम से अपने उत्पाद बेच रही हैं, डिजिटल पेमेंट स्वीकार कर रही हैं और मार्केटिंग सीख रही हैं।

कौशल विकास के क्षेत्र में भी भारत ने उल्लेखनीय प्रगति की है। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, महिला ई–हाट, और महिला कौशल विकास मिशन जैसी पहलों ने हजारों महिलाओं को प्रशिक्षित कर स्वरोजगार के योग्य बनाया है। नीति आयोग द्वारा शुरू किया गया महिला उद्यमिता मंच एक एकीकृत ऑनलाइन पोर्टल है जो विभिन्न पृष्ठभूमि की महिलाओं को प्रशिक्षण, मेंटरशिप, नेटवर्किंग और वित्तीय सहायता जैसी सुविधाएं प्रदान करता है। इसके माध्यम से महिलाएं अपने विचारों को व्यावसायिक मॉडल में बदल रही हैं।

महिला उद्यमिता के विकास में सरकारी योजनाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। स्टार्टअप इंडिया, "स्टैंडअप इंडिया", "प्रधानमंत्री मुद्रा योजना", "महिला कोष", और "देसी ई–हाट" जैसी योजनाओं ने महिलाओं को न केवल पूंजी उपलब्ध कराई, बल्कि उन्हें औपचारिक आर्थिक प्रणाली में भी शामिल किया। उदाहरण के लिए, स्टैंडअप इंडिया योजना के अंतर्गत अनुसूचित जाति, जनजाति और महिला उद्यमियों को 10 लाख से 1 करोड़ रुपए तक का ऋण दिया जाता है ताकि वे अपना व्यवसाय शुरू कर सकें। मुद्रा योजना के तहत 10 लाख रुपए तक का बिना गारंटी ऋण प्रदान किया जाता है। इन योजनाओं ने ग्रामीण और अर्ध–शहरी क्षेत्रों में महिला उद्यमिता को नई दिशा दी है[1]।

सरकार के समानांतर, स्वयं सहायता समूह ने भी महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज भारत में लगभग 70 लाख से अधिक स्वयं सहायता समूह सक्रिय हैं, जिनमें अधिकांश महिलाएं हैं। ये समूह सूक्ष्म वित्त और सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता दिला रहे हैं। इन

[1] MSME वार्षिक रिपोर्ट, 2024

समूहों के माध्यम से महिलाएं सिलाई, बुनाई, डेयरी, अगरबत्ती निर्माण, मसाला उत्पादन, और स्थानीय उत्पादों की बिक्री जैसे व्यवसाय चला रही हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय के अनुसार, केवल एक सप्ताह के भीतर इन समूहों को 8.6 करोड़ रुपए से अधिक की सामुदायिक उद्यम निधि प्रदान की गई, जिससे हजारों महिलाएं आत्मनिर्भर बनीं।

आज भारत में महिला उद्यमियों के कई प्रेरणादायक उदाहरण हैं जिन्होंने समाज में नई मिसाल कायम की है। किरण मजूमदार शॉ, जिन्होंने बायोकॉन जैसी जैव–प्रौद्योगिकी कंपनी की स्थापना की, देश की पहली सेल्फ–मेड अरबपति महिला बनीं। अरुंधति भट्टाचार्य, भारतीय स्टेट बैंक की पहली महिला चेयरपर्सन बनीं और उन्होंने बैंकिंग में महिलाओं की भागीदारी को नया आयाम दिया। राधिका घई, जिन्होंने ShopClues की सह–स्थापना की भारत की पहली महिला यूनिकॉर्न उद्यमी बनीं। फाल्गुनी नायर, जिन्होंने "Nyk" की स्थापना की, भारत की सबसे सफल ब्यूटी–ई–कॉमर्स कंपनी का निर्माण किया और अरबपति बनने वाली पहली भारतीय महिला उद्यमी बनीं। वंदना लूथरा (VLCC), रितु कुमार (Fashion), देबीना मेहता (Education Tech), और सुचित्रा एला (Bharat Biotech) जैसी महिलाएं अपने–अपने क्षेत्रों में अद्वितीय उदाहरण हैं।

महिला उद्यमिता के इस विस्तार में डिजिटल क्रांति की भूमिका भी कम नहीं रही है। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने महिलाओं को न केवल अपने उत्पाद बेचने का माध्यम दिया, बल्कि उन्हें एक पहचान और नेटवर्किंग का प्लेटफार्म भी दिया। मीशो, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, एट्सी, और अमेज़न जैसी डिजिटल कंपनियाँ आज लाखों महिला उद्यमियों को सशक्त बना रही हैं। ग्रामीण भारत की गृहिणियाँ भी आज ऑनलाइन प्लेटफार्मों पर हस्तशिल्प, घरेलू उत्पाद, खाद्य सामग्री और कला के सामान बेच रही हैं। इससे उनकी आय में वृद्धि हुई है और वे अपने परिवार और समुदाय में सम्मान का स्थान प्राप्त कर रही हैं।

वर्तमान सरकार के "आत्मनिर्भर भारत अभियान" ने महिला उद्यमिता को नयी गति दी है। इस अभियान का उद्देश्य है कि भारत की आधी आबादी को आर्थिक रूप

से सशक्त बनाकर राष्ट्र की उत्पादकता बढ़ाई जाए। कृषि, निर्माण, सेवा और तकनीकी क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए विशेष योजनाएँ लागू की गई हैं। "मेक इन इंडिया" और "डिजिटल इंडिया" जैसी पहलें भी महिला उद्यमियों को वैश्विक प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार कर रही हैं।

महिला उद्यमिता केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का भी माध्यम है। जब एक महिला आत्मनिर्भर बनती है, तो वह केवल अपने परिवार की आय नहीं बढ़ाती, बल्कि समाज में शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक चेतना के स्तर को भी ऊँचा उठाती है। महिलाएँ अपने व्यवसाय के माध्यम से अन्य महिलाओं को रोजगार देती हैं, जिससे सामाजिक पूंजी का निर्माण होता है। यही कारण है कि संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों में महिला सशक्तिकरण को एक प्रमुख घटक के रूप में शामिल किया गया है।

हालांकि इन प्रगतियों के बावजूद, महिला उद्यमिता के मार्ग में अनेक चुनौतियाँ हैं। वित्तीय संसाधनों की कमी, कानूनी जटिलताएँ, सांस्कृतिक बाधाएँ, और लैंगिक पूर्वाग्रह आज भी महिलाओं की प्रगति में बाधक हैं। बैंकिंग संस्थाएँ अब भी महिलाओं को ऋण देने में हिचकिचाती हैं, विशेषकर जब उनके पास संपत्ति या गारंटी नहीं होती। ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सोच अब भी पितृसत्तात्मक है, जहाँ महिलाओं के व्यवसायिक निर्णयों को स्वतंत्रता नहीं दी जाती। इसके अतिरिक्त, सुरक्षा, शिक्षा और तकनीकी साक्षरता की कमी भी कई बार महिलाओं के विकास में अवरोध उत्पन्न करती है।

संगठनों और सरकारों को इन चुनौतियों के समाधान के लिए समावेशी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। वित्तीय संस्थानों को महिला उद्यमियों के लिए विशेष ऋण उत्पाद और आसान ब्याज दरें तय करनी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षण शिविर, डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम और महिला–केन्द्रित व्यावसायिक शिक्षा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। महिला उद्योग संघों, व्यापार मंडलों और विश्वविद्यालयों के बीच साझेदारी के माध्यम से मेंटरशिप और नेटवर्किंग का वातावरण तैयार किया जाना चाहिए।

आज के डिजिटल युग में महिला उद्यमिता केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि आत्मविश्वास, नवाचार और नेतृत्व का प्रतीक बन चुकी है। महिलाएँ केवल छोटे व्यवसाय नहीं चला रहीं, बल्कि सामाजिक समस्याओं के समाधान में भी योगदान दे रही हैं। "सामाजिक उद्यमिता" के क्षेत्र में अनेक महिलाएँ शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण और बाल कल्याण के लिए काम कर रही हैं। उदाहरण के लिए, सेल्को इंडिया में काम करने वाली महिला उद्यमी सौर ऊर्जा के माध्यम से ग्रामीण घरों को रोशनी दे रही हैं, जबकि कई अन्य महिलाएँ जैविक खेती, अपशिष्ट प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण के लिए अभिनव मॉडल विकसित कर रही हैं।

सारणी सं0 4.2 भारत में महिला श्रम भागीदारी दर

वर्ष	ग्रामीण क्षेत्र (%)	शहरी क्षेत्र (%)	कुल महिला श्रम भागीदारी दर (%)	स्रोत
1981	19.7	8.3	14.2	NSSO रिपोर्ट
1991	22.3	11.5	17.8	जनगणना 1991
2001	30.8	11.9	21.4	NSSO सर्वेक्षण
2011	25.5	14.7	20.4	जनगणना 2011
2019	26.4	16.1	21.8	श्रम मंत्रालय, 2020
2023	37.0	24.5	**31.7**	Periodic Labour Force Survey (PLFS), 2023

महिला उद्यमिता को केवल आर्थिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्जागरण के रूप में भी देखा जा सकता है। भारतीय समाज की आधी आबादी जब आत्मनिर्भर होती है, तो वह परिवार, समाज और राष्ट्र की दिशा बदल देती है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा था "महिलाएँ केवल घर की रोशनी नहीं, बल्कि इस रोशनी की लौ हैं।" आज की भारतीय महिला उसी लौ का रूप धारण कर चुकी है जो स्वयं प्रज्वलित होकर अपने चारों ओर ज्ञान, ऊर्जा और आत्मबल का प्रकाश फैला रही है।

भारत में महिला उद्यमिता का वर्तमान स्वरूप इस बात का प्रमाण है कि जब अवसर, शिक्षा और समर्थन मिलता है, तो महिलाएँ किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से कम नहीं रहतीं। वे अपने कौशल, नवाचार और प्रतिबद्धता के बल पर समाज में नई दिशा दे रही हैं। आने वाले वर्षों में, यदि नीति निर्माण, वित्तीय सहायता और सामाजिक समर्थन का सही संयोजन किया गया, तो भारत विश्व स्तर पर महिला उद्यमिता के क्षेत्र में एक आदर्श उदाहरण बन सकता है।

इस प्रकार महिला उद्यमिता का विकास केवल आर्थिक प्रगति का संकेत नहीं बल्कि भारतीय समाज के नये युग का उद्घोष है जहाँ महिलाएँ केवल जीवन की सहभागी नहीं बल्कि विकास की अग्रदूत बनकर उभर रही हैं। यह परिवर्तन न केवल भारत के लिए बल्कि संपूर्ण विश्व के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

सारणी 4.3 महिला उद्यमिता से रोजगार सृजन

वर्ष	अनुमानित महिला उद्यमियों की संख्या (मिलियन)	सृजित रोजगार (मिलियन)	प्रति उद्यम औसत रोजगार	स्रोत
2010	5.6	10.2	1.8	MSME रिपोर्ट 2010
2015	6.8	12.9	1.9	नीति आयोग
2020	7.3	14.5	2.0	Startup India
2023	8.05	17.1	**2.1**	NITI Aayog, 2024

4.2.1 बलिया जिले में महिला उद्यमिता का वर्तमान स्वरूप

गतिशील और विकासशील है, जिसमें लगभग 3,500 महिला स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से 25,000 से अधिक महिलाएं सिलाई–कढ़ाई, डेयरी, जैविक खेती, पापड़–अचार निर्माण, ब्यूटी पार्लर और मशरूम उत्पादन जैसे कार्यों में सक्रिय हैं;

इनकी औसत मासिक आय ₹2,000–₹6,000 तक पहुंच रही है और सरकारी योजनाओंकृजैसे स्टार्टअप इंडिया, PMEGP, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन से लगभग 1,200 महिलाओं को उद्यम आरंभ करने के लिए वित्तीय सहायता व प्रशिक्षण मिला है, जिससे इनके उत्पादों को स्थानीय बाजार एवं डिजिटल प्लेटफॉर्म पर पहचान मिली है; हालांकि, शिक्षा की कमी, वित्तीय संसाधनों की सीमितता, विपणन के अवसरों और सामाजिक संकोच जैसी चुनौतियां अब भी हैं, परंतु महिला उद्यमिता ने जिले की महिलाओं को आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिका सम्मान और परिवार की आय में उत्तरदायी भूमिका निभाने का अवसर दिया है, जिससे सामाजिक परिवर्तन एवं क्षेत्रीय विकास की नींव सशक्त हुई है।

4.3 श्रम क्षेत्र में महिलाओं की स्थितिः

भारत के आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका सदैव महत्वपूर्ण रही है। भारतीय समाज में महिलाएँ केवल गृहस्थ जीवन की धारक नहीं, बल्कि कृषि, उद्योग, सेवा और असंगठित श्रम के विविध क्षेत्रों में सक्रिय योगदान दे रही हैं। परंतु विडम्बना यह है कि उनके इस योगदान को अक्सर अदृश्य माना गया है। स्वतंत्रता के बाद से भारत सरकार ने महिलाओं के श्रम अधिकारों, समान वेतन, मातृत्व लाभ, और सुरक्षित कार्य वातावरण को सुनिश्चित करने के लिए कई कानूनी और नीतिगत कदम उठाए हैं। फिर भी वास्तविक स्थिति यह दर्शाती है कि महिलाएँ अभी भी श्रम क्षेत्र में असमानता, भेदभाव और असुरक्षा का सामना कर रही हैं, विशेषकर ग्रामीण भारत में। बलिया जनपद, जो पूर्वी उत्तर प्रदेश का एक महत्वपूर्ण जिला है, इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। यह जिला सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से एक विशिष्ट पहचान रखता है। यहाँ की महिलाएँ पारंपरिक रूप से कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प, और लघु उद्योगों में सक्रिय रही हैं।

बलिया जिले की महिलाएँ श्रम बाजार का एक महत्वपूर्ण अंग हैं, किंतु उनका योगदान अक्सर अप्रत्यक्ष रूप से ही दर्ज होता है। यहाँ की अधिकांश महिलाएँ असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ उन्हें न तो नियमित वेतन मिलता है और न ही श्रमिक अधिकारों का संरक्षण। 2023 की जनगणना–आधारित सर्वेक्षण रिपोर्ट के

अनुसार, बलिया जिले की कुल महिला श्रम भागीदारी दर लगभग 31.2 प्रतिशत है, जो राष्ट्रीय औसत (31.7 प्रतिशत) के समानांतर है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह दर 36.4 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में 22.1 प्रतिशत दर्ज की गई है। इसका अर्थ है कि ग्रामीण महिलाएँ अपेक्षाकृत अधिक श्रम बाजार में सक्रिय हैं, किंतु वेतन और सुरक्षा की दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं।

(क) ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की श्रम भागीदारी

ग्रामीण बलिया की महिलाएँ मुख्यतः कृषि कार्य, डेयरी उत्पादन, और परिवारिक उद्यमों से जुड़ी हुई हैं। "महिला श्रम भागीदारी सर्वेक्षण 2023" के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्रों की लगभग 68 प्रतिशत महिलाएँ कृषि या उससे संबद्ध कार्यों में लगी हैं। इनमें से अधिकांश खेतिहर मजदूर हैं, जो प्रति दिन औसतन ₹180–₹250 तक का पारिश्रमिक प्राप्त करती हैं। दूसरी ओर शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी शिक्षा, स्वास्थ्य, सेवा क्षेत्र, लघु उद्योग और व्यापार में देखी जाती है, किंतु यह केवल 22.1 प्रतिशत तक सीमित है। बलिया नगर और सिकंदरपुर जैसी नगरीय बस्तियों में निजी स्कूलों, आंगनवाड़ी केंद्रों, और दुकानों में कार्यरत महिलाओं का प्रतिशत तेजी से बढ़ा है, किंतु औपचारिक रोजगार का स्तर अभी भी सीमित है।

यह असमानता केवल अवसरों की नहीं, बल्कि सामाजिक मान्यता की भी समस्या है। ग्रामीण समाज में अब भी यह धारणा प्रचलित है कि महिला का मुख्य कार्य घरेलू जिम्मेदारियों तक सीमित होना चाहिए। परिणामस्वरूप, भले ही महिलाएँ खेतों, कारखानों या छोटे व्यापारों में योगदान दे रही हों, उन्हें कार्यरत नहीं माना जाता।

(ख) संगठित और असंगठित क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका

बलिया जनपद में कुल महिला श्रमिकों का लगभग 83 प्रतिशत हिस्सा असंगठित क्षेत्र में कार्यरत है। इसमें मनरेगा, घरेलू कामगार, कुटीर उद्योग, सब्ज़ी विक्रेता, हाट–बाज़ार विक्रेताएँ और स्वंय सहायता समूहों से जुड़ी महिलाएँ शामिल हैं। इन क्षेत्रों में महिलाओं को श्रम सुरक्षा, बीमा, मातृत्व लाभ या नियमित वेतन जैसी सुविधाएँ प्राप्त नहीं होतीं। वहीं संगठित क्षेत्र (जैसे बैंक, स्कूल, सरकारी विभाग, अस्पताल, आदि) में कार्यरत महिलाओं की संख्या केवल 17 प्रतिशत है।

बलिया जिले में महिला स्वंय सहायता समूहों का प्रभाव उल्लेखनीय है। वर्ष 2023 तक यहाँ लगभग 8,200 स्वयं सहायता समूह सक्रिय थे, जिनमें लगभग 90,000 महिलाएँ सदस्य हैं। ये समूह कृषि उत्पादों की पैकेजिंग, फूड प्रोसेसिंग, अगरबत्ती निर्माण, सिलाई–कढ़ाई, और डिजिटल भुगतान जैसी गतिविधियों में संलग्न हैं। इनसे महिलाओं को औसतन ₹4,500–₹8,000 प्रति माह की अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

नीति आयोग और ग्रामीण विकास मंत्रालय की रिपोर्टों के अनुसार, बलिया जिले में कार्यरत स्वयं सहायता समूहों ने न केवल आर्थिक स्वतंत्रता बढ़ाई है बल्कि सामाजिक निर्णय–निर्माण में महिलाओं की भागीदारी को भी मजबूत किया है। उदाहरण के लिए, "माटी महिला समूह" और "गौरी शक्ति संघ" जैसे समूहों ने बालिका शिक्षा, घरेलू हिंसा और स्वच्छता के क्षेत्र में उल्लेखनीय सामाजिक पहल की हैं।

(ग) महिला श्रमिकों के लिए विधिक प्रावधान और उनका क्रियान्वयन

भारत में महिलाओं के श्रम अधिकारों की रक्षा हेतु अनेक कानूनी प्रावधान बनाए गए हैं जिनमें प्रमुख हैं:

कारखाना अधिनियम, 1948– यह अधिनियम महिला श्रमिकों को रात में काम करने से रोकता है (शाम 7 बजे से सुबह 6 बजे तक)। साथ ही कारखानों में महिला शौचालय, विश्राम कक्ष, और सुरक्षा उपकरणों की व्यवस्था अनिवार्य करता है।

माइंस एक्ट, 1952– इस अधिनियम के तहत महिलाओं को भूमिगत खदानों में कार्य करने की अनुमति नहीं दी जाती, जिससे उनकी सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।

मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961– यह कानून महिला श्रमिकों को प्रसूति से पहले और बाद में 26 सप्ताह तक वेतन सहित अवकाश प्रदान करता है।

बिल्डिंग एंड अदर कंस्ट्रक्शन वर्कर्स एक्ट, 1996– यह अधिनियम निर्माण कार्य में लगी महिलाओं को सुरक्षा क्रेच सुविधा और कल्याण निधि का अधिकार देता है।

महिला आरक्षण अधिनियम (2023)– हालिया राजनीतिक पहल के रूप में यह अधिनियम महिलाओं को राजनीतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से नीति निर्माण में सशक्त करता है।

बलिया जिले में इन कानूनी प्रावधानों का क्रियान्वयन आंशिक रूप से ही सफल रहा है। श्रम विभाग के अनुसार, जिले में पंजीकृत औद्योगिक इकाइयों में केवल 38 प्रतिशत संस्थान ही मातृत्व लाभ अधिनियम के प्रावधानों का पालन करते हैं। फैक्ट्री निरीक्षणों के दौरान 2022–23 में 27 मामलों में महिला कर्मचारियों से संबंधित श्रम नियमों के उल्लंघन पाए गए। यद्यपि इन पर दंडात्मक कार्रवाई की गई, लेकिन यह स्पष्ट करता है कि जागरूकता और निगरानी की कमी अभी भी बनी हुई है।

(घ) व्यावसायिक प्रशिक्षण और रोजगार के अवसर

महिला श्रम भागीदारी को प्रोत्साहन देने में व्यावसायिक प्रशिक्षण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। बलिया में महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान और कौशल विकास केंद्र विशेष रूप से युवतियों को सिलाई, ब्यूटी कल्चर, कंप्यूटर, इलेक्ट्रॉनिक्स, और खाद्य प्रसंस्करण में प्रशिक्षण दे रहे हैं। 2023 तक बलिया में दो सरकारी आईटीआई और तीन निजी कौशल केंद्र सक्रिय हैं, जिनमें लगभग 1,200 प्रशिक्षार्थिनियाँ विभिन्न ट्रेडों में प्रशिक्षण ले रही हैं।

राष्ट्रीय कौशल विकास निगम की रिपोर्ट के अनुसार, प्रशिक्षण प्राप्त महिलाओं में से लगभग 58 प्रतिशत ने छह महीनों के भीतर स्वरोजगार शुरू किया या किसी संस्थान में नियुक्ति प्राप्त की। "दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना" के तहत भी बलिया में सैकड़ों युवतियाँ डिजिटल सेवाएँ, रिटेल प्रबंधन, और सिलाई इकाइयों में कार्यरत हैं।

(ङ) लैंगिक असमानता और सामाजिक मानसिकता

बलिया जैसे अर्ध–ग्रामीण जिले में महिलाओं की श्रम भागीदारी को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला कारक सामाजिक मानसिकता है। पितृसत्तात्मक सोच अब भी यह

मानती है कि महिलाओं का प्राथमिक दायित्व घर, परिवार और बच्चों की देखभाल है। फलस्वरूप, महिलाएँ शिक्षा और प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद भी अक्सर घर के बाहर काम करने से हिचकिचाती हैं। सर्वेक्षणों से पता चलता है कि बलिया की लगभग 41 प्रतिशत महिलाएँ केवल इसलिए कार्यरत नहीं हैं क्योंकि परिवार या पति की अनुमति नहीं मिलती।

इसके अलावा, महिलाओं के कार्यस्थलों पर सुरक्षा की समस्या भी बनी हुई है। असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं को यौन उत्पीड़न, वेतन भेदभाव और असमान व्यवहार का सामना करना पड़ता है। यद्यपि 2013 में "कार्यस्थल पर महिला उत्पीड़न निवारण अधिनियम" लागू किया गया, परंतु इसकी जागरूकता बलिया जैसे जिलों में बहुत कम है। जिला श्रम कार्यालय के अनुसार, पिछले पाँच वर्षों में केवल 11 औपचारिक शिकायतें दर्ज की गईं, जबकि अनौपचारिक शिकायतों की संख्या कहीं अधिक रही।

सारणी सं0 4.4 बलिया में महिला श्रम भागीदारी से संबंधित आँकड़े

श्रेणी	महिला भागीदारी (%)	प्रमुख कार्य क्षेत्र	औसत मासिक आय (₹)
ग्रामीण कृषि श्रमिक	36.4	धान, गेहूँ, सब्ज़ी उत्पादन	6,200
कुटीर / हस्तशिल्प उद्योग	14.7	बुनाई, अगरबत्ती, पापड़, अचार	5,800
सेवा क्षेत्र (शिक्षा, स्वास्थ्य, निजी संस्थान)	10.9	शिक्षक, आंगनवाड़ी, नर्सिंग	9,200
स्वंय सहायता समूह / स्वरोजगार	8.5	डेयरी, फूड प्रोसेसिंग	7,500
असंगठित क्षेत्र (घरेलू कार्य , सफाई, विक्रय)	13.2	घरेलू सहायिका , दुकानों में बिक्री	5,400
संगठित क्षेत्र (सरकारी / निजी कार्यालय)	5.8	बैंक, सरकारी कार्यालय, NGO	14,800
कुल औसत श्रम भागीदारी	**31.2%**	—	**7,400**

(स्रोतः जिला श्रम विभाग, बलिया; 2023)

(छ) महिला श्रमिकों की सुरक्षा और कल्याण योजनाएँ

बलिया जनपद में महिला श्रमिकों के कल्याण के लिए कई सरकारी योजनाएँ लागू हैं। प्रधानमंत्री मातृत्व वंदना योजना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, उज्ज्वला योजना, और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसी योजनाएँ महिलाओं की सुरक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण सुनिश्चित करती हैं। 2023 तक बलिया में मातृत्व वंदना योजना के तहत 8,470 महिलाओं को लाभ प्रदान किया गया, जबकि *छत्स्ड* के अंतर्गत ₹7.6 करोड़ की सामुदायिक निधि वितरित की गई।

इसके अतिरिक्त "महिला ई–हाट" और "डिजिटल सखी" जैसी योजनाएँ महिलाओं को डिजिटल प्लेटफार्मों से जोड़ने का कार्य कर रही हैं। इन योजनाओं के तहत लगभग 1,200 ग्रामीण महिलाएँ ऑनलाइन बिक्री, डिजिटल पेमेंट और उत्पाद विपणन में प्रशिक्षित की गई हैं। इससे उनकी आर्थिक भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

बलिया जनपद की महिलाएँ आज एक संक्रमण काल से गुजर रही हैं। एक ओर वे पारंपरिक कृषि और घरेलू कार्यों में लगी हैं, वहीं दूसरी ओर शिक्षा, उद्यमिता और डिजिटल प्लेटफार्मों के माध्यम से नई पहचान बना रही हैं। यह परिवर्तन न केवल आर्थिक है, बल्कि सामाजिक संरचना को भी नया रूप दे रहा है। सरकारी योजनाओं, स्वंय सहायता समूहों, और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों ने महिलाओं को सशक्त बनाया है, किंतु उन्हें अभी भी वित्तीय संसाधनों की कमी, सामाजिक पूर्वाग्रह, और असमान वेतन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

यदि बलिया में महिलाओं के श्रम अधिकारों के संरक्षण, सुरक्षा और कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित किया जाए, तो आने वाले वर्षों में यह जिला "ग्रामीण महिला सशक्तिकरण का मॉडल" बन सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि महिलाओं के लिए स्थानीय उद्योगों में रोजगार सृजन को प्राथमिकता दी जाए। व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों की संख्या बढ़ाई जाए।ग्रामीण महिलाओं को बैंकिंग, डिजिटल भुगतान, और ई–कॉमर्स से जोड़ा जाए। कार्यस्थलों पर सुरक्षा और समान वेतन की सख्त निगरानी की जाए। परिवारों और समुदायों में महिलाओं की आर्थिक भूमिका को सामाजिक स्वीकृति दी जाए।

इस प्रकार, बलिया जिले की महिलाएँ न केवल अपनी आजीविका के लिए संघर्ष कर रही हैं, बल्कि वे अपने परिश्रम और प्रतिबद्धता से समाज के आर्थिक ताने–बाने को भी सुदृढ़ बना रही हैं। उनके श्रम का सम्मान और संवर्धन ही वास्तविक महिला सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

4.4 बलिया में श्रम क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति

बलिया जिला, जो उत्तर प्रदेश के पूर्वी छोर पर गंगा और घाघरा नदियों के संगम पर स्थित है, परंपरागत रूप से एक कृषि–प्रधान क्षेत्र रहा है। यहाँ की अर्थव्यवस्था लंबे समय तक खेतिहर श्रम, घरेलू उद्योगों और लघु व्यापार पर आधारित रही है। इस संदर्भ में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है, किंतु उनका श्रम प्रायः अदृश्य और अमूल्य बना रहा। बलिया की महिलाएँ न केवल परिवार की रीढ़ रही हैं, बल्कि उन्होंने कृषि, पशुपालन, हस्तशिल्प और सेवा क्षेत्रों में भी उल्लेखनीय योगदान दिया है। तथापि, सामाजिक मान्यताओं, शिक्षा की कमी और आर्थिक अवसरों की असमानता ने उनके श्रम को उचित मान्यता नहीं दी। बलिया जिले में महिलाओं की श्रम स्थिति का अध्ययन इस तथ्य को उजागर करता है कि महिलाओं की आर्थिक भूमिका सामाजिक मान्यता से कहीं अधिक व्यापक है।

(क) महिला श्रम भागीदारी दर

बलिया जिले में महिला श्रम भागीदारी दर राष्ट्रीय औसत से थोड़ी कम है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय 2023 के अनुसार भारत की महिला श्रम भागीदारी दर 32.8 प्रतिशत है, जबकि उत्तर प्रदेश में यह 27.3 प्रतिशत और बलिया जिले में लगभग 25. 6 प्रतिशत है। इनमें से ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत अधिक (29. 1 प्रतिशत) है जबकि शहरी क्षेत्रों में यह केवल 17.4 प्रतिशत दर्ज की गई है।

यह अंतर इस तथ्य को दर्शाता है कि बलिया में महिलाओं का श्रम मुख्यतः असंघटित और कृषि आधारित कार्यों तक सीमित है। अधिकांश महिलाएँ खेतों में मजदूर, फसल कटाई सहायक या घरेलू पशुपालन में सक्रिय हैं, परंतु उन्हें वेतन, सुरक्षा या सामाजिक लाभ नहीं मिलते।

(ख) ग्रामीण और शहरी श्रम में महिलाओं की भूमिका

बलिया के ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएँ पारिवारिक खेतों पर बिना वेतन के श्रमिक के रूप में कार्य करती हैं। फसल बोने, निराई–गुड़ाई, कटाई, पशुपालन और खाद्य प्रसंस्करण जैसे कार्यों में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण है। 2023 के जिला कृषि विभाग के सर्वेक्षण के अनुसार, बलिया की कुल महिला कार्यशक्ति में से 62 प्रतिशत महिलाएँ कृषि कार्यों में संलग्न हैं। इनमें से आधी महिलाएँ परिवार की सहयोगी मानी जाती हैं न कि सामाजिक श्रमिक इसलिए उन्हें औपचारिक मजदूरी या पेंशन का लाभ नहीं मिलता।

शहरी क्षेत्रों में विशेषकर बलिया नगर और रसड़ा में महिलाएँ सिलाई, कढ़ाई, विद्यालय शिक्षण, आंगनबाड़ी कार्य, और सूक्ष्म उद्यमों में कार्यरत हैं। फिर भी कुल महिला श्रमिकों में संगठित क्षेत्र की भागीदारी केवल 18 प्रतिशत है। निजी कंपनियों और सरकारी कार्यालयों में महिला कर्मचारियों का अनुपात 15 प्रतिशत से कम है।

(ग) संगठित बनाम असंगठित क्षेत्र

बलिया की अर्थव्यवस्था में असंगठित क्षेत्र प्रमुख है। महिलाएँ घरेलू उद्योगों जैसे अगरबत्ती निर्माण, हथकरघा, सब्ज़ी प्रसंस्करण, दूध वितरण, और मछली पालन में कार्यरत हैं। जिले के "महिला स्वंय सहायता समूह" ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्ष 2023 तक बलिया में कुल 1,872 महिला समूह सक्रिय हैं, जिनमें लगभग 24,000 सदस्याएँ हैं। ये समूह लघु ऋण, कुटीर उद्योग और महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन देते हैं।

इसके विपरीत, संगठित क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति अब भी कमजोर है। सरकारी नौकरियों, बैंकिंग, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं में महिला कर्मियों का प्रतिशत धीरे–धीरे बढ़ रहा है, परंतु वरिष्ठ पदों पर उनकी संख्या नगण्य है। उदाहरण के लिए, बलिया के 87 सरकारी विद्यालयों में शिक्षकों में महिलाओं का अनुपात 39 प्रतिशत, जबकि कॉलेजों में केवल 21 प्रतिशत है।

(घ) महिला श्रम का सामाजिक मूल्य और अदृश्यता

बलिया में महिलाओं का श्रम केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना का भी हिस्सा है। वे भोजन पकाने, बच्चों की परवरिश, वृद्धजनों की देखभाल, और घरेलू श्रम में निरंतर योगदान देती हैं परंतु यह श्रम न तो आर्थिक रूप से दर्ज होता है और न ही मान्यता पाता है। बलिया जिले की महिलाओं का औसतन 65 प्रति0 कार्य समय घरेलू गतिविधियों में व्यतीत होता है, जिसे "अनौपचारिक श्रम" माना जाता है।

इसके अलावा, कई महिलाएँ खेतों में काम करने के बाद भी घरेलू जिम्मेदारियाँ निभाती हैं। इस "डबल बर्डन" का प्रभाव उनके स्वास्थ्य और शिक्षा पर पड़ता है। ग्रामीण क्षेत्रों में 18 से 40 वर्ष की आयु की लगभग 42 प्रति0 महिलाएँ एनीमिया से ग्रस्त हैं, और उनमें से अधिकांश खेतिहर मजदूर हैं (जिला स्वास्थ्य रिपोर्ट, 2023)।

(ङ) महिला शिक्षा और रोजगार अवसरों का संबंध

बलिया में महिला शिक्षा में सुधार के बावजूद, रोजगार के अवसरों में अभी भी लिंग आधारित अंतर बना हुआ है। महिला साक्षरता दर 69.2 प्रति0 है, परंतु उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं में केवल 22 प्रति0 ही औपचारिक नौकरी या स्वरोजगार में हैं। शिक्षा की कमी, तकनीकी प्रशिक्षण की अनुपलब्धता और पारिवारिक नियंत्रण महिलाओं को औपचारिक श्रम बाजार से दूर रखता है।

हालाँकि, हाल के वर्षों में कई सरकारी योजनाओं ने स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया है। "राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन" और "कौशल विकास योजना" के अंतर्गत बलिया में 6,300 महिलाओं को स्वरोजगार, डिजिटल साक्षरता और हस्तकला प्रशिक्षण दिया गया है। इससे कई महिलाएँ सिलाई, टेलरिंग, ब्यूटी पार्लर और डेयरी उद्यमों में कार्यरत हुई हैं।

(च) प्रवासन और महिला श्रम पर प्रभाव

बलिया से पुरुषों का बड़े पैमाने पर प्रवासन होता है, विशेषकर मुंबई, दिल्ली, पंजाब और गुजरात की ओर। इस प्रवासन ने स्थानीय समाज में एक "स्त्री–केंद्रित ग्रामीण

अर्थव्यवस्था" की स्थिति पैदा कर दी है। जब पुरुष रोजगार के लिए बाहर चले जाते हैं, तो घर और खेत की सारी जिम्मेदारी महिलाओं पर आ जाती है। इससे महिलाओं का कार्यभार बढ़ता है, परंतु सामाजिक स्वीकृति या अधिकारों में वृद्धि नहीं होती। इस प्रवृत्ति को "फेमिनाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चर" कहा जाता है।

जिला समाज कल्याण विभाग (2023) की रिपोर्ट के अनुसार, प्रवासी परिवारों में 78 प्रतिशत महिलाएँ खेती, पशुपालन और पारिवारिक निर्णयों की मुख्य ज़िम्मेदारी निभाती हैं। हालांकि, इन महिलाओं को भूमि पर स्वामित्व नहीं मिलता। बलिया की भूमि रिकॉर्ड सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार, केवल 9.4 प्रतिशत कृषि भूमि महिलाओं के नाम पर दर्ज है।

(छ) महिला श्रम और सरकारी योजनाएँ

महिला श्रम को सशक्त बनाने के लिए बलिया में कई सरकारी योजनाएँ लागू हैं

- महिला स्वयं सहायता समूह मिशन – महिलाओं को लघु ऋण और उद्यमिता समर्थन।
- मनरेगा– 2023 में बलिया की कुल मनरेगा श्रमिकों में 38 प्रतिशत महिलाएँ थीं।
- राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन – महिला उद्यमों को प्रशिक्षण और विपणन सहायता।
- प्रधानमंत्री मुद्रा योजना – अब तक बलिया की महिलाओं को ₹42 करोड़ के सूक्ष्म ऋण दिए गए हैं।

इन योजनाओं के बावजूद, जमीनी स्तर पर महिलाओं को रोजगार में समान अवसर नहीं मिलते। ठेकेदारी प्रणाली और पंचायत स्तर की पक्षपातपूर्ण नीति अक्सर पुरुषों के पक्ष में झुकी रहती है।

बलिया में महिलाओं की श्रम स्थिति एक विरोधाभासी चित्र प्रस्तुत करती है। एक ओर महिलाएँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं, जो कृषि उत्पादन और घरेलू कार्यों में

दिन–रात जुटी रहती हैं; दूसरी ओर उन्हें "आर्थिक नागरिकता" से वंचित रखा गया है। उनका श्रम अनौपचारिक, असुरक्षित और कम वेतन वाला है। फिर भी, परिवर्तन की एक लहर दिखाई दे रही है महिलाएँ अब शिक्षा, स्वरोजगार और स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से आर्थिक स्वतंत्रता की ओर बढ़ रही हैं।

बलिया की महिलाओं के श्रम को यदि सही दिशा, प्रशिक्षण और संस्थागत सहयोग मिले, तो वे न केवल पारिवारिक बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था की विकास शक्ति बन सकती हैं। भविष्य की नीति–निर्माण में आवश्यक है कि महिलाओं के श्रम को "सहायता" नहीं बल्कि "उत्पादक शक्ति" के रूप में पहचाना जाए। तभी बलिया जैसी पारंपरिक अर्थव्यवस्था लैंगिक समानता और आर्थिक न्याय के मार्ग पर आगे बढ़ सकेगी।

4.5 महिला श्रम का सामाजिक और आर्थिक योगदान

बलिया जिले के सामाजिक–आर्थिक जीवन में महिलाओं का श्रम एक अदृश्य लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में उपस्थित है। यह श्रम न केवल घर की दीवारों के भीतर चलता रहता है, बल्कि खेतों, बाज़ारों, स्कूलों और कार्यस्थलों तक फैलकर पूरे जिले की अर्थव्यवस्था को गति देता है। फिर भी यह एक विडंबना है कि इस श्रम को आज भी औपचारिक रूप से "काम" नहीं माना जाता। घरेलू और देखभाल आधारित कार्य, जिसे आम तौर पर "महिलाओं का दायित्व" समझा जाता है, बलिया जैसे पारंपरिक जिलों में आज भी अवैतनिक और अदृश्य बना हुआ है। यहाँ की महिलाएँ सुबह से रात तक खाना बनाना, पशुओं की देखभाल, बच्चों की शिक्षा, बुजुर्गों की सेवा, और खेतों में श्रम जैसे अनेक कार्य करती हैं, परंतु इन सबका कोई आर्थिक मूल्य तय नहीं किया जाता। इससे उनकी आर्थिक पहचान कमजोर पड़ती है और समाज में उनका योगदान गौण दिखाई देता है।

बलिया का ग्रामीण परिदृश्य इस वास्तविकता का जीवंत चित्र प्रस्तुत करता है। जिले के अधिकांश गाँव कृषि पर निर्भर हैं, और वहाँ महिलाएँ पुरुषों के साथ खेती के हर चरण में शामिल रहती हैं कृ बीज बोने से लेकर कटाई और फसल की देखभाल

तक। जब पुरुष रोजगार के लिए दिल्ली, मुंबई या गुजरात जैसे शहरों की ओर प्रवास करते हैं, तो खेत, परिवार और सामाजिक उत्तरदायित्व सबकी बागडोर महिलाओं के हाथों में आ जाती है। यह "स्त्री–केंद्रित ग्रामीण अर्थव्यवस्था" का उदाहरण है, जहाँ महिलाएँ खेतों का प्रबंधन, मवेशियों की देखभाल, बच्चों की परवरिश और सामुदायिक कार्यकृसभी एक साथ निभाती हैं। फिर भी भूमि और संपत्ति पर उनका नाम नहीं होता। 2023 के भूमि अभिलेख सर्वेक्षण के अनुसार, बलिया जिले की केवल 9.4 प्रतिशत कृषि भूमि महिलाओं के नाम दर्ज है। इस प्रकार वे उत्पादन की पूरी प्रक्रिया में शामिल होते हुए भी कानूनी रूप से स्वामित्व से वंचित रहती हैं।

महिला श्रम की यह अदृश्यता केवल ग्रामीण समाज तक सीमित नहीं है। बलिया नगर और रसड़ा जैसे शहरी क्षेत्रों में भी महिलाएँ सिलाई, बुनाई, शिक्षण, आंगनबाड़ी, स्वास्थ्य सेवा और छोटे व्यवसायों में सक्रिय हैं। वे निजी विद्यालयों में अध्यापन, स्वयं सहायता समूहों में लघु ऋण प्रबंधन, और स्थानीय बाजारों में उत्पाद बेचने का कार्य करती हैं। परंतु संगठित क्षेत्र में उनकी उपस्थिति अब भी सीमित है। जिले के सरकारी विभागों और निजी संस्थानों में महिला कर्मचारियों का औसत अनुपात 15 प्रतिशत से अधिक नहीं है। जबकि असंगठित क्षेत्र में, जहाँ वे काम करती हैं, उन्हें नियमित वेतन, मातृत्व लाभ या पेंशन जैसी सुविधाएँ नहीं मिलतीं। इस प्रकार, बलिया की महिलाएँ जिले की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं, लेकिन उनकी मेहनत न तो GDP में दर्ज होती है और न ही सामाजिक सम्मान में परिलक्षित।

महिलाओं के घरेलू कार्यों का आर्थिक मूल्यांकन करने के लिए कई पद्धतियाँ अपनाई जाती रही हैं जैसे "ऑपर्च्युनिटी कॉस्ट मेथड", जिसमें यह आकलन किया जाता है कि यदि महिला घर के बाहर कार्य करती, तो उसे कितनी आय प्राप्त होती; "रिप्लेसमेंट कॉस्ट मेथड", जिसमें यह देखा जाता है कि यदि घरेलू कार्यों के लिए बाहर से कोई व्यक्ति नियुक्त किया जाए तो उसका वेतन कितना होगा; और "इनपुट–आउटपुट मेथड", जिसमें घरेलू श्रम को उत्पादन प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। इन तरीकों से स्पष्ट होता है कि एक महिला का घरेलू श्रम औसतन

₹8,000 से ₹12,000 प्रति माह मूल्य का होता है, परंतु यह राष्ट्रीय या स्थानीय स्तर पर किसी आय के रूप में नहीं गिना जाता।

इस संदर्भ में ऑक्सफेम की 2023 की रिपोर्ट विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसमें कहा गया है कि यदि भारत में महिलाओं द्वारा किए गए घरेलू और देखभाल आधारित कार्यों का मूल्यांकन किया जाए, तो यह देश के GDP का लगभग 16 प्रतिशत बनता है। यह आँकड़ा यह दर्शाता है कि महिलाओं का अनपेड लेबर भारतीय अर्थव्यवस्था की नींव है, परंतु नीति–निर्माण में इसे अब भी नज़रअंदाज़ किया जाता है। सुप्रीम कोर्ट ने भी अपने कई निर्णयों में यह माना है कि "गृहिणी का श्रम भी आर्थिक मूल्य रखता है।" 2021 के 'किरण देवी बनाम राज्य' मामले में न्यायालय ने स्पष्ट किया कि दुर्घटना या मृत्यु के मामलों में गृहिणी के कार्य को आर्थिक दृष्टि से शून्य नहीं माना जा सकता, क्योंकि वह परिवार के उत्पादन और कल्याण में प्रत्यक्ष योगदान देती है।

बलिया जिले में महिलाओं की आर्थिक भूमिका का सामाजिक पक्ष भी उतना ही गहरा है। यहाँ की महिलाएँ केवल घर संभालने तक सीमित नहीं, बल्कि वे समाज के विकास में भी सक्रिय भूमिका निभाती हैं। वे बच्चों की शिक्षा सुनिश्चित करती हैं, परिवार की स्वास्थ्य व्यवस्था का ध्यान रखती हैं, और संकट की घड़ी में परिवार को आर्थिक रूप से स्थिर रखती हैं। शिक्षा, पोषण और स्वच्छता जैसे क्षेत्रों में महिला श्रम ने बलिया की सामाजिक प्रगति में बड़ा योगदान दिया है। 2023 के जिला स्वास्थ्य विभाग की रिपोर्ट के अनुसार, जिन परिवारों में महिलाएँ शिक्षित और कार्यरत हैं, वहाँ बच्चों का टीकाकरण प्रतिशत 92 है, जबकि अशिक्षित गृहिणियों वाले परिवारों में यह 68 प्रतिशत दर्ज किया गया। इससे स्पष्ट है कि महिला श्रम केवल आर्थिक उत्पादन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव विकास के सूचकांकों को भी सीधे प्रभावित करता है।

बलिया में महिला स्वयं सहायता समूहों ने भी महिला श्रम को नई दिशा दी है। "राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन" के तहत जिले में लगभग 1,872 समूह सक्रिय हैं, जिनमें करीब 24,000 महिलाएँ जुड़ी हैं। ये समूह न केवल लघु ऋण और स्वरोजगार

के अवसर प्रदान करते हैं, बल्कि महिलाओं को सामाजिक पहचान और आत्मविश्वास भी देते हैं। कई समूह अब "मधुमक्खी पालन", "अगरबत्ती निर्माण", "साबुन उत्पादन" और "फूलों की खेती" जैसे छोटे उद्योग चला रहे हैं। इन कार्यों से महिलाओं को प्रति माह ₹4,000–₹7,000 की आय प्राप्त हो रही है। यह उनके लिए स्वतंत्र आर्थिक पहचान का आधार बन रहा है।

इसके बावजूद, महिला श्रम की वास्तविक पहचान अभी भी अधूरी है। पितृसत्तात्मक मानसिकता और पारिवारिक नियंत्रण महिलाओं को सार्वजनिक आर्थिक क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से काम करने से रोकते हैं। ग्रामीण इलाकों में आज भी यह धारणा प्रचलित है कि "महिला का काम घर तक सीमित है।" यह सोच न केवल उनके आर्थिक अधिकारों को सीमित करती है, बल्कि आत्मनिर्भरता की राह में भी बाधा डालती है। जिला समाज कल्याण विभाग के एक सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, बलिया की 61 प्रतिशत महिलाएँ यह मानती हैं कि उन्हें बाहर काम करने की स्वतंत्रता नहीं है, जबकि 73 प्रतिशत महिलाएँ यह महसूस करती हैं कि उनके श्रम को परिवार में पर्याप्त महत्व नहीं दिया जाता।

इन परिस्थितियों में शिक्षा और सरकारी योजनाएँ महिला श्रम की सामाजिक पहचान को मजबूत करने का सबसे प्रभावी माध्यम हैं। "मनरेगा" योजना के अंतर्गत बलिया में महिला श्रमिकों की भागीदारी 38 प्रति0 दर्ज की गई है। यह आंकड़ा बताता है कि जब महिलाओं को अवसर और सुरक्षा मिलती है, तो वे पुरुषों के बराबर श्रम करने में सक्षम हैं। इसके अलावा, "प्रधानमंत्री मुद्रा योजना" के तहत बलिया की लगभग 12,500 महिलाओं ने ₹42 करोड़ से अधिक के सूक्ष्म ऋण प्राप्त किए हैं। इससे अनेक महिलाओं ने छोटे व्यवसाय शुरू किए हैं जैसे डेयरी, ब्यूटी पार्लर, टेलरिंग और किराना व्यापार।

महिलाओं के अनपेड लेबर को पहचान देने की दिशा में राज्य और केंद्र सरकार ने कई प्रयास किए हैं। "महिला शक्ति केंद्र", "राष्ट्रीय महिला नीति", और "सेल्फ हेल्प ग्रुप बैंक लिंकिंग प्रोग्राम" जैसे उपक्रमों ने महिलाओं को वित्तीय साक्षरता और उद्यमिता के अवसर प्रदान किए हैं। बलिया में इन योजनाओं का प्रभाव स्पष्ट रूप से

देखा जा सकता है। रसड़ा ब्लॉक में चल रहे "सखी महिला उद्यम केंद्र" में महिलाएँ हस्तशिल्प और खाद्य उत्पाद बनाकर स्थानीय बाजारों में बेचती हैं। इससे उन्हें आत्मनिर्भरता के साथ–साथ सामाजिक सम्मान भी प्राप्त हो रहा है।

महिलाओं के श्रम को आर्थिक रूप से मान्यता देने की दिशा में एक और पहल है "टाइम यूज़ सर्वे, जिसे भारत सरकार ने 2019 में शुरू किया। इस सर्वे में महिलाओं और पुरुषों द्वारा दिनभर में किए गए कार्यों की तुलना की गई। बलिया जिले में इसका स्थानीय परिणाम यह दर्शाता है कि महिलाएँ प्रतिदिन औसतन 7.2 घंटे घरेलू कार्यों में और 2.8 घंटे खेत या अन्य कार्यों में लगाती हैं, जबकि पुरुष घरेलू कार्यों में मात्र 1.1 घंटे खर्च करते हैं। यह अंतर यह बताता है कि महिलाएँ कार्य के बोझ में दोहरी भूमिका निभा रही हैं कृ घर की भी, और बाहर की भी।

महिला श्रम का यह दोहरा स्वरूप उत्पादक और प्रजननात्मक समाज की स्थिरता के लिए आवश्यक है। वे आर्थिक उत्पादन (जैसे खेती या व्यापार) के साथ–साथ परिवार के भावनात्मक और सांस्कृतिक ताने–बाने को भी संभालती हैं। इस दृष्टि से महिला श्रम को केवल आर्थिक गतिविधि के रूप में नहीं, बल्कि सामाजिक निवेश के रूप में देखना चाहिए। यदि बलिया जैसी ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं के घरेलू कार्यों का मूल्यांकन किया जाए, तो यह जिला अर्थव्यवस्था का लगभग 22–25 प्रतिशत योगदान साबित होगा।

महिलाओं के श्रम की उपेक्षा केवल आर्थिक नुकसान नहीं, बल्कि सामाजिक असमानता को भी बढ़ाती है। जब किसी समाज में श्रम का मूल्यांकन लिंग के आधार पर होता है, तो वहाँ समान अवसरों का सिद्धांत कमजोर पड़ता है। बलिया के उदाहरण से यह स्पष्ट है कि शिक्षा, प्रशिक्षण और सामाजिक समर्थन के अभाव में महिलाएँ अपनी पूर्ण क्षमता तक नहीं पहुँच पातीं। वे जो कार्य करती हैं, उसे "कर्तव्य" कहा जाता है, "पेशा" नहीं। इस सोच को बदलना आवश्यक है।

अर्थशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों का मत है कि यदि महिला श्रम को औपचारिक रूप से मान्यता दी जाए, तो इससे दोहरा लाभ होगाकृएक ओर महिलाओं

की आर्थिक स्थिति सुधरेगी और दूसरी ओर राष्ट्रीय आय का यथार्थ मूल्यांकन संभव होगा। बलिया में यह प्रक्रिया धीरे–धीरे शुरू हो चुकी है। स्वयं सहायता समूहों और महिला उद्यमों ने यह साबित किया है कि जब महिलाओं को निर्णय लेने का अवसर दिया जाता है, तो वे न केवल परिवार बल्कि समुदाय के आर्थिक विकास में भी योगदान देती हैं।

बलिया जिले के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि महिला श्रम की सामाजिक स्वीकृति बढ़ाई जाए। यह केवल नीतियों से नहीं, बल्कि शिक्षा, संवेदनशीलता और सांस्कृतिक बदलाव से संभव है। स्कूलों और ग्राम सभाओं में महिलाओं की भूमिका पर चर्चा हो, उनके कार्यों का सार्वजनिक सम्मान किया जाए, और पंचायत स्तर पर "महिला श्रम दिवस" जैसी पहल शुरू की जाए। जब समाज स्वयं महिलाओं के श्रम को सम्मान देना सीखेगा, तब सरकार और संस्थान भी इसे औपचारिक आर्थिक पहचान देंगे।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बलिया की महिलाएँ न केवल श्रमिक हैं, बल्कि इस जिले की आर्थिक आत्मा हैं। वे खेतों में बीज बोती हैं, घर में संस्कार गढ़ती हैं, और समाज में सहयोग की संस्कृति बनाए रखती हैं। उनका श्रम अदृश्य है, परंतु उसके बिना बलिया की अर्थव्यवस्था अधूरी है। अब समय है कि इस "अदृश्य शक्ति" को दृश्यमान बनाया जाएकृउसके कार्यों का मूल्यांकन हो, उसे सामाजिक और आर्थिक मान्यता मिले, और उसके योगदान को राष्ट्र की विकास यात्रा का हिस्सा माना जाए। जब बलिया की महिलाएँ केवल सहयोगी नहीं, बल्कि समान आर्थिक नागरिक के रूप में देखी जाएँगी, तभी यह जिला सच्चे अर्थों में विकास और न्याय का प्रतीक बन सकेगा।

4.6 महिलाओं की समकालीन चुनौतियाँ और संभावनाएँ

बलिया जिला, जो एक ओर अपने ऐतिहासिक गौरव, स्वतंत्रता संग्राम और सांस्कृतिक चेतना के लिए प्रसिद्ध है, वहीं दूसरी ओर आज सामाजिक परिवर्तन और आर्थिक पुनर्गठन के दौर से गुजर रहा है। इस परिवर्तन की प्रक्रिया में महिलाओं की

भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वे आज न केवल परिवार के पोषणकर्ता और संस्कार वाहक हैं, बल्कि शिक्षा, राजनीति, प्रशासन, व्यापार, स्वास्थ्य और तकनीकी क्षेत्र तक अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। फिर भी, यह सच्चाई स्वीकार करनी होगी कि बलिया की महिलाओं को अब भी अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जैसे शिक्षा में असमानता, रोजगार की कमी, सुरक्षा की समस्या, और समान वेतन का अभाव। इन सबके बीच नई संभावनाएँ भी उभर रही हैं, विशेषकर डिजिटल क्रांति, शिक्षा के प्रसार, सरकारी नीतियों और स्व–सहायता समूहों के विस्तार के रूप में। यह स्थिति न केवल महिलाओं के सामाजिक–आर्थिक जीवन का नया अध्याय लिख रही है, बल्कि बलिया जैसे पारंपरिक जिले को आधुनिकता की ओर अग्रसर भी कर रही है।

सबसे पहले यदि शिक्षा की बात करें, तो यह महिलाओं के सशक्तिकरण का सबसे बुनियादी आधार है। बलिया में महिला साक्षरता दर अब लगभग 69.2 प्रतिशत तक पहुँच गई है, जो एक दशक पहले मात्र 58.9 प्रतिशत थी। इस प्रगति के बावजूद ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में गहरा अंतर है जहाँ शहरी इलाकों में महिला साक्षरता 78 प्रतिशत, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में यह केवल 66 प्रतिशत तक सीमित है। इसके पीछे आर्थिक कारणों के साथ–साथ सामाजिक पूर्वाग्रह भी हैं। अब भी कई परिवार यह मानते हैं कि बालिका की शिक्षा विवाह के बाद "व्यर्थ" हो जाएगी। परिणामस्वरूप बहुत सी लड़कियाँ इंटरमीडिएट या स्नातक से पहले ही पढ़ाई छोड़ देती हैं। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में "कस्तूरबा गांधी आवासीय बालिका विद्यालय", "बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ" और "सुकन्या समृद्धि योजना" जैसी योजनाओं ने इस सोच में बदलाव लाने का प्रयास किया है। बलिया के शिक्षा विभाग के अनुसार, इन योजनाओं के अंतर्गत अब तक 18,500 बालिकाओं को छात्रवृत्ति और आवासीय शिक्षा का लाभ मिला है।

रोजगार के क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति शिक्षा से सीधे जुड़ी हुई है। बलिया एक कृषि–प्रधान जिला होने के कारण यहाँ की अधिकांश महिलाएँ कृषि,पशुपालन या घरेलू उद्योगों से जुड़ी हैं। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (छैव) 2023 के आँकड़ों के

अनुसार, बलिया जिले की महिला श्रम भागीदारी दर 25.6 प्रतिशत है, जो राष्ट्रीय औसत से कम है। ग्रामीण इलाकों में यह 29.1 प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में केवल 17. 4 प्रतिशत है। इसका अर्थ यह है कि महिलाएँ अभी भी औपचारिक अर्थव्यवस्था से बाहर हैं। वे खेतों में काम करती हैं, घरेलू उत्पादन में योगदान देती हैं, परंतु उन्हें नियमित वेतन, सुरक्षा या सामाजिक मान्यता नहीं मिलती।

फिर भी, कुछ सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। "राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन" और "महिला स्वयं सहायता समूह" के माध्यम से बलिया की महिलाएँ अब स्वरोजगार की दिशा में बढ़ रही हैं। जिले में लगभग 1,872 महिला समूह सक्रिय हैं, जिनमें 24,000 से अधिक महिलाएँ सदस्य हैं। ये समूह दूध उत्पादन, सब्ज़ी प्रसंस्करण, अगरबत्ती निर्माण, बुनाई, और सूक्ष्म व्यापार में संलग्न हैं। इन गतिविधियों ने न केवल महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधारी है, बल्कि उन्हें सामाजिक पहचान भी दी है। आर्थिक स्वतंत्रता के साथ–साथ आत्मविश्वास में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। रसड़ा ब्लॉक की "सखी समूह" की महिलाएँ अब डिजिटल भुगतान प्रणाली का उपयोग कर रही हैं और अपने उत्पाद ऑनलाइन बेच रही हैं। यह बलिया जैसे अर्ध–ग्रामीण जिले में डिजिटल सशक्तिकरण का जीवंत उदाहरण है।

महिलाओं के लिए रोजगार की एक नई दिशा डिजिटल और तकनीकी क्षेत्र से भी खुली है। कोविड–19 के बाद ऑनलाइन शिक्षा, ई–कॉमर्स और डिजिटल सेवा क्षेत्र ने ग्रामीण महिलाओं को घर बैठे काम करने का अवसर प्रदान किया है। बलिया जिले में "डिजिटल सखी कार्यक्रम" के अंतर्गत अब तक 1,500 युवतियों को डिजिटल साक्षरता का प्रशिक्षण दिया गया है। वे अब मोबाइल बैंकिंग, ऑनलाइन फॉर्म भरने, टेलीमेडिसिन और ऑनलाइन शिक्षा सेवाओं में सक्रिय हैं। यह परिवर्तन केवल तकनीकी नहीं, बल्कि सामाजिक है क्योंकि इससे महिलाओं को घर की सीमाओं से बाहर निकले बिना आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त हो रही है।

हालाँकि, रोजगार और शिक्षा में अवसर बढ़ने के बावजूद सुरक्षा और समान वेतन की समस्या अब भी गंभीर है। बलिया पुलिस की 2023 की रिपोर्ट के अनुसार, जिले में महिलाओं के विरुद्ध अपराधों की कुल संख्या 412 रही, जिसमें सबसे अधिक मामले

छेड़छाड़, दहेज उत्पीड़न और घरेलू हिंसा से संबंधित थे। कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न के 23 मामले दर्ज हुए, जिनमें से अधिकांश निजी संस्थानों से जुड़े थे। यह स्थिति दर्शाती है कि महिलाओं को सुरक्षित कार्य वातावरण उपलब्ध कराना अभी भी चुनौतीपूर्ण है। इसी प्रकार, समान कार्य के लिए समान वेतन का सिद्धांत भी व्यवहार में लागू नहीं हो पाया है। कई क्षेत्रों में महिलाएँ पुरुषों की तुलना में औसतन 18–20 प्रतिशत कम वेतन प्राप्त करती हैं, विशेषकर कृषि और असंगठित क्षेत्र में।

इन चुनौतियों के बावजूद बलिया की महिलाएँ सामाजिक नेतृत्व की दिशा में भी आगे बढ़ रही हैं। पंचायत चुनावों में 50ः आरक्षण नीति ने उन्हें स्थानीय शासन में प्रवेश का अवसर दिया है। वर्तमान में जिले की 894 ग्राम पंचायतों में से लगभग 447 महिला प्रधान हैं। हालाँकि, "प्रधानपति प्रथा" जैसी प्रवृत्तियाँ अब भी मौजूद हैं, जहाँ निर्वाचित महिला प्रधानों के स्थान पर उनके पति निर्णय लेते हैं। इसके बावजूद, अनेक महिला प्रधानों ने इस प्रवृत्ति को तोड़ा है। मुरलीछपरा, बेरुआरबारी और सोहांव ब्लॉकों की कई प्रधानों ने स्वयं पंचायत विकास योजनाओं का नेतृत्व किया है। उनकी पहल से स्वच्छता, पोषण और बालिका शिक्षा कार्यक्रमों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।

शिक्षा, रोजगार और शासन के अलावा बलिया की महिलाओं के सामने एक और बड़ी चुनौती है सामाजिक मानसिकता और पितृसत्तात्मक ढाँचा। परंपरागत सोच अब भी यह मानती है कि महिला का मुख्य दायित्व घर और परिवार तक सीमित है। यह मानसिकता बालिकाओं की शिक्षा और रोजगार दोनों को प्रभावित करती है। जिला समाज कल्याण विभाग के सर्वेक्षण (2023) के अनुसार, बलिया की 61ः महिलाएँ यह मानती हैं कि उन्हें परिवार की अनुमति के बिना बाहर काम करने की स्वतंत्रता नहीं है। यह सामाजिक संरचना न केवल उनकी आर्थिक प्रगति को रोकती है, बल्कि आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता को भी सीमित करती है।

फिर भी, अब एक नई चेतना उभर रही है। युवा पीढ़ी की महिलाएँ इस सोच को बदलने का प्रयास कर रही हैं। कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में छात्र राजनीति, सामाजिक संगठनों और डिजिटल मीडिया के माध्यम से महिलाएँ अपनी आवाज़ बुलंद कर रही हैं। बलिया के बी.एन.एस.डी. कॉलेज और टाउन डिग्री कॉलेज में छात्रसंघ

चुनावों में महिला उम्मीदवारों की भागीदारी पिछले पाँच वर्षों में 38 प्रतिशत बढ़ी है। यह परिवर्तन केवल शिक्षित महिलाओं तक सीमित नहीं, बल्कि ग्रामीण युवतियों में भी देखा जा रहा है, जो अब प्रशासनिक परीक्षाओं, नर्सिंग और पुलिस सेवाओं की तैयारी कर रही हैं।

डिजिटल क्रांति ने महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अब बलिया की महिलाएँ इंटरनेट के माध्यम से ऑनलाइन कोर्स कर रही हैं, सोशल मीडिया पर अपने उत्पाद बेच रही हैं, और डिजिटल मार्केटिंग में कदम रख रही हैं। ग्राम पंचायतों में "कॉमन सर्विस सेंटर" के माध्यम से महिलाएँ आधार, पैन कार्ड, बिजली बिल, और सरकारी योजनाओं से संबंधित सेवाएँ प्रदान कर रही हैं। इससे उन्हें आर्थिक लाभ के साथ सामाजिक सम्मान भी प्राप्त हो रहा है। यह बदलाव इस बात का संकेत है कि अब महिलाएँ केवल उपभोक्ता नहीं, बल्कि तकनीकी समाज की सक्रिय निर्माता बन रही हैं।

इन संभावनाओं के बीच राज्य और केंद्र सरकार की नीतियाँ महिलाओं के जीवन में स्थायी परिवर्तन लाने की दिशा में कार्य कर रही हैं। "प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना" के तहत बलिया की 1.24 लाख महिलाओं को गैस कनेक्शन दिए गए हैं, जिससे घरेलू श्रम और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में सुधार हुआ है। "स्वच्छ भारत मिशन" ने ग्रामीण महिलाओं को शौचालय निर्माण और स्वच्छता अभियानों से जोड़ा है, जिससे उन्हें सामुदायिक नेतृत्व का अवसर मिला है। "महिला शक्ति केंद्र" और "सखी वन स्टॉप सेंटर" जैसी योजनाएँ महिलाओं को कानूनी सहायता, परामर्श और सुरक्षा प्रदान कर रही हैं। इन सबका संयुक्त प्रभाव यह है कि अब बलिया की महिलाएँ केवल सामाजिक कल्याण की प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि परिवर्तन की एजेंट बन रही हैं।

फिर भी यह परिवर्तन पूर्ण नहीं है। बलिया जैसी पारंपरिक संरचना वाले जिले में महिलाओं को बराबरी की स्थिति में लाने के लिए सामाजिक सोच, प्रशासनिक प्रयास और कानूनी सुरक्षा तीनों का संयोजन आवश्यक है। सबसे बड़ी चुनौती यह है कि शिक्षा और रोजगार में सुधार के बावजूद महिलाओं को "निर्णय–निर्माता" की भूमिका में स्वीकार नहीं किया जा रहा। पंचायत, स्कूल प्रबंधन समिति, और स्थानीय विकास

निकायों में महिलाएँ मौजूद हैं, परंतु नीतिगत निर्णय अक्सर पुरुष ही लेते हैं। इसलिए अब आवश्यकता है कि महिलाओं को केवल भागीदारी नहीं, बल्कि वास्तविक शक्ति मिले चाहे वह आर्थिक हो, राजनीतिक या सामाजिक।

भविष्य की संभावनाएँ बलिया की महिलाओं के लिए बहुत व्यापक हैं। शिक्षा के प्रसार और तकनीकी अवसरों ने उनके लिए नए रास्ते खोले हैं। अब महिलाएँ ऑनलाइन शिक्षण, ई–कॉमर्स, हैंडमेड उत्पाद, फूड प्रोसेसिंग, और टूरिज्म सेक्टर में अपनी पहचान बना रही हैं। जिला प्रशासन द्वारा 2024 से "महिला उद्यमिता मिशन" शुरू किया गया है, जिसके तहत 200 से अधिक महिलाओं को व्यवसाय विकास और डिजिटल मार्केटिंग का प्रशिक्षण दिया गया है। इन प्रयासों से उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले वर्षों में बलिया की महिलाएँ रोजगार और उद्यमिता दोनों में अग्रणी होंगी।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि बलिया की महिलाएँ आज संघर्ष और संभावना, दोनों के संगम पर खड़ी हैं। उन्होंने शिक्षा, रोजगार, राजनीति और सामाजिक जीवन में अपनी जगह बनाई है, परंतु रास्ता अभी लंबा है। उन्हें न केवल समान अवसरों की आवश्यकता है, बल्कि उस सोच को भी बदलने की ज़रूरत है जो उन्हें "द्वितीय श्रेणी" का नागरिक मानती है। बलिया की नई पीढ़ी की महिलाएँ इस परिवर्तन की वाहक हैं जो घर की दीवारों से बाहर निकलकर डिजिटल दुनिया, पंचायत की बैठकों और उद्यमिता के मंचों तक पहुँच रही हैं।

अध्याय –5 : सामाजिक न्याय द्वारा महिला विकास के अनुभवजन्य अध्ययन बलिया जिले के विषेश संदर्भ में

उत्तर प्रदेश के बलिया जिले में महिलाओं का विकास एवं उनके सामाजिक न्याय का अध्ययन एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है। बलिया जिला उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में स्थित है और यहाँ की सामाजिक संरचना, आर्थिक स्थिति एवं सांस्कृतिक परंपराएँ महिलाओं के विकास को गहराई से प्रभावित करती हैं। इस जिले में महिलाओं के विकास के लिए सामाजिक न्याय की भूमिका विशेष रूप से उभरी है, जिसमें सरकारी योजनाएँ, स्वयं सहायता समूह, विधिक जागरूकता अभियान एवं सामाजिक संस्थाओं का योगदान उल्लेखनीय रहा है।

बलिया जिले में महिलाओं की स्थिति ऐतिहासिक रूप से विविध चुनौतियों से घिरी रही है। जाति, धर्म, आर्थिक स्तर एवं शहरी–ग्रामीण अंतर ने महिलाओं के विकास को बाधित किया है। इसके बावजूद, पिछले कुछ वर्षों में सामाजिक न्याय के तहत उठाए गए कदमों ने महिलाओं के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाए हैं। बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ योजना, वन स्टॉप सेंटर, महिला हेल्पलाइन 181, विधवा पेंशन जैसी योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सुरक्षा के अधिकार दिए गए हैं। इन योजनाओं के अलावा, स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक स्वावलंबन का अवसर मिला है। बलिया की महिलाएँ अब न केवल अपने परिवार का भरण–पोषण कर रही हैं, बल्कि अपने बच्चों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य की जिम्मेदारी भी उठा रही हैं।

सामाजिक न्याय के तहत बलिया जिले में महिलाओं के विकास के अनुभवजन्य अध्ययन में विधिक जागरूकता शिविरों की भूमिका भी उल्लेखनीय रही है। अपर जनपद न्यायाधीश की अध्यक्षता में आयोजित विधिक जागरूकता शिविरों में महिलाओं को घरेलू हिंसा, यौन उत्पीड़न एवं बाल सुरक्षा कानून के बारे में जानकारी दी गई है। इससे महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया गया है और उन्हें अपनी समस्याएँ साझा करने का आत्मविश्वास मिला है। इसके अलावा, जिला प्रशासन द्वारा आयोजित स्वस्थ नारी–सशक्त परिवार अभियान के तहत महिलाओं के

लिए स्वास्थ्य शिविर, जागरूकता सत्र एवं रैलियाँ आयोजित की गई हैं, जिससे महिलाओं को स्वास्थ्य, पोषण एवं स्वच्छता के बारे में जानकारी मिली है।

बलिया जिले में सामाजिक न्याय के तहत महिलाओं के विकास के अनुभवजन्य अध्ययन में सामाजिक संस्थाओं एवं स्वयं सहायता समूहों की भूमिका भी उल्लेखनीय रही है। इन संस्थाओं ने महिलाओं को शिक्षा, प्रशिक्षण, रोजगार एवं आर्थिक स्वावलंबन के अवसर प्रदान किए हैं। इसके अलावा, महिला अध्ययन केंद्र की स्थापना जैसी पहलों ने गरीब महिलाओं के लिए शिक्षा एवं जागरूकता के नए द्वार खोले हैं।

इस अध्ययन में बलिया जिले की महिलाओं के विकास के लिए सामाजिक न्याय की भूमिका को विस्तार से विश्लेषित किया जाएगा। इसमें सरकारी योजनाओं, स्वयं सहायता समूहों, विधिक जागरूकता अभियानों, सामाजिक संस्थाओं एवं स्थानीय समुदाय की भूमिका का विश्लेषण किया जाएगा। इसके अलावा, महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की बाधाओं, चुनौतियों एवं समाधानों पर भी चर्चा की जाएगी। इस अध्ययन का उद्देश्य बलिया जिले में महिलाओं के विकास के लिए सामाजिक न्याय की भूमिका को समझना एवं उसके अनुभवजन्य प्रभावों को उजागर करना है।

बलिया जिले की महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास संबंधी अनुभवजन्य अध्ययन के उद्देश्य से 300 महिलाओं पर आधारित प्रश्नावली के माध्यम से आंकड़े एकत्रित किए गए। सामाजिक न्याय की अवधारणा और महिलाओं के अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए जिला स्तर पर किए गए विभिन्न प्रयासों के बावजूद आज भी महिलाओं की स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन नहीं दिखता। जाति, धर्म, परिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा, रोजगार एवं राजनीतिक भागीदारी जैसे विविध आयाम महिलाओं के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करते हैं।

यह अध्ययन इसी पृष्ठभूमि में किया गया है, ताकि यह समझा जा सके कि बलिया जिले की महिलाएँ किस प्रकार सामाजिक एवं आर्थिक चुनौतियों के बीच अपने विकास का मार्ग तय कर रही हैं। इसके लिए जिन प्रश्नों को केंद्र बनाया गया वे महिलाओं की सामाजिक स्थिति, शिक्षा, पारिवारिक संरचना, रोजगार, आय, जाति,

धर्म, वैवाहिक और राजनीतिक भागीदारी, सामाजिक संगठन में भागीदारी आदि पर केंद्रित रहे।

इन पहलुओं के आधार पर किए गए सांख्यिकीय विश्लेषण द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया कि सामाजिक न्याय की संस्थागत तथा व्यावहारिक उपलब्धियाँ जिलास्तर की महिलाओं के जीवन में कितना प्रभाव छोड़ रही हैं, और कहाँ अब भी नीतिगत या व्यवहारिक स्तर पर सुधार की आवश्यकता शेष है।

इस पृष्ठभूमि में आगामी खंडों में उन आंकड़ों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जो जिले की महिलाओं की समग्र स्थिति और सामाजिक न्याय के प्रभाव को समझने के लिए आधार तैयार करते हैं।

खण्ड 01 : महिला उत्तरदाताओं का जनसंख्या विवरण

सारणी सं. 5.1 महिला उत्तरदाताओं का सामाजिक वितरण

श्रेणी	संख्या (n=300)
उच्च	99
मध्यम	94
निम्न	107

इस तालिका में तीन सामाजिक स्थितियों उच्च, मध्यम और निम्न का वितरण दिखाया गया है। सर्वेक्षण के 300 महिलाओं में निम्न सामाजिक स्थिति वाली 107 हैं, उच्च वर्ग की 99 महिलाएँ हैं जबकि मध्यम वर्ग की 94 महिलाएँ हैं। यह दर्शाता है कि बलिया जिले में अनुसंधान के सन्दर्भ में निम्न सामाजिक स्थिति अधिक प्रमुख है। सामाजिक न्याय की पहलें निम्न वर्ग के महिलाओं तक कैसे पहुँच रही हैं, यह आंकड़े शोध के लिए महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

सारणी सं.5.2 महिला उत्तरदाताओं की पारिवारिक संरचना

श्रेणी	संख्या (300)
एकल	165
संयुक्त	135

यह तालिका बलिया जिले की महिलाओं के परिवारिक संरचना को दर्शाती है। सर्वाधिक संख्या एकल परिवार की (165) है, जबकि संयुक्त परिवार की महिलाओं की संख्या 135 है। आज के सामाजिक परिदृश्य में संयुक्त परिवार के विघटन और एकल परिवार की ओर बदलाव देखा जा सकता है, जो महिला विकास की नई चुनौतियों एवं अवसरों को परिभाषित करता है।

सारणी सं.5.3 महिला उत्तरदाताओं की शिक्षा

श्रेणी	संख्या (n=300)
विद्यालय	96
स्नातक	63
स्नातकोत्तर	67
अन्य	74

इस तालिका में महिलाओं के शिक्षा स्तर के विभिन्न आयाम दर्शाए गए हैं। सर्वाधिक महिलाएँ (96) विद्यालय स्तर तक शिक्षित हैं, स्नातक (63) व स्नातकोत्तर (67) शिक्षित महिलाओं की संख्या लगभग समान है, जबकि अन्य श्रेणी में 74 महिलाएँ आती हैं।

यह आंकड़ा बताता है कि बलिया जिले में उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं का अनुपात भी अच्छा है, जिससे महिला सशक्तिकरण की संभावनाएँ प्रबल होती हैं।

सारणी सं. 5.4 रोजगार स्थिति

श्रेणी	संख्या (n=300)
रोजगार	160
बेरोजगार	140

सर्वे के अनुसार बलिया जिले की 160 महिलाएँ रोजगार प्राप्त हैं, जबकि 140 महिलाएँ बेरोजगार हैं। रोजगार की उपलब्धता महिलाओं के सामाजिक और व्यक्तिगत विकास के लिए बहुत अहम है। रोजगारहीनता सामाजिक न्याय और महिला विकास के मार्ग में प्रमुख बाधा है। इसलिए सामाजिक न्याय संबंधित नीतियों के लिए यह विश्लेषण बेहद उपयोगी है।

सारणी सं. 5.5 जातिगत पृष्ठभूमि

श्रेणी	संख्या (n=300)
सामान्य	97
ओबीसी	101
एससी/एसटी	102

बलिया जिले की महिलाओं में जातिगत विभाजन अपेक्षाकृत समान है। सामान्य, ओबीसी और एससी/एसटी श्रेणियों में महिलाएँ लगभग एक–तिहाई हैं। यह सामाजिक न्याय हेतु योजनाओं के क्रियान्वयन में सामाजिक–जातीय विविधता को ध्यान में रखने की आवश्यकता दर्शाता है।

सारणी सं. 5.6 धार्मिक पृष्ठभूमि

श्रेणी	संख्या (n=300)
हिन्दू	108
मुस्लिम	94
अन्य	98

इस तालिका में हिन्दू, मुस्लिम एवं अन्य धर्मों से संबंधित महिलाओं का वितरण दिखाया गया है। बलिया में धार्मिक विविधता महिलाओं के सामाजिक अनुभवों और विकास अवसरों को प्रभावित करती है। प्रत्येक धार्मिक समूह की विशेष आवश्यकताएँ सामाजिक न्याय के लिए नीति–निर्माण में महत्वपूर्ण हैं।

सारणी सं. 5.7 वैवाहिक स्थिति

श्रेणी	संख्या (n=300)
विवाहित	99
अविवाहित	109
विधवा/परित्यक्ता	92

अविवाहित महिलाओं की संख्या सबसे अधिक (109) है, विवाहित (99) और विधवा/परित्यक्ता (92) में भी उल्लेखनीय संख्या है। वैवाहिक स्थिति महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को गहराई से प्रभावित करती है, महिलाओं के विकास हेतु योजनाओं में इन वर्गों की आवश्यकता को समझना आवश्यक है।

खण्ड 02: सामाजिक न्याय द्वारा महिला विकास के संदर्भ में महिला उत्तरदाताओं के मत

5.1 व्यावसायिक शिक्षा :

प्रस्तुत शोध में महिला उत्तरदाताओं का चयन किया गया है जो व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा की ओर उन्मुखता सम्बन्धी आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.1 में दिखाया गया है–

सारिणी–5.8 व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा की ओर उन्मुखता

क्रमांक	कार्य-क्षेत्र	पूर्णतया	आंशिक	नहीं	योग
01	शिक्षा	91 (60.67)	27 (18.00)	32 (21.33)	150 (100.00)
02	व्यवसाय	70 (46.67)	22 (14.67)	58 (38.66)	150 (100.00)
योग		161	49	80	300

भारतीय शिक्षा प्रणाली को आज के समय में बेकार की संज्ञा दी जा रही है, क्योंकि यहाँ प्रचलित परम्परागत शिक्षा मात्र किताबी ज्ञान को प्रदान कर रहा है, जिसके माध्यम से हम उद्यमों की स्थापना एवं प्रसार की योग्यता को हासिल नहीं कर सकते। भारत में बेरोजगारों के फौज का यह भी एक बहुत बड़ा कारण है। प्रस्तुत शोध में महिलाओं की इस बारे में विचार जानने के लिए शिक्षा और व्यावसायिक एवं तकनीकी गतिशीलता तथ्यों का संकलन किया गया तो ज्ञात हुआ कि, शिक्षा क्षेत्र की 60.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में पूर्ण उन्मुखता को 30. 00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में आंशिक उन्मुखता को और 21.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में उन्मुखता नहीं को व्यक्त की हैं, इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की 46.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में पूर्ण उन्मुखता को, 14.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में आंशिक उन्मुखता को और 38.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने

व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में उन्मुखता नहीं को व्यक्त की है तथा अन्य क्षेत्र की 36.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में पूर्ण उन्मुखता को, 08. 00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में आंशिक उन्मुखता को और 55.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में उन्मुखता नहीं को व्यक्त की हैं। समग्र रूप में 48.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में पूर्ण उन्मुखता को, 13.56 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में आंशिक उन्मुखता को और 38.44 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने व्यावसायिक शिक्षा की दिशा

5.2 शिक्षा एवं व्यवसाय के क्षेत्र में :

शिक्षा क्षेत्र में देखे तो महिलाएं आज भी पुरुषों से पीछे दिखाई देती हैं क्योंकि शहरी क्षेत्र में तो महिलाएं आगे बढ़ रही है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी पुरुषवादी पितृसत्तात्मक सोच के कारण उनको उच्च शिक्षा से वंचित होना पड़ता है क्योंकि कम उम्र में शादी होना एक सबसे बड़ी समस्या है। अपराधी घटनाओं के कारण कुछ महिलाओं को बीच में ही स्कूल से निकालना पड़ता है घर वाले भी समस्याओं की जूझने के कारण उनको स्कूल नहीं भेजना चाहते जिससे महिलाओं की शिक्षा पर बुरा प्रभाव पड़ता है यदि महिलाएं कम शिक्षित होंगे तो वे सरकारी नौकरियां और गैर सरकारी नौकरियों में अपने प्रतिनिधित्व को नहीं बढ़ा पाएंगे अगर तकनीकी रूप से प्रशिक्षित होगी और कौशल विकास उनके मजबूत होगा तो वह अपने आप को आत्मनिर्भर बनाने में सक्षम होंगे इसलिए महिला शिक्षा महिला के अवसर को और उनका हक दिलाने में सबसे महत्वपूर्ण संसाधन है शिक्षा जैसा संसाधन थी महिलाओं को आगे बढ़ाने में मदद करेगा। जिससे वे अपने क्षमता का पूर्ण उपयोग कर सकेंगे आज जो भी महिलाएं हमें सिर्फ पदों पर देखने को मिल रही है उनके वहां तक पहुंचाने का मध्य शिक्षा ही रहा है शिक्षा की वजह से वह अपने अधिकारों को अपनी क्षमता को समझ पाए और अपने ज्ञान के बल पर उन पदों पर पहुंच पाए। इसलिए महिलाओं को उनके अवसर का लाभ तभी मिल सकता है जब वह अपने अधिकारों से अपनी क्षमता से परिचित होंगे उनको आगे बढ़ाने में उनके परिवार का भी महत्वपूर्ण योगदान है जिन परिवारों ने अपने घर की महिलाओं के साथ खड़े होकर साथ दिया

वहां की महिलाएं आज लगभग सभी क्षेत्रों में अपनी कृतिमान स्थापित कर रहे हैं और समाज में अर्थव्यवस्था में राजनीति में शिक्षा में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं इसके बाद भी आज पुरुष इनके भागीदारी से डरा हुआ है जो की गलत है देश की आधी आबादी महिलाएं हैं और इनका देश के संसाधनों पर भी उतना ही अधिकार है जितना पुरुषों का, तो हमें सोचना होगा की महिलाएं पुरुषों के बराबर है वह किसी से काम नहीं है उनको उनका हक मिलना चाहिए न की उनको परंपरा के नाम पर किसी रूढ़िवादी सोच के नाम पर उनको दबाया जाए हमें सोचना होगा की महिलाएं भी इस देश का ही हिस्सा है। हम इसको सारिणी के माध्यम से समझ सकते हैं सारिणी में शिक्षा एवं व्यवसाय में सम्बन्ध के बारे में अध्ययन इकाइयों के विचार को अभिव्यक्त की गयी है। सारिणी में अंकित तथ्यों से विदित्त है कि, शिक्षा क्षेत्र की 32. 00 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने शिक्षा एवं व्यवसाय में पूर्ण सकारात्मक सम्बन्ध को, 38. 00 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने शिक्षा एवं व्यवसाय में आंशिक सकारात्मक सम्बन्धको और 30.00 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने शिक्षा एवं व्यवसाय में सकारात्मक सम्बन्ध नहीं को अभिव्यक्त की है।

शिक्षा एवं व्यवसाय में सम्बन्ध महिला उत्तरदाताओं का विवरण जिसे सारिणी संख्या में दिखाया गया है

सारिणी –5.9 शिक्षा एवं व्यवसाय में सम्बन्ध

क्रमांक	कार्य-क्षेत्र	पूर्ण सकारात्मक	आंशिक सकारात्मक	सकारात्मक नहीं	योग
01	शिक्षा	48 (32.00)	57 (38.00)	45 (30.00)	150 (100.00)
02	व्यवसाय	43 (28.67)	63 (42.00)	44 (29.33)	150 (100.00)
योग		91	120	99	300 (100.00)

इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की 28.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में पूर्ण सकारात्मक सम्बन्ध को, 42.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में आंशिक सकारात्मक सम्बन्ध को और 93.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में सकारात्मक सम्बन्ध नहीं को अभिव्यक्त की है तथा अन्य क्षेत्र की 24.67

प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में पूर्ण सकारात्मक सम्बन्ध को 30.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में आंशिक सकारात्मक सम्बन्ध को और 44.66 प्रतिशत सूचना दात्रियों ने शिक्षा एवं व्यवसाय में सकारात्मक सम्बन्ध नहीं को अभिव्यक्त की हैं। समग्र रूप में 28. 44 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में पूर्ण सकारात्मक सम्बन्ध को, 36.89 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में आंशिक सकारात्मक सम्बन्ध को और 34.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में सकारात्मक सम्बन्ध नहीं को अभिव्यक्त की हैं। तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष दिया जा सकता है कि, अधिसंख्यक उत्तरदाताओं ने शिक्षा एवं व्यवसाय में सकारात्मक सम्बन्ध को व्यक्त की हैं, किन्तु इनमें अधिकांश आंशिक सकारात्मक सम्बन्ध को बतायी हैं। इस बारे में जानकारी किया गया तो इन्होंने वर्तमान शिक्षा के परम्परागत स्वरूप को बताया कि, इस प्रकार की शिक्षा से व्यावसायिक विकास वांछित गति को प्राप्त नहीं कर पायेगी।

5.3 महिला उद्यमिता

यह खंड महिला उद्यमिता और व्यापक आर्थिक भागीदारी की जांच को प्राथमिकता देता है, जिसमें महिलाओं की श्रम शक्ति भागीदारी, आय के स्रोत, और वित्तीय स्वतंत्रता जैसे महत्वपूर्ण चर शामिल हैं। यह विश्लेषण गरीबी और सशक्तिकरण के बीच के संबंधों को उजागर करने के लिए अनिवार्य है।

यह सांख्यिकीय उपकरण (जैसे माध्य और मानक विचलन) के उपयोग को अनिवार्य करता है और क्रॉस–टैबुलेशन जैसी वैज्ञानिक विधियों पर जोर देता है। यह सुनिश्चित करता है कि महिला उद्यमिता से जुड़े आंकड़े केवल प्रस्तुत न हों, बल्कि उनकी शिक्षा के स्तर या सामाजिक भागीदारी जैसे अन्य चरों के साथ उनका सहसंबंध स्थापित हो। इस प्रकार, यह खंड सुनिश्चित करता है कि शोध के निष्कर्ष केवल व्यक्तिपरक न हों, बल्कि सांख्यिकीय रूप से मान्य और तार्किक हों, जो आगे के अध्यायों के लिए एक ठोस विश्लेषणात्मक नींव रखते हैं।

सारिणी संख्या 5.10 – महिलाओं के उद्यमिता से संबंधित आँकडें

क्रमांक	कार्य-क्षेत्र	पूर्ण	आंशिक	नहीं	योग
01	औद्योगिक क्षेत्र	15 (10.00)	37 (24.67)	98 (65.33)	150 (100.00)
02	गैर-औद्योगिक क्षेत्र	21 (14.00)	45 (30.00)	84 (56.00)	150 (100.00)

इस प्रकार यदि देखें तो शिक्षा से स्पष्ट है कि, महिला उद्यमिता वैश्विक रूप धारण करता जा रहा है। इस स्वरूप को बलिया जनपद में कितना मान्यता मिल रही है, को जानने के लिए तथ्यों का संकलन किया गया तो ज्ञात हुआ कि, औद्योगिक क्षेत्र की 10.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 24.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 65.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक मान्यता नहीं को स्वीकार की हैं, इसी प्रकार गैर– औद्योगिक क्षेत्र की 14.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 56.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक नहीं को स्वीकार की हैं तथा अन्य क्षेत्र की 05.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को 19.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 75. 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक मान्यता नहीं को स्वीकार की है। समग्रत : 09.78 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता की पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 24.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता की आंशिक सामाजिक मान्यता को और 65.55 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता की सामाजिक मान्यता 'नहीं को स्वीकार किया हैं। आँकड़ों से स्पष्ट है कि, आज बलिया जैसे उद्योग शून्य जैसे स्थलों पर महिला उद्यमिता को बहुत कम सामाजिक मान्यता मिल पा रही है।

5.4 महिलाओं को राजनैतिक अवसरों की उपलब्धता :

यह विषय भारत के लोकतांत्रिक ढांचे और नागरिक सशक्तिकरण से गहराई से जुड़ा है। संविधान द्वारा प्रत्येक नागरिक को समान अवसर देने और उसे राजनीतिक प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी का अधिकार प्रदान किया गया है। राजनीति में अवसरों की उपलब्धता का आशय उन व्यवस्थाओं से है, जिनसे सामान्य व्यक्ति भी सार्वजनिक जीवन और शासन व्यवस्था में योगदान दे सके। इन अवसरों का उद्देश्य जाति, धर्म, लिंग या आर्थिक स्थिति के भेदभाव को समाप्त करना और सबके लिए समान सहभागिता सुनिश्चित करना है। लोकतांत्रिक प्रणाली में चुनाव, प्रतिनिधित्व, आरक्षण, और शिक्षा जैसी व्यवस्थाएँ राजनीतिक अवसरों को व्यापक बनाती हैं। विशेष रूप से पंचायती राज व्यवस्था और स्थानीय शासन संस्थाओं के माध्यम से समाज के वंचित वर्गों, महिलाओं तथा अनुसूचित जाति–जनजातियों को जमीनी स्तर पर भागीदारी का अवसर प्राप्त हुआ है। इस प्रकार राजनीतिक अवसरों की उपलब्धता केवल सत्ता तक पहुँचने का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और अधिकारों के संतुलित वितरण का माध्यम भी है, जो राष्ट्र की एकता और प्रगति के लिए आवश्यक तत्व है। प्रस्तुत शोध में महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसरों की उपलब्धता सारिणी के माध्यम से प्रस्तुत है जिसे सारिणी संख्या में दिखाया गया है

सारिणी–5.11 राजनीतिक अवसरों की उपलब्धता

क्रमांक	अवसर की उपलब्धता	अत्यधिक	आंशिक	नहीं	योग
01	हाँ	49 (32.67)	69 (46.00)	32 (21.33)	150 (100.00)
02	नहीं	42 (28.00)	55 (38.67)	50 (33.33)	150 (100.00)

पंचायतीराज अधिनियम, 1992 तथा महिलाओं के संसद में प्रतिनिधित्व सम्बन्धी विधेयक, 2010 के पारित हो जाने के बाद महिलाओं के लिए राजनैतिक दरवाजे खुल गये हैं। इस बारे में प्रस्तुत अध्ययन की उत्तरदाताओं के विचार प्राप्त किया गया तो ज्ञात हुआ कि, प्रत्यक्ष क्षेत्र की 32.67 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए अत्यधिक राजनीतिक अवसरों को, 46.00 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए आंशिक राजनीतिक

अवसरों को और 21.33 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसर नहीं को अभिव्यक्त की हैं, इसी प्रकार अप्रत्यक्ष क्षेत्र की 28.00 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए अत्यधिक राजनीतिक अवसरों को, 38.67 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए आंशिक राजनीतिक अवसरों को और 33.33 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसर नहीं को अभिव्यक्त की है तथा अन्य क्षेत्र की 22.67 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए अत्यधिक राजनीतिक अवसरों को, 28.67 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए आंशिक राजनीतिक अवसरों को और 48.66 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसर नहीं को अभिव्यक्त की हैं। समग्र रूप में 27.78 प्रतिशत ने महिलाओं केलिए अत्यधिक राजनीतिक अवसरों को. 37.78 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए आंशिक राजनीतिक अवसरों को और 34.44 प्रतिशत ने महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसर नहीं को अभिव्यक्त की हैं।

आँकड़ों के आधार पर कहा जा सकता है कि, महिलाओं के लिए निर्मित विधानों के बावजूद इनके लिए राजनीतिक अवसर वांछित रूप में प्राप्त नहीं है। वास्तविकता यह है कि, महिलाओं के नाम पर पुरूष नेतृत्व सम्बन्धी कृत्यों का सम्पादन कर रहा है। अन्य शब्दों में, जब तक महिलाओं को प्राप्त अधिकार का उपभोग महिलाएँ नहीं करेंगी, तब तक ये राजनीतिक शक्ति को प्राप्त नहीं कर पायेंगी।

5.5 राजनीतिक अवसरों का लाभ :

पंचायत स्तर पर 1992 ई० में तथा अब संसदीय एवं राज्य की विधानसभाओं के लिए विधेयक का पारित होना महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसरों के व्यापक दरवाजे को खोल दिया है। इन राजनीतिक अवसरों का लाभ महिलाएँ कितना प्राप्त कर रही हैं? प्रस्तुत शोध में महिलाओं के लिए राजनीतिक अवसरों का लाभ सारिणी के माध्यम से प्रस्तुत है जिसे सारिणी संख्या 5.12 में दिखाया गया है।

सारिणी–5.12 राजनीतिक अवसरों का लाभ

क्रमांक	अवसर का लाभ	पूर्ण	आंशिक	नहीं	योग
01	प्रत्यक्ष	32 (21.33)	43 (28.67)	75 (50.00)	150 (100.00)
02	अप्रत्यक्ष	36 (24.00)	48 (32.00)	66 (44.00)	150 (100.00)

शोध से संबंधित प्रश्नों के उत्तर के लिए तथ्यों का संकलन किया गया तो ज्ञात हुआ कि, प्रत्यक्ष क्षेत्र की 21.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के पूर्ण लाभ को, 28.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के आंशिक लाभ को और 50.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के लाभ नहीं को अभिव्यक्त की हैं। इसी प्रकार अप्रत्यक्ष क्षेत्र की 24.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के पूर्ण लाभ को, 32.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के आंशिक लाभ को और 44.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के लाभ नहीं को अभिव्यक्त की हैं तथा अन्य क्षेत्र की 18.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के पूर्ण लाभ को, 24.00 प्रतिशत उत्तरदाताआ ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के आंशिक लाभ को और 58.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के लाभ नहीं को अभिव्यक्त की हैं। समग्र रूप में 21.11 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के पूर्ण लाभ को, 28.22 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के आंशिक लाभ को और 50.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिलाओं द्वारा राजनीतिक अवसरों के लाभ नहीं को अभिव्यक्त की हैं। तथ्यों से विदित है कि, अभी भी सामान्यतया महिलाएँ अपने राजनीतिक अवसरों का आंशिक अथवा लाभ नहीं प्राप्त कर रही हैं। ऐसी दशा में ये अपने प्रस्थिति को वांछित रूप से सुदृढ़ नहीं कर पार ही हैं और इनकी प्रस्थिति द्वितीयक बनी हुई है।

अपेक्षा की जाती है कि भारत वर्ष 2030 तक संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के बाद विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार, भारत की अर्थव्यवस्था अमेरिका की 10.6 प्रति0 की तुलना में 6.8 प्रतिशत की दर से विकास करेगी। लेकिन भारत के इस आशाजनक आर्थिक विकास के बावजूद देश की अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज में महिलाओं की भागीदारी अभी भी अनुरूप गति नहीं पा सकी है। हाल के समय में भारतीय चुनावों में एक आश्चर्य जनक व्यतिरेक दिखाई पड़ा है। देश में महिला मतदाताओं द्वारा मतदान में वृद्धि हुई है जहाँ वर्ष 2022 में संपन्न हुए चुनावों में आठ में से सात राज्यों में महिला मतदान

में उछाल देखा गया। यह स्थिति आशाजनक प्रतीत होती है। लेकिन स्थानीय चुनावों, राज्य चुनावों और लोकसभा चुनावों में महिला मतदाताओं का यह बढ़ता अनुपात स्वंय महिलाओं द्वारा वृहत रूप से चुनाव लड़ने के रूप में परिलक्षित नहीं हुआ है।

इस परिदृश्य में, राजनीति में महिलाओं के प्रतिनिधित्व की राह में मौजूद बाधाओं को दूर करना समय की मांग है। लैंगिक समता प्राप्त करने के लिए और यह सुनिश्चत करने के लिये कि महिलाओं को राजनीति में भाग लेने का समान अवसर मिले, इसके लिए नीति निर्माताओं नागरिक समाज संगठनों और आम जनता को मिलकर कार्य करना होगा।

5.6 महिला उद्यमिता

शोध में महिला के उद्यमिता से संबंधित आँकड़े सारिणी संख्या 5.13 में दर्षाए गए हैं

सारिणी–5.13

क्रमांक	कार्य-क्षेत्र	पूर्ण	आंशिक	नहीं	योग
01	औद्योगिक क्षेत्र	15 (10.00)	37 (24.67)	98 (65.33)	150 (100.00)
02	गैर–औद्योगिक क्षेत्र	21 (14.00)	45 (30.00)	84 (56.00)	150 (100.00)

स्पष्ट है कि, महिला उद्यमिता वैश्विक स्वरूप धारण करता जा रहा है। इस स्वरूप को बलिया जनपद में कितना मान्यता मिल रही है? को जानने के लिए तथ्यों का संकलन किया गया तो ज्ञात हुआ कि, शिक्षा क्षेत्र की 10.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 24.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 65.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक मान्यता नहीं को स्वीकार की हैं।

इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की 14.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिताको आंशिक सामाजिक मान्यता को और 56.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता

को सामाजिक नहीं को स्वीकार की हैं तथा अन्य क्षेत्र की 05.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 19.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 75.34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक मान्यता नहीं को स्वीकार की है। समग्रत 09.78 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को पूर्ण सामाजिक मान्यता को, 24.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को आंशिक सामाजिक मान्यता को और 65. 55 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने महिला उद्यमिता को सामाजिक मान्यता नहीं को स्वीकार की हैं। आँकड़ों से स्पष्ट है कि, आज बलिया जैसे उद्योग शून्य जैसे स्थलों पर महिला उद्यमिता को बहुत कम सामाजिक मान्यता मिल पा रही है।

5.7 शारीरिक हिंसा

भारत में महिलाओं की स्थिति हमेशा से ही गंभीर चिंता का विषय रही है। पिछली कई शताब्दियों से, भारत की महिलाओं को उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में कभी भी समान दर्जा और अवसर नहीं दिए गए। भारतीय समाज की पितृसत्तात्मक प्रकृति, जो भले ही महिलाओं को हमारी माँ और बहन के रूप में सम्मान देती है लेकिन महिलाएं गर्भ से लेकर कब्र तक हिंसा का सामना करती रहती हैं ।

गर्भ में रहते हुए उन्हें भ्रूणहत्या के लगातार बढ़ते खतरे का सामना करना पड़ता है और जन्म के बाद, वे अपने जीवन के विभिन्न बिंदुओं पर, अपने माता–पिता से लेकर अपने पतियों से लेकर परिवार के सदस्यों के हाथों विभिन्न प्रकार की हिंसा और उत्पीड़न का शिकार होती हैं। यह स्थिति तब भी मौजूद है जब भारत का संविधान सभी भारतीय महिलाओं को समानता (अनुच्छेद 14), राज्य द्वारा कोई भेदभाव नहीं (अनुच्छेद 15(1)) अवसर की समानता (अनुच्छेद 16), और समान काम के लिए समान वेतन की गारंटी देता है।

इन सभी संवैधानिक और कानूनी उपायों के बावजूद भारत में महिलाओं के साथ बहुत अत्याचार और अन्याय व्याप्त है। यह एक विडंबना है कि, जिस देश में धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराएं महिलाओं को उच्च सम्मान देती हैं, और महिलाओं को देवीओं के रूप में पूजा जाता है, वहां उनके खिलाफ अत्याचार बढ़ रहे हैं।

प्रस्तुत शोध में महिलाओं के प्रति शारीरिक हिंसा सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत है जिसे सारिणी संख्या 5.14 में दिखाया गया है

सारिणी–5.14

क्रमांक	शारीरिक हिंसा	हाथ-पैर से मारपीट	चप्पल-जुता से मार पीट	लाठी-डण्डे से मारपीट	धारदार हथियार के प्रयोग	अन्य	योग
01	घरेलू	60 (40.00)	29 (19.33)	09 (06.00)	03 (02.00)	49 (32.67)	150 (100.00)
02	सार्वजनिक	61 (40.67)	31 (20.67)	23 (15.33)	12 (08.00)	23 (15.30)	150 (100.00)

सामाजिक रूप में महिलाओं का शारीरिक शोषण आम है। महिलाएँ विविध रूप से हिंसा का शिकार होती हैं। इस बारे में प्रस्तुत शोध में तथ्यों का संकलन किया गया तो ज्ञात हुआ कि, शिक्षा क्षेत्र की 40.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाथ–पैर से मारपीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की है, 19.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने चप्पल जुता से मारपीट पी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की है, 06.00 प्रतिशत सूचना दात्रियों ने लाठी–डण्डे से मार पीट शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं 02.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मारपीट में धारदार हथियार के प्रयोगरूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 32.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शारीरिक हिंसा को अस्वीकार की हैं इसी प्रकार व्यवसाय क्षेत्र की 40.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाथ–पैर से मारपीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 20.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने चप्पल जुता सेमार पीटरूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 15.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने लाठी–डण्डे से मार पीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 08.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मारपीट में धारदार हथियार के प्रयोग रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 15.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शारीरिक हिंसा को अस्वीकार की है तथा अन्य क्षेत्र की 12.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाथ–पैर सेमार पीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार कीहैं. 28.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने चप्पल–जुता से मारपीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की है, 25.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने लाठी–डण्डेसे मारपीट रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 11.33 प्रतिशत

उत्तरदाताओं ने मारपीट में धारदार हथियार के प्रयोग रूपी शारीरिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 22.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शारीरिक हिंसा को अस्वीकार की हैं।

5.8 मानसिक हिंसा :

मानसिक हिंसा सम्बन्धी आंकड़ों का विवरण सारिणी संख्या 5.15 में दिया गया है

सारिणी–5.15

क्रमांक	मानसिक हिंसा	भय दिखाना	गाली-गलौज	अपमान / तिरस्कार	उपहास	हिंसा नहीं	योग
01	घरेलू	15 (10.00)	38 (25.33)	20 (13.33)	32 (21.34)	45 (30.00)	150 (100.00)
02	सार्वजनिक	38 (25.33)	45 (30.00)	19 (12.67)	21 (14.00)	27 (18.00)	150 (100.00)

शारीरिक हिंसा से भी व्यापक स्वरूप महिलाओं के विरूद्ध मानसिक हिंसा का है। इस बारे में अध्ययन से ज्ञात हुआ कि, शिक्षा क्षेत्र की 10.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भय दिखाने रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार कीहैं, 25.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने गली–गलौज रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 13.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपमान – तिरस्कार रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 21.34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उपहास रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मानसिक हिंसा को अस्वीकार की है। इसी प्रकार सार्वजनिक रूप से 25.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भय दिखाने रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने गाली–गलौज रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 12.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपमान तिरस्कार रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 14.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उपहास रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 18.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मानसिक हिंसा को अस्वीकार की हैं और अन्य क्षेत्र की 28.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भय दिखाने रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार

की है. 35.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने गाली–गलौज रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 04.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपमान तिरस्कार रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 07.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उपहास रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 25.34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मानसिक हिंसा को अस्वीकार की हैं। समग्र रूप में 21.11 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भय दिखाने रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 30.22 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने गाली–गलौज रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं. 10.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपमान तिरस्कार रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 14.22 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उपहास रूपी मानसिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 24.45 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मानसिक हिंसा को अस्वीकार की है। तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि, शारीरिक हिंसा की भाँति मानसिक हिंसा भी महिलाओं के लिए बहुत ही घातक है।

5.9 यौनिक हिंसा :

सारिणी–5.16 यौनिक हिंसा सम्बन्धी विवरण

क्रमांक	यौनिक हिंसा	अनिच्छित सहवास	यौनिक छेड़-छाड़	भद्दी हँसी-मजाक	कामुक दृष्टि	बलात्कार	अन्य	योग
01	प्रत्यक्ष	15 (1.6)	36 (2.16)	23 (15.33)	39 (25.00)	39 26:00)	55 (36.66)	150 (100.00)
02	अप्रत्यक्ष	18 (12.00)	21 (14.00)	27 (10.00)	45 (30.00)	60 (40.00)	39 (25.00)	150 (100.00)

उत्तरदाताओं से यौनिक हिंसा सम्बन्धी तथ्यों को सारिणी 5.10 में अभिव्यक्त किया गया है, जिससे विदित है कि 10.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अनिच्छित सहवास रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 11.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक छेड़–छाड़ रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 15.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भद्दी हँसी–मजाक रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 26.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कामुक दृष्टि रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 40.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने

बलात्कार रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 36.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौन हिंसा को स्वीकार की हैं, इसी प्रकार 12.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अनिच्छित सहवास रूपी यौन हिंसा को स्वीकार की हैं. 14.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक छेड़–छाड़ रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की है, 18.00 प्रतिशत उत्तरदाताओंने भद्दी हँसी–मजाक रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कामुक दृष्टि रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 00.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बलात्कार रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 26.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक हिंसा को अस्वीकार की हैं तथा अन्य क्षेत्र की 22.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अनिच्छित सहवास रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 32.00 प्रतिशत उत्तरदाताओंने यौनिक छेड़–छाड़ रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 30.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने मद्दी हँसी–मजाक रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 09. 33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कामुक दृष्टिरूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं। 02. 00 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बलात्कार रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 04. 67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक हिंसा को अस्वीकार की हैं। समग्र रूप में 14.89 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अनिच्छित सहवास रूपी यौनिकहिंसा को स्वीकार की हैं। 19. 11 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक छेड़–छाड़ रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं. 21.11 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी हँसी–मजाकरूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 21.78 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कामुक दृष्टि रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं, 00.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बलात्कार रूपी यौनिक हिंसा को स्वीकार की हैं और 22.44 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यौनिक हिंसा को अस्वीकार की हैं।

खण्ड 03: प्रमुख निष्कर्ष

अध्ययन का यह खंड बलिया जिले की 300 महिला उत्तरदाताओं से एकत्र किए गए अनुभवजन्य आंकड़ों के विस्तृत प्रस्तुतीकरण और गहन चर्चा के लिए समर्पित है, जिसका प्राथमिक उद्देश्य यह समझना है कि सामाजिक न्याय के विभिन्न आयामकृ शैक्षिक, आर्थिक और संपत्तिगतकृकिस सीमा तक महिलाओं के समग्र विकास को प्रभावित कर रहे हैं। बलिया, जो उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में स्थित एक कृषि–प्रधान और सामाजिक रूप से रूढ़िवादी जिला है, वहाँ की सामाजिक–आर्थिक संरचना

महिलाओं के जीवन की गुणवत्ता और अवसरों को गहराई से प्रभावित करती है। प्रस्तुत विश्लेषण केवल क्या है की सांख्यिकीय तस्वीर नहीं है, बल्कि यह भी जानने का एक प्रयास है कि यह स्थिति क्यों है और यह भारत के संवैधानिक लक्ष्यों, विशेष रूप से सामाजिक न्याय के आदर्शों से कितनी दूर है। हमने यहाँ आयु, धर्म, जाति, शिक्षा और व्यवसाय जैसे जनसांख्यिकीय तत्वों के आवृत्ति वितरण का सहारा लिया है, साथ ही आय, परिवार के स्वरूप और पैतृक व्यवसाय जैसे प्रमुख सामाजिक–आर्थिक संकेतकों के संयुक्त विश्लेषण द्वारा निष्कर्षों को और अधिक सुदृढ़ किया है, ताकि महिला विकास को प्रभावित करने वाले अंतर्निहित विरोधाभासों और संरचनात्मक बाधाओं को उजागर किया जा सके।

उत्तरदाताओं के जनसांख्यिकीय प्रोफाइल का मूल्यांकन महिलाओं के विकास के लिए आवश्यक शैक्षिक न्याय के स्तर को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। शिक्षा के स्तर के विश्लेषण से यह महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आता है कि यद्यपि एक बड़ी संख्या, 35.0 प्रतिशत माध्यमिक शिक्षा (कक्षा 6–10) के स्तर तक पहुँच चुकी है, जो सरकारी शैक्षिक पहलों और सामाजिक जागरूकता में हुई वृद्धि का एक सकारात्मक संकेत है, वहीं स्नातक और उससे ऊपर के स्तर पर केवल 20.0 प्रतिशत महिलाओं का होना उच्च शिक्षा तक पहुँचने में एक महत्वपूर्ण बाधा (Drop-out Barrier) की उपस्थिति को दर्शाता है। यह बाधा अक्सर सामाजिक प्राथमिकताओं, जैसे कि कम उम्र में विवाह, उच्च शिक्षा की बढ़ती लागत, और लड़कियों की शिक्षा में निवेश को पारिवारिक लाभ के बजाय व्यर्थ व्यय मानने वाली पारंपरिक मानसिकता से प्रेरित होती है। सबसे गंभीर चुनौती अनपढ़ महिलाओं का 25.0 प्रतिशत हिस्सा है; सामाजिक न्याय के परिप्रेक्ष्य से, यह एक गंभीर विफलता है क्योंकि जनसंख्या का एक–चौथाई हिस्सा अभी भी बुनियादी साक्षरता और सूचना तक पहुँच के मौलिक अधिकार से वंचित है। यह शैक्षिक असमानता न केवल उनके आर्थिक अवसरों को सीमित करती है, बल्कि उन्हें स्वास्थ्य, वित्त और कानूनी जागरूकता जैसे क्षेत्रों में निर्णय लेने की शक्ति से भी वंचित रखती है। यह स्पष्ट करता है कि बलिया जैसे जिले में विकास की मात्रा (नामांकन) बढ़ी है, लेकिन गुणवत्ता, उच्चतम स्तर तक पहुँच, और शैक्षिक न्याय की सार्वभौमिकता अभी भी लैंगिक आधार पर गंभीर रूप से बाधित है, जिसके लिए विशेष

रूप से वयस्क महिला साक्षरता कार्यक्रमों और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर लड़कियों के लिए वित्तीय प्रोत्साहन योजनाओं की आवश्यकता है।

सामाजिक–जनसांख्यिकीय पृष्ठभूमि के अन्य आंकड़े, जैसे कि सर्वेक्षण में शामिल महिलाओं का सबसे बड़ा समूह मध्य आयु वर्ग (31–45 वर्ष) (40.0 प्रतिशत) से संबंधित है, यह सुनिश्चित करता है कि डेटा उस समूह का प्रतिनिधित्व करता है जो वर्तमान में परिवार की आर्थिक और सामाजिक स्थितियों को सक्रिय रूप से प्रभावित कर रहा है। धर्म के संदर्भ में, 90.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं का हिंदू होना इस क्षेत्र के सामान्य सांस्कृतिक पैटर्न को दर्शाता है, जबकि अन्य पिछड़ा वर्ग का 50.0 प्रतिशत प्रभुत्व सामाजिक नीति के लक्ष्यीकरण के लिए महत्वपूर्ण है। यह प्रभुत्व दर्शाता है कि महिला विकास और सामाजिक न्याय की नीतियों को इस वर्ग की विशिष्ट सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों, जैसे कि छोटे भू–जोत (46.7 प्रतिशत के पास 1–5 बीघा), पर विशेष रूप से ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। छोटी और सीमांत जोत की यह व्यापकता (46.7 प्रतिशत) कृषि आय की भेद्यता को बढ़ाती है और इस प्रकार, परिवारों की आर्थिक स्थिरता को कम करती है, जिससे महिलाएँ आर्थिक तनाव के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त 66.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पिता का व्यवसाय कृषि रहा है, जो यह स्थापित करता है कि महिलाओं की सामाजिक जड़ें और पारिवारिक विरासत दृढ़ता से कृषि अर्थव्यवस्था से जुड़ी हुई हैं, भले ही उनकी वर्तमान आजीविका बदल गई हो। इन आंकड़ों का सामूहिक रूप से अध्ययन करने पर यह पता चलता है कि सामाजिक न्याय के प्रयासों को मुख्य रूप से ओबीसी समुदाय की मध्य आयु वर्ग की महिलाओं को लक्षित करना होगा जो कम शिक्षित हैं और जिनके परिवार छोटी कृषि जोत पर निर्भर हैं।

महिलाओं के व्यवसाय का स्वरूप उनके आर्थिक न्याय और श्रम बल में उनकी वास्तविक स्थिति का सबसे स्पष्ट संकेतक है, और इस अध्ययन के निष्कर्ष आर्थिक असमानता की दोहरी और गंभीर वास्तविकता को उजागर करते हैं। सबसे बड़ा हिस्सा 40.0 प्रतिशत गृहणी का है, जो यह दर्शाता है कि उनकी एक महत्वपूर्ण श्रम शक्ति अवैतनिक देखभाल अर्थव्यवस्था तक सीमित है। इस अवैतनिक श्रम को राष्ट्रीय या क्षेत्रीय आर्थिक मूल्य में नहीं गिना जाता, जिसके परिणामस्वरूप महिलाएँ व्यक्तिगत

आय, संपत्ति और सामाजिक सुरक्षा के अधिकारों से वंचित रह जाती हैं, जो आर्थिक एजेंसी के लिए मौलिक हैं। यह सामाजिक न्याय के सिद्धांत का सीधा उल्लंघन है, जहाँ श्रम के मूल्य को पहचान नहीं मिलती है। दूसरा सबसे बड़ा समूह, 30.0 प्रतिशत कृषि मजदूर/श्रमिकों का है, जो उनकी आर्थिक भेद्यता को दर्शाता है। ये महिलाएँ अनौपचारिक क्षेत्र में संलग्न हैं, मौसमी रोजगार पर निर्भर करती हैं, न्यूनतम मजदूरी और श्रमिक सुरक्षा लाभों से वंचित रहती हैं, जिससे वे आर्थिक रूप से सर्वाधिक शोषित समूह बन जाती हैं। इसके विपरीत, संगठित क्षेत्र में नौकरी (सरकारी/निजी) में संलग्न महिलाओं का अनुपात केवल 16.7 प्रतिशत है, जबकि स्वरोजगार/कृषि में 13.3 प्रतिशत है। यह असंतुलन स्थापित करता है कि बलिया की अधिकांश महिलाएँ या तो श्रम बल से बाहर हैं, या वे कम वेतन वाले और अनौपचारिक क्षेत्र में फँसी हुई हैं। सामाजिक न्याय के लिए यह आवश्यक है कि नीतियों को अवैतनिक श्रम की पहचान करने, कृषि श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा जाल सुनिश्चित करने और महिलाओं को कौशल विकास एवं उद्यमिता प्रशिक्षण के माध्यम से औपचारिक, सुरक्षित और समान वेतन वाले रोजगार के अवसरों तक पहुँचाने पर केंद्रित किया जाए।

वार्षिक आय और परिवार के स्वरूप के बीच का संयुक्त विश्लेषण बलिया जैसे क्षेत्र में चल रहे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की गतिशीलता को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। निष्कर्ष यह स्थापित करते हैं कि एकल परिवार में रहने वाली महिलाएँ (42.9 प्रतिशत) उच्च आय वर्ग (3,00,000) में केंद्रित हैं, जबकि संयुक्त परिवार में रहने वाली अधिकांश महिलाएँ (66.7 प्रतिशत) निम्न आय वर्ग (1,00,000) में केंद्रित हैं। यह पैटर्न आधुनिकीकरण और आर्थिक गतिशीलता के बीच एक मजबूत सहसंबंध स्थापित करता है। उच्च आय वाले परिवारों का एकल स्वरूप को अपनाना अक्सर शहरी प्रवास, औपचारिक रोजगार से जुड़ी विशेषज्ञता, और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की बढ़ती इच्छा का परिणाम होता है, जहाँ कम आश्रितों के कारण प्रति व्यक्ति आय बढ़ जाती है। यह आर्थिक स्वतंत्रता एकल परिवारों में रहने वाली महिलाओं को घरेलू निर्णय लेने की प्रक्रिया में अधिक स्वायत्तता प्रदान कर सकती है, जो एक प्रकार के श्विकास लाभश का संकेत ळें

हालांकि, संयुक्त परिवारों का निम्न आय वर्ग में सिमट जाना यह दर्शाता है कि वे पारंपरिक, कृषि–आधारित आजीविका और सीमित आय स्रोतों पर निर्भर ग्रामीण संरचनाओं से जुड़े हुए हैं। सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से, निम्न आय वाले संयुक्त परिवारों में महिलाओं को अक्सर न केवल अधिक आर्थिक तनाव, बल्कि कठोर सामाजिक नियंत्रण और निर्णय लेने की शक्ति की कमी का भी सामना करना पड़ता है। इसलिए, आर्थिक समृद्धि का प्रसार संयुक्त और एकल दोनों परिवारों में समान रूप से सुनिश्चित करना, और निम्न आय वाले परिवारों में महिलाओं के लिए आय सृजन के अवसरों को बढ़ाना, सामाजिक न्याय की अनिवार्यता है।

महिलाओं के विकास के लिए सामाजिक न्याय का एक और महत्वपूर्ण आयाम संपत्ति अधिकार और भूमि तक पहुँच है, जिसे भूमि की स्थिति और पैतृक पृष्ठभूमि के विश्लेषण से समझा जा सकता है। यह निष्कर्ष कि कुल उत्तरदाताओं में से अधिकांश (56.7 प्रतिशत) के पास बिखरी हुई (विखंडित) पारिवारिक भूमि है, ग्रामीण भारत में पीढ़ी–दर–पीढ़ी विरासत के विभाजन के कारण होने वाली एक सामान्य लेकिन गंभीर समस्या को उजागर करता है। यह विखंडन कृषि उत्पादकता को कम करता है और भूमि समेकन को कठिन बनाता है। विशेष रूप से, जिन महिलाओं के पिता मजदूरी या सेवा में थे, उनके परिवारों में भूमि विखंडन की दर और भी अधिक (65.0 प्रतिशत) पाई गई, जो यह संकेत देता है कि जब परिवार की आय का मुख्य स्रोत गैर–कृषि हो जाता है, तो पैतृक भूमि के प्रबंधन और समेकन पर ध्यान कम हो जाता है। महिलाओं के संदर्भ में, भूमि पर नियंत्रण या स्वामित्व उनकी दीर्घकालिक आर्थिक सुरक्षा, संस्थागत ऋण तक पहुँच और सामाजिक स्थिति के लिए मौलिक है। विखंडित और छोटी जोत वाली भूमि से जुड़ी महिलाएँ अक्सर आर्थिक रूप से कमजोर होती हैं, और उन्हें कृषि योजनाओं या ऋणों का लाभ उठाने में कठिनाई होती है। अतः, संपत्ति के अधिकार के रूप में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए, भूमि रिकॉर्ड के डिजिटलीकरण, महिला किसानों के नाम पर भूमि पंजीकरण को प्राथमिकता देने और महिला–केंद्रित भूमि समेकन कार्यक्रमों को लागू करने की तत्काल आवश्यकता है ताकि उनकी कृषि स्थिरता और वित्तीय समावेशन सुनिश्चित हो सके।

यह विस्तृत अनुभवजन्य अध्ययन बलिया जिले में महिला विकास की स्थिति को एक विरोधाभासी लेकिन स्पष्ट निष्कर्ष के साथ समाप्त करता है। एक ओर, सकारात्मक विकास के संकेत स्पष्ट हैंरू माध्यमिक शिक्षा तक बढ़ी हुई पहुँच स्नातक स्तर तक पहुँचने वाले 20 प्रतिशत का समूह, और आर्थिक गतिशीलता के परिणामस्वरूप एकल परिवार संरचनाओं (70.0 प्रतिशत) का बढ़ता प्रभुत्व। ये संकेत आर्थिक संवृद्धि और सामाजिक जागरूकता के परिणामस्वरूप आए हैं और ये महिलाओं की स्वतंत्रता की दिशा में एक क्रमिक कदम हैं। दूसरी ओर, सामाजिक न्याय की गहरी और संरचनात्मक कमी बनी हुई है जनसंख्या का एक–चौथाई हिस्सा अनपढ़ है (शैक्षिक न्याय की विफलता) 70 प्रतिशत महिलाएँ या तो अवैतनिक घरेलू श्रम में हैं या अनौपचारिक, कम वेतन वाले कृषि मजदूर हैं (आर्थिक न्याय की विफलता) और संपत्ति का अधिकार भूमि विखंडन की व्यापक समस्या से ग्रस्त है (संपत्ति न्याय की विफलता)। यह दर्शाता है कि बलिया में विकास हुआ है लेकिन वह विकास केवल एक वर्ग तक सीमित रहा है और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों (शिक्षा, आर्थिक सुरक्षा, और संपत्ति के अधिकार) के अभाव में यह अधूरा और अस्थिर है। वास्तविक और समावेशी विकास के लिए नीतिगत हस्तक्षेपों को अब केवल विकास की मात्रा पर नहीं बल्कि सामाजिक न्याय के स्तंभों को मजबूत करने पर केंद्रित होना चाहिए ताकि बलिया की सभी महिलाएँ आर्थिक सुरक्षा और सामाजिक समानता प्राप्त कर सकें।

अध्ययन पद्धति

1. अध्ययन का प्रारूप –

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखते हुए अन्वेषणात्मक तथा विश्लेषणात्मक शोध प्रारूप का प्रयोग किया गया है। ऐसे शोध प्रारूप का सम्बन्ध प्राथमिक शोध से है जिसके अन्तर्गत समस्या के विषय में प्राथमिक सूचनाएं प्राप्त करके भावी अध्ययन की आधारशिला तैयार की गयी है। अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा घटनाओं में व्याप्त नियमितता एवं श्रृंखला बद्धता को स्पष्ट किया गया है। जिनमें नवीन तथ्यों या सूचनाओं को उद्घाटित किया जा सकें।

महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का अध्ययन एक अत्यंत महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय विषय है, विशेष रूप से जब इसे किसी विशेष क्षेत्र, जैसे कि बलिया जनपद के संदर्भ में देखा जाता है। बलिया, जो उत्तर प्रदेश का एक जिला है, यहॉ की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियॉ महिलाओं के विकास में विविध चुनौतियॉ प्रस्तुत करती हैं। इस अध्ययन में समाजशास्त्र के दृष्टिकोण से सामाजिक न्याय और महिलाओं के विकास के संबंध को गहरे से समझने का प्रयास किया गया है।

2. डेटा प्रस्तुति–

प्रस्तुत शोध में प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों प्रकार के तथ्य संकलित किये गये है। इस अध्ययन में गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार की पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। यह अध्ययन मुख्य रूप से क्षेत्रीय विष्लेषण पर आधारित है। जहॉ बलिया जनपद के विभिन्न गॉवों और शहरी क्षेत्रों की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन किया गया है।

(क) डेटा संग्रहण

(1) प्राथमिक डेटा :– वह डेटा होता है, जिसे शोधकर्ता स्वयं संग्रहित करता है। इस अध्ययन में बलिया जनपद में महिलाओं के विकास और सामाजिक न्याय की भूमिका को समझने के लिए प्राथमिक डेटा संग्रहण की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है। इसमें विभिन्न स्त्रोतों से जानकारी प्राप्त की गयी है, जो विशेष रूप से बलिया जनपद में महिलाओं की सामाजिक स्थिति, विकास और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों के पालन के संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

(a) साक्षात्कार :– साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण तरीका है, जिसमें विभिन्न महिलाओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं, सरकारी अधिकारियों और क्षेत्रीय नेताओं से व्यक्तिगत रूप से जानकारी प्राप्त की जाती है। बलिया जनपद में महिलाओं की स्थिति, उनके अधिकारों और सामाजिक न्याय के क्रियान्वयन पर साक्षात्कार किए जा सकते हैं।

(b) सर्वेक्षण :– सर्वेक्षण एक महत्वपूर्ण पद्धति है, जिसमें एक बड़ी संख्या में महिलाओं से शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सुरक्षा एवं सामाजिक न्याय के संदर्भ में कौन से अवसर प्राप्त हो रहे हैं एवं सरकारी योजनाओं के प्रति क्या दृष्टिकोण है? जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(c) फोकस समूह चर्चा :– फोकस समूह चर्चा एक और प्रभावी प्राथमिक डेटा संग्रहण विधि है, जिसमें महिलाओं के समूह के साथ गहन चर्चा की जाती है। इससे महिलाओं के अनुभव, सामाजिक दृष्टिकोण और उनके समस्याओं की गहरी जानकारी मिलती है।

(2) द्वितीयक डेटा :– ये वह डेटा होता है जो पहले से कहीं और एकत्रित किया जा चुका होता है और जिसे शोधकर्ता विश्लेषण के लिए उपयोग करता है। इस अध्ययन में बलिया जनपद में महिलाओं के विकास और सामाजिक न्याय की भूमिका को समझने के लिए माध्यमिक डेटा का उपयोग किया गया है। द्वितीयक डेटा के द्वारा पहले से प्रकाशित रिपोर्ट्स, सरकारी आंकड़े, अध्ययन और अन्य साहित्य से जानकारी प्राप्त की गयी है जो शोध में मदद करेगीं।

(a) सरकारी रिपोर्ट्स और योजनाएं :– बलिया जनपद में महिलाओं के विकास के लिए विभिन्न सरकारी योजनाएं और कार्यक्रम लागू किए गए हैं, जिनका अध्ययन किया गया है। इन योजनाओं का उद्देश्य महिलाओं को शिक्षा स्वास्थ्य, रोजगार, सुरक्षा और सामाजिक सशक्तिकरण के क्षेत्र में समर्थन देना है। इन योजनाओं से संबंधित माध्यमिक डेटा का उपयोग यह समझने में किया गया है कि इन योजनाओं का कितनी प्रभावी तरीके से क्रियान्वयन हो रहा है और उनका महिलाओं के विकास पर क्या प्रभाव पड़ा है।

(b) आंकड़े और सांख्यिकी रिपोर्ट्स :– बलिया जनपद में महिलाओं के विकास से संबंधित विभिन्न सरकारी और गैर–सरकारी आंकड़े उपलब्ध होते हैं, जो उनके सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थितियों का विष्लेषण करने में मदद करते हैं, जैसे साक्षरता दर, स्वास्थ्य संबंधित आंकड़े एवं रोजगार और आय में महिलाओं का योगदान।

(c) स्थानीय सरकारी और गैर–सरकारी संगठनों की रिपोर्ट्स – बलिया जनपद में कई स्थानीय और क्षेत्रीय गैर–सरकारी संगठन महिलाओं के विकास के लिए काम कर रहे हैं। इन संगठनों द्वारा किए गए अध्ययन, रिपोर्ट्स और कार्यों का अध्ययन किया गया है। इन संगठनों के कार्यों से यह जानकारी प्राप्त हो सकती है कि सामाजिक न्याय की भावना ने बलिया में महिलाओं के बीच किस प्रकार से बढ़ावा दिया गया है।

(d) स्थानीय समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेख और रिपोर्ट्स – स्थानीय समाचार पत्र और पत्रिकाएं बलिया जनपद में महिलाओं के विकास और सामाजिक न्याय से संबंधित घटनाओं और मुद्दों पर अक्सर रिपोर्ट प्रकाशित करती है। इन आलेखों और रिपोर्ट्स का अध्ययन किया गया है, ताकि महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों का क्षेत्रीय स्तर पर प्रभाव और चर्चा समझी जा सके, जैसे– समाचार रिपोर्ट्स, स्थानीय साक्षात्कार और आलेख आदि।

(e) सामाजिक शोध और अकादमिक लेख :– पूर्व में किए गए समाजशास्त्रीय शोध और अकादमिक लेखों का अध्ययन भी माध्यमिक डेटा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

बलिया जनपद और आस–पास के क्षेत्रों में महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक मुद्दों पर पहले से कई शोध किए गए हैं। इन शोध के परिणामों का उपयोग किया गया हैं ताकि महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समझने में मदद मिल सके।

(ख) डेटा विश्लेषण

(i) गुणात्मक विश्लेषण :– गुणात्मक विष्लेषण वह विष्लेषणात्मक विधि है, जिसमें आंकड़ों की मात्रात्मक जानकारी के बजाय लोगों के अनुभवों, दृष्टिकोणों और सामाजिक घटनाओं के गहरे समझ पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। जब हम महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हैं, तो गुणात्मक विश्लेषण का उपयोग यह समझने के लिए किया जाता है कि महिलाओं के जीवन में सामाजिक न्याय कैसे कार्य करता है, उनके अधिकारों की स्थिति क्या है, और सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिप्रेक्ष्य में उनके अनुभव कैसे हैं।

(a) साक्षात्कार और व्यक्तिगत अनुभवों का विश्लेषण :– साक्षात्कार एक प्रमुख गुणात्मक डेटा संग्रहण तकनीक है, जो शोधकर्ता को महिलाओं के व्यक्तिगत् अनुभवों, दृष्टिकोणों और विचारों को गहरे रूप में समझने में मदद करती है। बलिया जनपद की महिलाओं से गहन साक्षात्कार लेकर हम यह समझ सकते हैं कि वे सामाजिक न्याय सिद्धान्तों के तहत अपने अधिकारों को कैसे देखती हैं और किस प्रकार के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक कारक उनके विकास को प्रभावित करते हैं।

(b) फोकस समूह चर्चा :– फोकस समूह चर्चा के माध्यम से किये जाने वाले विश्लेषण है :–

- सामाजिक न्याया के सिद्धांतों का सामूहिक अनुभव
- समाज में भेदभाव और समानता

(c) सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का विश्लेषण :– बलिया जनपद की सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए, महिलाओं

के विकास पर सामाजिक न्याय के प्रभाव को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है। समाजशास्त्रियों के दृष्टिकोण से यह अध्ययन किया गया है कि किस प्रकार पारंपरिक सामाजिक संरचनाएं, जैसे जातिवाद, लिंग भेदभाव और पारिवारिक रिश्ते, महिलाओं के विकास में रूकावट डालते हैं और सामाजिक न्याय इन चुनौतियों को कैसे दूर कर सकता है।

(d) सरकारी योजनाओं और समाज में उनके प्रभाव का गुणात्मक विश्लेषण :– इस अध्ययन में सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों के प्रभाव का गुणात्मक विश्लेषण भी किया गया है। महिलाओं के लिए विभिन्न योजनाएं और कानून बनाए गए हैं, जैसे महिला सशक्तिकरण योजनाएं, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ और प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना। इन योजनाओं के बारे में महिलाओं के विचार, अनुभव और इनके प्रभाव का मूल्यांकन किया गया है।

(e) कानूनी अधिकारों और सामाजिक न्याय का विश्लेषण :– महिलाओं के कानूनी अधिकारों के बारे में जानकारी और उनका अनुपालन भी इस अध्ययन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। बलिया में महिलाएं कानून और उनके अधिकारों के बारे में कितनी जागरूक हैं ? क्या वे अपनी कानूनी लड़ाई लड़ने के लिए सक्षम हैं ?

(ग) मात्रात्मक विश्लेषण

मात्रात्मक विश्लेषण में आंकड़ों और सांख्यिकीय विधियों का उपयोग कर अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार के विष्लेषण में किसी विशेष समस्या या घटना के पैटर्न और प्रवृत्तियों को समझने के लिए संख्यात्मक डेटा का संग्रहण और विश्लेषण किया जाता है। जब हम महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय क भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन करते हैं, तो मात्रात्मक विश्लेषण का उद्देश्य यह समझना होता है कि सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों के प्रभाव में महिलाओं का सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक विकास कितना हुआ है। बलिया जनपद के संदर्भ में मात्रात्मक विश्लेषण के माध्यम से हम महिलाओं की स्थिति और उनके अधिकारों की स्थिति के बारे में संख्यात्मक डेटा जुटाकर एक स्पष्ट चित्र बना सकते हैं।

(i) सांख्यिकीय विश्लेषण :– सांख्यिकीय विधियाँ जैसे औसत, मानक विचलन, प्रतिशत और अन्य सांख्यिकीय मापदंडों का उपयोग किया गया है। इन मापदंडों से हम महिलाओं के विकास और सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों के प्रभाव का आंकलन कर सकते हैं।

(a) साक्षरता दर :– बलिया जनपद में महिलाओं की साक्षरता दर और पुरूषों की साक्षरता दर का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। इससे यह समझा जा सकता है कि क्या महिलाओं को समान शैक्षिक अवसर मिल रहे हैं या नहीं।

(b) महिला श्रमिका भागीदारी दर :– महिलाओं की श्रमिक भागीदारी दर को मापने से यह पता चलता है कि महिलाएं आर्थिक गतिविधियों में कितनी भागीदार हैं। यह आंकड़ा यह दर्शाने में मदद कर रहा है कि महिलाओं को रोजगार के समान अवसर मिल रहे हैं या नहीं।

(c) महिला हिंसा और भेदभाव का विश्लेषण

(d) बलिया जनपद के संदर्भ में विशेष विश्लेषण :– बलिया में महिलाओं के विकास के संदर्भ में विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया गया है।

- **शिक्षा–**बलिया में महिलाओं की शिक्षाा की स्थिति का अध्ययन किया गया है। जैसे कि साक्षरता दर, उच्च शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी और सरकारी योजनाओं के प्रभाव।
- **स्वास्थ्य–**महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति और सरकारी स्वास्थ्य योजनाओं (जैसे– मातृत्व स्वास्थ्य, परिवार नियोजन) का अध्ययन।
- **आर्थिक स्थिति**–महिलाओं के रोजगार, उद्यमिता और आर्थिक सशक्तिकरण की स्थिति का विश्लेषण।
- **सामाजिक स्थिति**–महिलाओं की सामाजिक स्थिति, उनके खिलाफ होने वाले भेदभाव और सामाजिक न्याय के प्रभावों का अध्ययन।

3. अध्ययन का उद्देश्य–

अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बलिया जनपद में महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय की भूमिका को समझना है।

(क) बलिया जनपद में महिलाओं के विकास की अतीत एवं वर्तमान स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन एवं मूल्यांकन करना :– इसमें महिलाओं के शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक–आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है।

(ख) सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों का महिलाओं के विकास पर प्रभाव समझना :– इसके अंतर्गत यह देखा जाएगा कि महिलाओं को समान अवसर प्राप्त हो रहे हैं या नहीं, और अंतर्गत न्याय के सिद्धान्तों (जैसे– समानता, भागीदार और समावेशन) का कितना पालन हो रहा है।

(ग) सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों का प्रभाव विश्लेषित करना :– बलिया में महिलाओं के विकास के लिए जो सरकारी योजनाएं और कार्यक्रम (जैसे– स्वच्छता अभियान, बालिका शिक्षा, महिला सशक्तिकरण योजना) लागू किए गए हैं, उनका क्या प्रभाव पड़ा है। क्या इन योजनाओं ने महिलाओं के जीवन में कोई सकारात्मक बदलाव लाने में मदद की है ?

(घ) महिलाओं के अधिकारों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण का विश्लेषण – बलिया जनपद के समाज में महिलाओं के अधिकारों को लेकर क्या दृष्टिकोण है और क्या सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों के तहत महिलाओं को उनके अधिकार मिल रहे हैं।

(ड.) महिलाओं के विकास के लिए भविष्य में आवश्यक कदमों का सुझाव देना– इस अध्ययन का उद्देश्य बलिया जनपद में महिलाओं के विकास को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए सुधारात्मक उपायों और योजनाओं की सिफारिश करना है। इसमें महिलाओं के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा के क्षेत्र में सुधार के उपाय दिए गयें है।

4. उपकल्पना

सामाजिक शोध को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने हेतु उपकल्पना का निर्माण अति आवश्यक हो जाता है। उपकल्पना सामाजिक शोध को एक आधार प्रस्तुत करता

है, जिनके द्वारा सामाजिक शोध को एक दिशा तथा वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया जाता है।

i) प्राचीन काल में महिलाओं के लिए न्याय व्यवस्था का अध्ययन करना।

ii) वर्तमान में महिलाओं के प्रति न्याय की व्यवस्था का अध्ययन करना।

iii) राजनीति में अवसर की कमी के कारण को देखना।

iv) इस परिप्रेक्ष्य को देखना की महिला कार्यो को पुरूषों द्वारा किया जा रहा है।

v) महिलाओं के अवसर की कमी और उस अवसर का लाभ पुरूषों द्वारा लिया जाना।

5. अध्ययन का क्षेत्र–

अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश के जनपद बलिया को लिया गया है। जनपद बलिया उत्तर प्रदेश राज्य का सबसे पूर्वी जिला है। जो अपने ऐतिहासिक सांस्कृतिक महत्व के लिए जाना जाता है। गंगा और घाघरा दो मुख्य नदियों के मध्य बसा यह जनपद प्राकृतिक सुंदरता और समृद्धि का प्रतीक है। बलिया का इतिहास बहुत पुराना है। प्राचीन काल में यह क्षेत्र कोसल और मगध साम्राज्य का हिस्सा था। मध्यकाल में मुगल साम्राज्य के अधीन रहा। आधुनिक काल में बलिया ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहाँ के लोगों ने अंग्रेजों के खिलाफ बहादुरी से लड़ाई लड़ी। 1947 में भारत की आजादी के बाद बलिया को एक जिले के रूप में स्थापित किया गया।

भौगोलिक स्थिति :– बलिया जनपद की मानचित्र पर भौगोलिक स्थिति $25^0 33'$ और $26^0 11'$ उत्तरी अक्षांसों और $83^0 38'$ और $84^0 39'$ पूर्वी देशांतरों के बीच स्थित है। यह जनपद उत्तर प्रदेश और बिहार के छ : जनपदों से घिरा हुआ है। पश्चिम में मऊ, दक्षिण पश्चिम में गाजीपुर, दक्षिण में भोजपुर, पूर्व में छपरा, उत्तर में देवरिया और सीवान हैं। जनपद की दो मुख्य नदियां गंगा और घाघरा हैं। गंगा इसकी दक्षिणी सीमा पर बहती है जबकि घाघरा उत्तरी सीमा पर बहती है। दोनों नदियों का संगम

बलिया जनपद में ही होता है। दो नदियों के संगम के कारण भूमि अनियमित आकार की है। यहां के भू–क्षेत्र को दो प्राकृतिक भागों में बांटा जा सकता है। आंतरिक उच्च भूमि और निम्न भूमि क्षेत्र बलिया जनपद में दो प्राकृतिक विभाजन है।

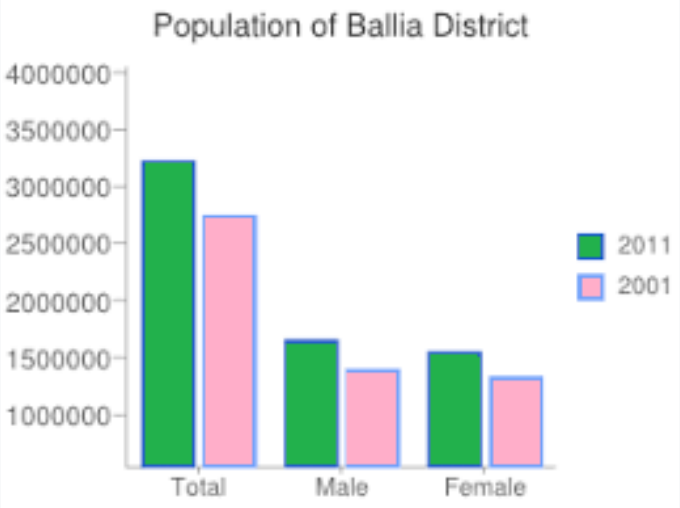
जलवायु :– बलिया की जलवायु उपोष्णकटिबंधीय है। यहां गर्मी, सर्दी, वर्षा तीनों मौसम स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। यहां का औसत वार्षिक तापमान **25.11** सेंटीग्रेड रहता है। गर्मीयों में अधिकतम तापमान **45.48** सेंटीग्रेड रहता है वहीं सर्दियों में तापमान घट कर **4.20** सेंटीग्रेड रहता है। जनपद में वार्षिक वर्षा **101.89** मिलीमीटर होती है। मौसम के परिवर्तन के अनुसार ही यहां कृषि की जाती है। इसलिए यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय कृषि है। यहां मुख्य रूप से चावल, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा जैसे अनाज उगाए जाते हैं। यह जनपद मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है। किसी भी प्रकार के सरकारी गैर–सरकारी उद्योग धन्धों का अभाव होने के कारण इसकी गिनती पिछड़े जिले के रूप में की जाती है। साथ ही सामाजिक पिछड़ेपन के कारण महिलाओं के विकास की गति भी धीमी है। जिले के अंतर्गत महिलाओं के विकास के लिए सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्रयास करने होगें जिससे महिलाओं के साथ न्याय किया जा सके।

प्रशासनिक विभाजन :– जनपद बलिया का क्षेत्रफल 2981 वर्ग किमी0 है। जनपद प्रशासनिक रूप से छ : तहसीलों बलिया, बेलथरा रोड, सिकंदरपुर, रसड़ा, बांसडीह, बैरिया एवं 17 विकास खण्डो मे विभाजित है।

जनसंख्या :– जनपद की जनसंख्या 2011 जनगणना के अनुसार 3239714 है जिसमे जिसमे पुरूष 1672902 तथा महिलाएं 1566872 हैं। वर्तमान में जनपद का लिंगानुपात 937/1000, जो राष्ट्रीय अनुपात 943/1000, से कम है साथ ही 2001 की जनगणना के लिंगानुपात से तुलना की जाय तो पायेंगे की 2001 मे प्रति 1000 पुरुषों पर 953 महिलायें थी आज यह अनुपात घटकर 937/1000 हो गया है। ऐसी ही चिंतित करने वाली स्थिति शिशु लिंगानुपात मे भी देखने को मिल रही है। शिशु

लिंगानुपात को 2011 की जनगणना मे जहाँ 900/1000 है वही 2001 मे 942/1000 थी जो की अत्यंत चिंता की बात है। बलिया जिले के नजदीकी तीन जनपद को देखे तो जिसमें जौनपुर 1024/1000, आजमगढ़ 1019/1000 तथा देवरिया 1017/1000 का लिंगानुपात में अच्छा प्रदर्शन कर रहे है जबकि बलिया जनपद का घटता लिंगानुपात समाज और देश पर महिला विरोधी मानसिकता का समर्थक होना सिद्ध करता है। घटते लिंगानुपात के कारण और समस्या पर ध्यान दे तो पायेंगे कि आज भी पर्दे की आड़ मे भ्रूण हत्याए महिलाओं के प्रति नकारात्मक विचार तथा पुत्र–पुत्री का भेद आज भी बरकरार है।

देश	भारत
राज्य	उत्तर प्रदेश
मुख्यालय	बलिया
तहसील	बलिया, बैरिया, बाँसडीह, बेलथरा रोड, रसड़ा, सिकंदरपुर
क्षेत्रफल	
• **कुल**	2981 किमी^{2} (1,151 वर्गमील)
जनसंख्या (2011)	
• **कुल**	32,39,774
• **घनत्व**	1,100 किमी^{2} (2,800 वर्गमील)



भाषा

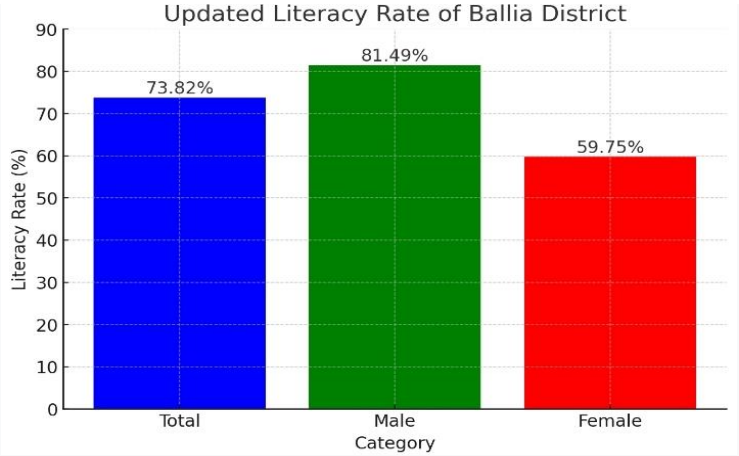
- **प्रचलित** हिन्दी, भोजपुरी

जनसांख्यिकी

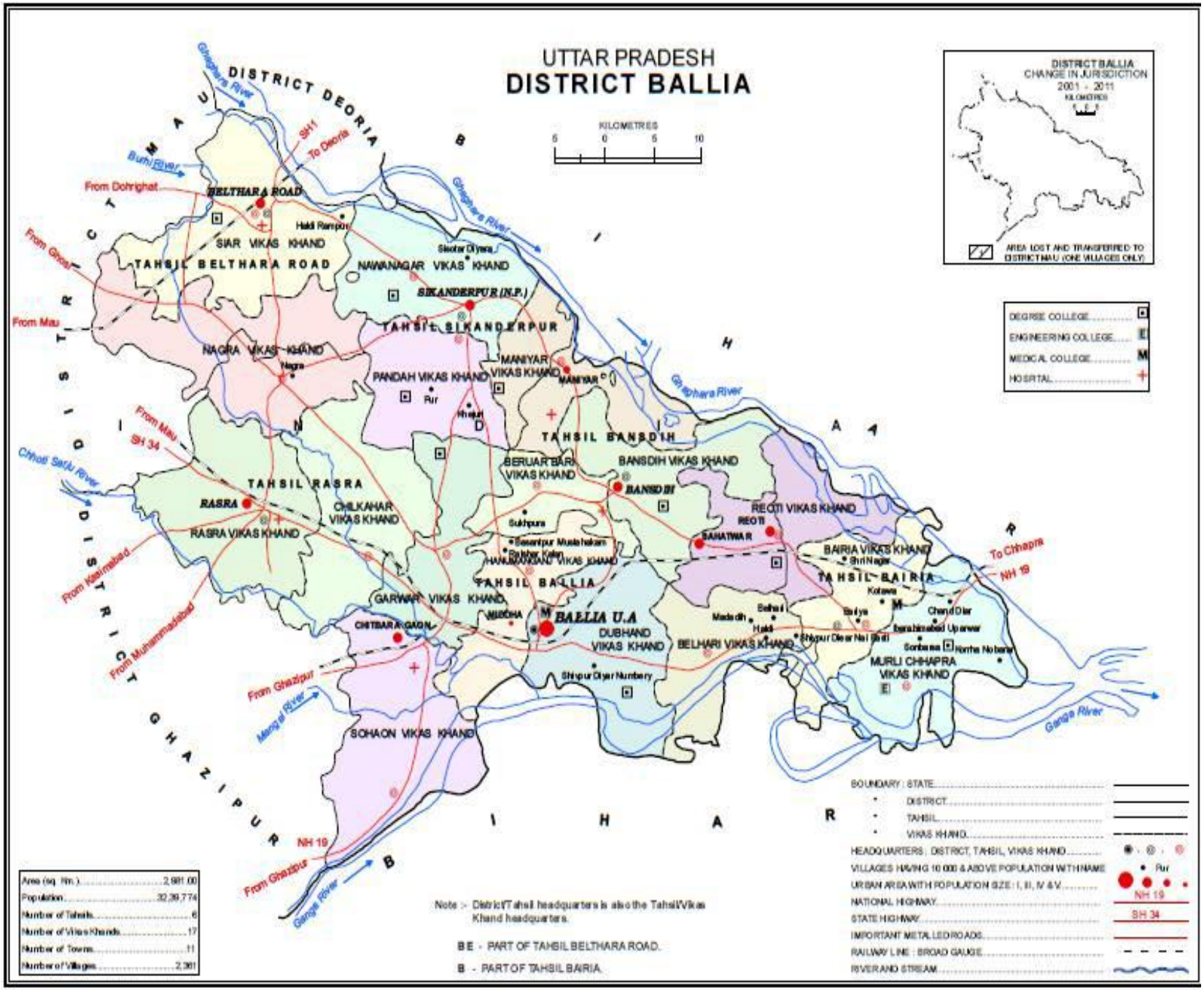
- **साक्षरता** 73.94 %

पुरुष साक्षरता 81.49 %

महिला साक्षरता 59.75 %



- **लिंगानुपात** 933/1000


UTTAR PRADESH
DISTRICT BALLIA
KILOMETRES
5 0 5 10
DISTRICT BALLIA
CHANGE IN JURISDICTION
2001 - 2011
KILOMETRES
AREA LOST AND TRANSFERRED TO DISTRICT MAU (ONE VILLAGES ONLY)
DEGREE COLLEGE
ENGINEERING COLLEGE
MEDICAL COLLEGE
HOSPITAL
DISTRICT DEORIA
DISTRICT MAU
DISTRICT GHAZIPUR
BIHAR
Ghaghara River
Burhi River
To Deoria
From Dohrighat
From Ghazipur
From Mau
From Mau
SH 34
Chhoti Sarju River
From Kasimabad
From Muhammadabad
From Ghazipur
Mangai River
Ganga River
NH 19
From Ghazipur
Ganga River
BELTHARA ROAD
Haldi Rampur
SIAR VIKAS KHAND
TAHSIL BELTHARA ROAD
Sikotar Diyara
NAWANAGAR VIKAS KHAND
SIKANDERPUR (N.P.)
TAHSIL SIKANDERPUR
NAGRA VIKAS KHAND
Nagra
PANDAH VIKAS KHAND
Pur
MANIYAR VIKAS KHAND
MANIYAR
Khejuri
TAHSIL BANSDIH
BERUAR BARI VIKAS KHAND
BANSDIH VIKAS KHAND
BANSDIH
TAHSIL RASRA
RASRA
CHILKAHAR VIKAS KHAND
RASRA VIKAS KHAND
Sukhpura
Basantpur Mustahkam
Bahlar Kalan
HANUMANGANJ VIKAS KHAND
REOTI VIKAS KHAND
REOTI
SAHATWAR
BAIRIA VIKAS KHAND
Shri Nagar
TAHSIL BAIRIA
Kotawa
TAHSIL BALLIA
GARWAR VIKAS KHAND
NAGRA
CHITBARA GAON
BALLIA U.A
DUBHAD VIKAS KHAND
BELHARI VIKAS KHAND
Madadih
Belhari
Haldi
Shripur Diyar Nai Bari
Sohaona
Narha Nobera
MURLI CHHAPRA VIKAS KHAND
Shripur Diyar Nunbery
SOHAON VIKAS KHAND
To Chhapra
NH 19
Note :- District/Tahsil headquarters is also the Tahsil/Vikas Khand headquarters.
BE - PART OF TAHSIL BELTHARA ROAD.
B - PART OF TAHSIL BAIRIA.
Area (sq. Km.) 2,981.00
Population 32,39,774
Number of Tahsils 6
Number of Vikas Khands 17
Number of Towns 11
Number of Villages 2,361
BOUNDARY : STATE
DISTRICT
TAHSIL
VIKAS KHAND
HEADQUARTERS : DISTRICT, TAHSIL, VIKAS KHAND
VILLAGES HAVING 10,000 & ABOVE POPULATION WITH NAME
URBAN AREA WITH POPULATION SIZE : I, II, IV & V
NATIONAL HIGHWAY
STATE HIGHWAY
IMPORTANT METALLED ROADS
RAILWAY LINE : BROAD GAUGE
RIVER AND STREAM
Pur
NH 19
SH 34

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

English Books

- Ambedkar, B. R. (1936). Annihilation of caste. Navayana Publishing.
- Austin, G. (1966). The Indian Constitution: Cornerstone of a nation. Oxford University Press.
- Austin, G. (1999). Working a democratic constitution: The Indian experience. Oxford University Press.
- Beauvoir, S. de. (1949/2011). The second sex (C. Borde & S. Malovany-Chevallier, Trans.). Vintage Books.
- Berger, P. L., & Luckmann, T. (1966). The social construction of reality: A treatise in the sociology of knowledge. Anchor Books.
- Bourdieu, P. (1984). Distinction: A social critique of the judgment of taste (R. Nice, Trans.). Harvard University Press.
- Butler, J. (1990). Gender trouble: Feminism and the subversion of identity. Routledge.
- Chaudhuri, M. (Ed.). (2004). Feminism in India. Zed Books.
- Collins, P. H. (1990). Black feminist thought: Knowledge, consciousness, and the politics of empowerment. Routledge.
- Comte, A. (1853). The positive philosophy of Auguste Comte (H. Martineau, Trans.). Calvin Blanchard.
- Dube, S. C. (1955). Indian village. Cornell University Press.
- Durkheim, É. (1893/1997). The division of labor in society (W. D. Halls, Trans.). Free Press.
- Firestone, S. (1970). The dialectic of sex: The case for feminist revolution. William Morrow.
- Friedan, B. (1963). The feminine mystique. W. W. Norton & Company.
- Geetha, V. (2002). Gender. Stree.

- Giddens, A. (1984). The constitution of society: Outline of the theory of structuration. University of California Press.
- Goffman, E. (1959). The presentation of self in everyday life. Anchor Books.
- Hooks, b. (1981). Ain’t I a woman? Black women and feminism. South End Press.
- John, M. E. (2008). Women’s studies in India: A reader. Penguin Books India.
- Kumar, R. (1993). The history of doing: An illustrated account of movements for women's rights and feminism in India, 1800-1990. Zubaan.
- MacKinnon, C. (1989). Toward a feminist theory of the state. Harvard University Press.
- Marx, K. (1867/1992). Capital: Volume 1 (B. Fowkes, Trans.). Penguin Classics.
- Marx, K., & Engels, F. (1848/2002). The Communist Manifesto (S. Moore, Trans.). Penguin Classics.
- Merton, R. K. (1968). Social theory and social structure. Free Press.
- Mill, J. S. (1859/2003). On liberty (D. Bromwich & G. Kateb, Eds.). Yale University Press.
- Mill, J. S. (1869/2001). The subjection of women. Dover Publications.
- Parsons, T. (1951). The social system. Routledge.
- Plato. (c. 380 BCE/2007). The Republic (D. Lee, Trans.). Penguin Classics.
- Rawls, J. (1971). A theory of justice. Harvard University Press.
- Wollstonecraft, M. (1792/1996). A vindication of the rights of woman (C. H. Poston, Ed.). Yale University Press.

हिंदी पुस्तकें

- आहूजा, राम (2010), भारतीय समाज, जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
- आहूजा, राम (2010), सामाजिक अनुसंधान, जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
- आहूजा, राम (2011), भारतीय सामाजिक व्यवस्था, जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
- आहूजा, राम (1997), भारतीय सामाजिक समस्याएँ, जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
- आहूजा,राम(1997)सोशल प्रॉब्लम्स इन इंडिया – प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा,राम(2000) इंडियन सोसाइटी : ए सोशियोलॉजिकल पेरस्पेक्टिव – प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा,राम(2003) सोशियोलॉजी ऑफ पॉवर्टी– प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा,राम(2006) द पॉलिटिक्स ऑफ सोशल चेंज – प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा,राम (2009) सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन'' – प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा राम (2012) द सोशियोलॉजी ऑफ हेल्थ एंड इलनेस– प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- आहूजा राम (2015) सोशियोलॉजी ऑफ फैमिली'' – प्रकाशक : रॉटन एंड कंपनी, नई दिल्ली
- गुहा, रामचंद्र(2007) इंडिया आफ्टर गांधी–प्रकाशक : पेंगुइन बुक्स
- गुहा, रामचंद्र(2012) पेट्रियट्स एंड पार्टिसंस–प्रकाशक : पेंगुइन बुक्स
- घुरये, जी. एस.(1932) द कास्ट सिस्टम इन इंडिया–प्रकाशक : बॉम्बे यूनिवर्सिटी प्रेस
- घुरये, जी. एस.(1948) द अभॉरिंग कास्ट–प्रकाशक : यूनिवर्सिटी ऑफ

- देसाई, ए. आर.(1948) द सोशल बैकग्राउंड ऑफ इंडियन नेशनलिज्म –प्रकाशक : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
- देसाई, ए. आर.(1975)स्टेट एंड सोसाइटी इन इंडिया – प्रकाशक : पॉपुलरप्रकाशन कैलिफोर्निया प्रेस
- नंदी, आशिस(1983) द इंटिमेट एनेमी–प्रकाशक : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी
- नंदी, आशिस(2002) द इल्यूजन ऑफ पेरमानेंट मेजरिटी – प्रकाशक : हार्पर कॉलिंस
- बासु,अमृता(1995) द ग्लोबल फेमिनिस्ट मूवमेंट – प्रकाशक : वेस
- मजूमदार, डी. एन.(1958) द रेसेस ऑफ इंडिया – प्रकाशक : एशिया पब्लिशिंग हाउस
- मजूमदार, डी. एन.(1966) द एफिनिटी ऑफ इंडियन कल्चर्स – प्रकाशक क्लेरेंडन प्रेस
- मुकर्जी, डी. पी.(1932) समाजशास्त्र मौलिक अवधारणाएँ– प्रकाशक : लखनऊ यूनिवर्सिटी प्रेस
- श्री निवास, एम. एन.(1966) सोशल चेंज इन मॉडर्न इंडिया – प्रकाशक : यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस

पत्रिकाएं

- विज्ञान प्रगति
- कुरूक्षेत्र
- इंडिया टूडे
- आउट लुक
- योजना
- प्रतियोगिता दपर्ण (हिन्दी मासिक)
- क्रानिकल

- विज्ञान शोध पत्रिका–अनुसंधान विज्ञान शोध
- शब्दब्रहमं (समाजशास्त्र की शोध पत्रिका)
- सामाजिक विचारक
- कोविड–19 वैष्विक महामारी

समाचार पत्र

- दैनिक जागरण
- दैनिक भास्कर
- दैनिक ज्योति
- अमर उजाला
- हिन्दुस्तान टाइम्स
- नवभारत टाइम्स
- अमृत विचार
- जनसत्ता

ENGLISH NEWS PAPERS

- Hindustan Times
- Indian Express
- Hindu
- Economic Times

साक्षात्कार अनुसूची

(खण्ड–क)

उत्तरदाताओं की जैव–सामाजिक पृष्ठभूमि

1.	उत्तरदाता का नाम :	
2.	आयु :	
3.	शिक्षा :	
4.	व्यवसाय :	
5.	धर्म :	
6.	आय प्रतिवर्ष रू0 में :	
7.	जमीन (बीघे मे) :	
8.	जाति :	
9.	परिवार का स्वरूप :	
10.	भूमि की स्थिति– एक जगह/दूर–दूर (बिखरे हुए)	
11.	पिता का व्यवसायः	

(खण्ड–ख)

अध्याय–1

महिलाओं के विकास में सामाजिक न्याय के ऐतिहासिक एवं सामाजिक संदर्भ

1.1	क्या आप प्राचीन महिलाओं के सामाजिक स्थिति के बारे में जानते है?	(हाँ/नहीं)
1.2	क्या आप न्याय व्यवस्था के बारे में जानते है?	(हाँ/नहीं)
1.3	क्या महिलाओं के लिए न्याय आवश्यक है?	(हाँ/नहीं)
1.4	क्या आप प्राचीन काल में महिलाओं की स्थिति और न्याय व्यवस्था के विषय में जानते है?	(हाँ/नहीं)
1.5	क्या वैदिक युग में महिलाओं के प्रति न्याय था?	(हाँ/नहीं)

1.6	क्या आप जानते है कि प्राचीन काल में महिलाएं स्वतंत्रता समानता तथा अधिकारों का प्रयोग पुरूषों के समान करती थीं?	(हाँ/नहीं)
	अध्याय–2 **भारतीय संदर्भ में महिलाओं का विकास एवं सामाजिक न्याय**	
2.1	क्या महिलाओं के न्यायपालिका में प्रतिनिधित्व से संतुष्ट है?	(हाँ/नहीं)
2.2	क्या महिलाओं के आरक्षण से आप संतुष्ट है?	(हाँ/नहीं)
2.3	क्या महिलाएं पुरूषों के साथ न्याय और समानता हासिल करने में सफल रही हैं?	(हाँ/नहीं)
2.4	क्या ग्रामीण महिलाओं को लिंग आधारित हिंसा का खतरा है?	(हाँ/नहीं)
2.5	क्या परिवारिक हिंसा पर काबू पाने के लिए आवश्यक उपायों में शामिल होना चाहिए?	(हाँ/नहीं)
2.6	क्या राज्यों की पार्टियों को अपनी सीमा बतानी चाहिए?	(हाँ/नहीं)
2.7	क्या तस्करी और यौन शोषण पर काबू पाने के लिए विशिष्ट निवारक और दण्डात्मक उपाय आवश्यक है?	(हाँ/नहीं)
	अध्याय–3 **सामाजिक न्याय के माध्यम से महिलाओं के विकास की भूमिका**	
3.1	क्या नीति निर्माताओं नागरिक समाज संगठनों और आम जनता को मिलकर कार्य करना होगा?	(हाँ/नहीं)
3.2	क्या अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज में महिलाओं की भागीदारी अभी भी पुरूषों की गति नही पा सकी है?	(हाँ/नहीं)
3.3	क्या भारत में कभी कोई महिला कैबिनेट सचिव बनी?	(हाँ/नहीं)
3.4	क्या भारत एक मजबूत पितृसत्तात्मक समाज है और महिलाओं को प्रायः पुरूषों से हीन माना जाता है?	(हाँ/नहीं)
	अध्याय–4 **भारत में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति**	
4.1	क्या भारतीय समाज ने महिलाओं एवं पुरूषों के लिए अलग–अलग विकास की परिभाषा को स्थापित किया है?	(हाँ/नहीं)

4.2	क्या भारतीय समाज में महिलाओं के अन्दर शिक्षा की अलख जगाने का श्रेय सावित्री बाई फूले को जाना जाता है?	(हाँ / नहीं)
4.3	क्या महिला के साथ न्याय सुनिश्चित करने के लिए भी लड़कियों की शिक्षा एक महत्वपूर्ण कदम है?	(हाँ / नहीं)
अध्याय–5 **सामाजिक न्याय द्वारा महिला विकास के अनुभवजन्य अध्ययन बलिया जिले के विषेश संदर्भ में**		
5.1	क्या सभी समाजों में महिलाओं की प्रस्थिति समस्याओं को जन्म देती है?	(हाँ / नहीं)
5.2	क्या महिलाएं आज भी रोजगार, आय, शिक्षा, स्वास्थ्य सहित कई क्षेत्रों में पुरूषों से पीछे है,	(हाँ / नहीं)
5.3	क्या महिला सशक्तीकरण और लैंगित समानता दोनों में कामयाबी हांसिल की है?	(हाँ / नहीं)
5.4	क्या ग्रामीण महिलाओं को लिंग आधारित हिंसा का खतरा है?	(हाँ / नहीं)
5.5	क्या तस्करी और यौन शोषण पर काबू पाने के लिए विशिष्ट निवारक और दण्डात्मक उपाय आवश्यक है?	(हाँ / नहीं)



KALIKADHAM P.G. COLLEGE

SEWAPURI, VARANASI

(Affiliated to MGKVP, Varanasi)

International Seminar

on

EVALUATION OF POST INDEPENDENCE OF INDIA

(17-18 October, 2022)

Global Partner

World Education Canada, MGI Mauritius, IIF INDIA

Certificate

This is to certify that Mr./Ms./Dr./Prof ..... *Ajay Kumar Vikram,* *Research Scholar* .....From

Department of Sociology PK University (Shivpuri), MP .....has

participated in the seminar and presented a paper entitled.....

स्वतंत्रता के पश्चात भारत मे सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए किए गए प्रयासों का मूल्यांकन

Prof. Anilesh Kumar Singh
Principal

Dr. Himanshu Mishra
Convener

Dr. Deepesh Kumar Shukla
Organizing Secretary


NATIONAL SEMINAR
ON
SELF RELIANT INDIA
PROSPECTS AND CHALLENGES
28 & 29 AUGUST 2022
GINDO DEVI MAHILA MAHAVIDYALAYA BUDAUN
Sponsored by
INDIAN COUNCIL OF SOCIAL SCIENCE RESEARCH (ICSSR)
New Delhi
आज़ादी का अमृत महोत्सव
CERTIFICATE
This is certify that prof. /Dr./Mr./Ms. Ajay Kumar Vikram
from Department Of Sciology PK University (Shivpuri) M.P. attended
the seminar as delegate/research scholar/student.
She/He also presented a paper entitled" आत्मनिर्भर भारत के निर्माण में महिलाओं के योगदान का मुल्यांकन "
in the technical session no. 2022 /Contributed as Chairperson/Co-chairperson/resource person.
Prof. (Dr.) Manmeet Kaur
Chairman / Convenor
Prof. (Dr.) Vandana Sharma
Organising Sceretary

Registration no.21747, 314/13,IV,2013
IIJ Impact Factor : 7.465

South Asia Research and Development Institute
Address : B. 28/70, Manas Mandir, Durgakund, Varanasi- 221005, U.P. (INDIA)
Mobile : 09453025847, 8840080928
www.researchdiscourse.org
E-mail : researchdiscourse2012@gmail.com sardi.vns@gmail.com,

Ref. No. - Memo

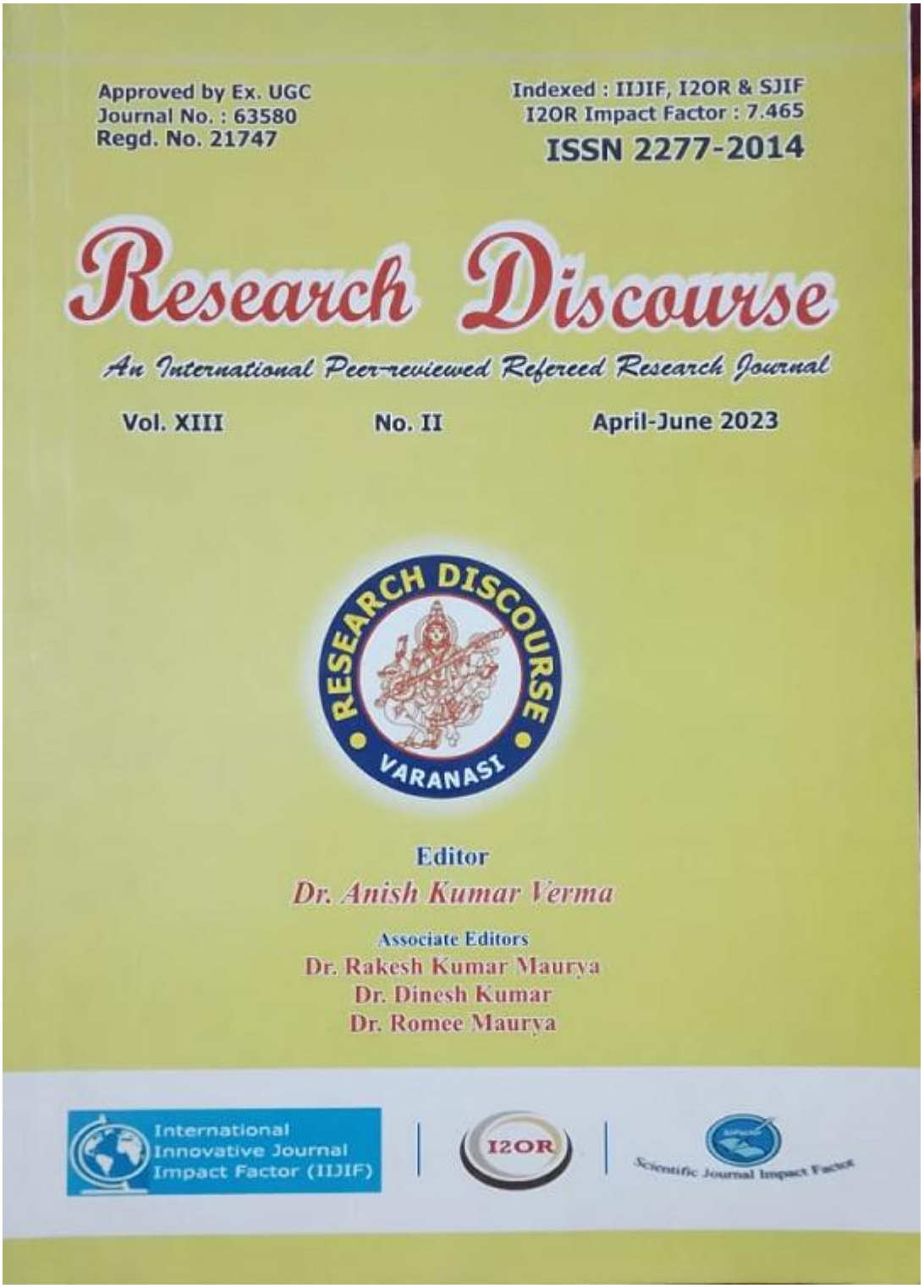
Date 30/06/2023

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certify that the research paper given by अजय कुमार विक्रम, शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म0प्र0 entitled "भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्यायें : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन " had been published in **Research Discours : An International Peer-reviewed Refereed Research Journal**-ISSN-2277-2014,Vol.XIII, No.II, APRIL - JUNE 2023 published.
With best wishes,

You're Sincerely

(Dr. Anish Kumar Verma)
Director / Editor


Approved by Ex. UGC
Journal No. : 63580
Regd. No. 21747
Indexed : IIJIF, I2OR & SJIF
I2OR Impact Factor : 7.465
ISSN 2277-2014
Research Discourse
An International Peer-reviewed Refereed Research Journal
Vol. XIII
No. II
April-June 2023
RESEARCH DISCOURSE
VARANASI
Editor
Dr. Anish Kumar Verma
Associate Editors
Dr. Rakesh Kumar Maurya
Dr. Dinesh Kumar
Dr. Romee Maurya
International Innovative Journal Impact Factor (IIJIF)
I2OR
Scientific Journal Impact Factor

Approved by Ex. UGC
Journal No. : 63580
Regd. No. 21747

Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF
I2OR Impact Factor : 7.465
ISSN 2277-2014

Research Discourse

An International Peer-reviewed Refereed Research Journal

Vol.XIII | No.II | APRIL- JUNE 2023

Editor in Chief
Dr. Anish Kumar Verma

Associate Editors
Dr. Rakesh Kumar Maurya
Dr. Dinesh Kumar
Dr. Romee Maurya

Published by :
South Asia Research & Development Institute
B. 28/70, Manas Mandir, Durgakund, Varanasi-221005, U.P. (INDIA)
Website : www.researchdiscourse.org
E-mail : researchdiscourse2012@gmail.com
Mobile : 09453025847, 8840080928

Research Discourse
An International Peer-reviewed Refereed Research Journal
Vol . XIII, No. II, APRIL- JUNE 2023, (ISSN 2277-2014)

INDEX

भक्तिकालीन सूरदास की कविता में लोक जीवन का विश्लेषणात्मक अध्ययन 1-3
डॉ0 अनामिका सिंह
वैश्विक राजनीति में बदलाव एवं भारत 4-5
आशुतोष सिंह
पर्यावरण एवं सतत् विकास के लिए जीवन शैली पर जी20 उच्च स्तरीय सिद्धान्त 6-8
डॉ0 राजेश कुमार सिंह
भारतीय संदर्भ में निर्धनता की समस्या का विश्लेषण 9-11
डॉ0 राणा प्रताप गौतम
हिन्दू विवाह में सप्तपदी का सिद्धान्त : एक विधिशास्त्रीय विश्लेषण 12-14
डॉ0 संदीप कुमार वर्मा
हिन्दू विधि के अन्तर्गत महिलाओं के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार 15-17
हरविन्द शाक्या एवं प्रो0 (डॉ0) एल.सी. साहू
आधुनिकता : अर्थ व अवधारणा 18-19
डॉ0 अमित कुमार
चीन–पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (CPEC) का भारत पर प्रभाव 20-22
शिवा नन्द यादव
जयशंकर प्रसाद के साहित्य में नारी जागरण का स्वरूप 23-24
निशा यादव एवं डॉ0 रामकरन मिश्र
रघुवीर सहाय की कविताओं में नारी दृष्टि और दृष्टिकोण 25-27
किरन यादव एवं डॉ0 (श्रीमती) सुमन
स्वत्व का पदार्थान्तरत्व : पदार्थतत्त्वनिरूपण के परिप्रेक्ष्य में 28-30
प्रो0 अनीता राजपाल
वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था में बौद्ध शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता 31-32
विकाश कुमार निराला
अब्दुल बिस्मिल्लाह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अनुशीलन 33-36
मुलायम यादव एवं प्रो0 गीता सिंह
भारत–ईरान संबंध एक विवेचनात्मक अध्ययन 37-40
आरती मोदनवाल एवं डॉ0 अनुपमा सिंह
संचार माध्यम का किशोरों के आक्रामक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन 41-43
दीप्ति कुंज एवं डॉ0 सरोज सिंह
समता और समरसता का अध्ययन 44-46
गुरूदास प्रजापति एवं डॉ0 अशुमान सिंह
माध्यमिक विद्यार्थियों में व्यावसायिक आकांक्षा, शैक्षिक उपलब्धि, संवेग एवं रूचियों का विवेचनात्मक अध्ययन 47-49
जनार्दन यादव एवं डॉ0 नीता तिवारी
ए.पी.जे. अब्दुलकलाम का शैक्षिक चिन्तन : एक अध्ययन 50-52
कैप्टन कामेश सिंह
बदलते परिवेश में सोशल मीडिया का विश्लेषणात्मक अध्ययन 53-56
रश्मि सिंह एवं डॉ0 सरोज सिंह
आदिवासी साहित्य के अवधारणात्मक स्वरूप का अध्ययन 57-59
प्रीती
शताब्दी का संदर्भ और पुरस्कृत कहानियों का अनुशीलन 60-62
डॉ0 राजकुमार व्यास
सूरदास का परिचय एवं उनके काव्य में वर्णित संस्कार–संस्कृति : एक अध्ययन
(सूरसागर के विशेष संदर्भ में) 63-65
बृजेश कुमार यादव
महाप्राण निराला की साहित्य साधना एवं राम की शक्ति पूजा : एक विवेचनात्मक अध्ययन 66-68
डॉ0 सुनील कुमार
अन्य पिछड़ा वर्ग की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में परिवर्तन 69-71
मनोज कुमार वर्मा एवं डॉ0 रतन्जय कुमार सिंह
शारीरिक स्वास्थ्य–दक्षता एवं उसके घटकों का अध्ययन 72-74
प्रमोद कुमार सिंह एवं डॉ0 कुन्दन सिंह
पर्यावरण संरक्षण : नीतियाँ एवं कानून – एक अध्ययन 75-77
ऋतु शर्मा

शिक्षकों की शिक्षण दक्षता एवं उसके विविध आयाम : एक अध्ययन 78-80
डॉ० विजय प्रताप श्रीवास्तव
अपभ्रंश कवि स्वयंभू का व्यक्तित्व एवं कृतित्व : एक अध्ययन 81-83
जूली पाठक एवं डॉ० वीरेंद्र कुमार मीणा
मानवतावादी होने का मतलब है निराला 84-86
डॉ० विजय कुमार वर्मा
1857 की क्रान्ति के नायक : धनसिंह कोतवाल 87-88
डॉ० विजय सिंह मावई
सेवा केन्द्रों के पदानुक्रम 89-91
अनीता सोनी
जयप्रकाश कर्दम कृत 'छप्पर' उपन्यास में अभिव्यक्त दलित चेतना 92-94
डॉ० अमित कुमार गुप्ता
सुमित्रानन्दन पन्त कृत 'हार' उपन्यास एक अध्ययन 95-97
डॉ० रामप्रवेश सिंह
प्राचीन भारत में दास प्रथा 98-100
डॉ० महेंद्र प्रकाश द्विवेदी
वैश्वीकरण से सम्बद्ध समस्याएँ 101-102
बलराज कुमार एवं डॉ० राजकुमार मिश्र
भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्यायें : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 103-105
प्रो०(डॉ०) महालक्ष्मी जौहरी एवं अजय कुमार विक्रम
त्रिलोचन की सामाजिक संवेदना 106-107
रामजीलाल मीना

Research Discourse (ISSN 2277-2014) : An International Peer-reviewed Refereed Research Journal, **Pub. by** : SARDI, Vns, U.P. (INDIA)
Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF, **I2OR Impact Factor** : 7.465, Vol. XIII, No. II, APRIL - JUNE 2023, Page No. 103-105

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं सामाजिक समस्यायें : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रो0(डॉ0) महालक्ष्मी जौहरी*
*समाजशास्त्र विभाग, पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म0प्र0
अजय कुमार विक्रम**
**शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग, पी0के0 विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म0प्र0

सारांश : विश्व में मानव अधिकारों के प्रति जागरूकता के विकास के साथ महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के प्रति चिन्ता बढ़ी है। भारत में गुलामी की अवधि में सामाजिक स्थितियाँ क्रमशः बिगड़ती गयी और परतन्त्रता की मानसिकता ने **राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त** की पंक्तियों को इस प्रकार चरितार्थ किया। हम कौन थे, क्या हो गए और क्या होंगे। अभी आओ विचारें, आज मिलकर ये समस्याएं सभी" आजादी के बाद 73 वर्षों की विकास यात्रा में देश में महिलायें उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और सामाजिक मान्यताओं के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन का अंश नगण्य ही हैं। संविधान में महिलाओं को पुरूषों के ही समान ही अधिकार दिये हैं, अत्याचारों से दबी उनकी दयनीय जीवन स्थितियों को रूपान्तरित करने और सामाजिक, आर्थिक तथा विधिक पहचान बनाने के लिए कई कल्याणकारी मान्यताए दी हैं। लेकिन उनकी विकास की स्थिति और दशा आज भी चिन्तनीय है।

मुख्य शब्द : भारतीय समाज, सामाजिक मान्यताएँ, मूल्य, सामाजिक स्थिति, शिक्षा आदि।

प्रस्तावना : किसी भी सभ्य समाज की स्थिति उस समाज में स्त्रियों की दशा देखकर ज्ञात की जा सकती है। महिलाओं की स्थिति में समय–समय पर देश काल के अनुसार परिवर्तन होता रहा है। समय के साथ भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन हुए जिससे महिलाओं की स्थिति में दिन–प्रतिदिन गिरावट आती गई तथा महिलाओं पर इसका अधिक प्रभाव पड़ा क्योंकि सैकड़ों वर्षों की परतन्त्रता के कारण भारतवर्ष विश्व के सबसे गरीब देशों में से एक है। समाज के निर्माण में महिलाओं की भूमिका उतनी ही प्रमुख है जितनी की शरीर को जीवित रखने के लिए जल, वायु, और भोजन है। स्त्रियां ही संतति की परम्परा में मुख्य भूमिका निभाती हैं फिर भी प्राचीन समाज से लेकर आधुनिक कहे जाने वाले समाज में स्त्रियां ही उपेक्षित हो रही है। उन्हें कम से कम सुविधाओं, अधिकारों और उन्नति के अवसरों में रखा जाता है। इसी कारण महिलाओं की परिस्थिति अत्यन्त निचले स्तर पर है। भारतीय समाज की परम्परागत व्यवस्था में महिलायें आजीवन पिता, पति और पुत्र के संरक्षण में जीवन यापन करती रही है। भारतीय संविधान में पुरूषों एवं महिलाओं को समान दर्जा और अधिकार दिये जाने के बाद इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि विकास और सामाजिक स्तर की दृष्टि से महिलायें अभी पुरूषों से काफी पीछे हैं। भारतीय समाज में महिला आज भी कमजोर वर्गो में शामिल हैं। महिला परिवार की आधारशिला है और सामाजिक विकास बहुत कुछ उसी के सदप्रयासों से भी संभव है। जिस समाज की महिलायें उपेक्षा एवं तिरस्कार का शिकार होती है वह समाज कभी प्रगति नहीं कर सकता। समाज में महिलाओं के ऊपर सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक, व्यवसायिक एवं अन्य अनेक ऐसी निर्योग्यताओं लाद दी गई है जिसके कारण उन्हें जीवन में आगे बढ़ने एवं व्यक्तित्व का समुचित विकास करने का अवसर नही मिलता। ये निर्योग्यताओं उनके लिए बहुत बड़ा चुनौतियाँ एवं समस्याएँ बनकर उभरी है। इन निर्योग्यताओं के कारण कार्य में दक्षता, योग्यता एवं कुशलता होने के बावजूद ये महिलाएं न तो सार्वजनिक क्षेत्र में अपना योगदान कर सकती थी और न शिक्षा प्राप्त कर सकती थी, न उच्च संस्थानों में नौकरी कर सकती थी और न किसी प्रकार का धार्मिक कार्य। महिलाओं के लिए उच्च शिक्षा के दरवाजे पूर्णतया बन्द थे जिससे उन्हें विवशतापूर्ण जिन्दगी घर की चहारदीवारी के अन्दर व्यतीत करनी पड़ती थी। इन्हें पढ़–लिखकर नौकरी करने के अधिकारों से वंचित रखा गया था। महिलाओं की बदतर स्थिति के लिए मूलरूप से ही पुरानी सामाजिक परम्परायें, मूल्य तथा रीति–रिवाज जिम्मेदार थे जो इस दृष्टिकोण की ओर पुष्टि करते हैं। अतः इस सोच में बदलाव लाना महिला विकास की सबसे बड़ी चुनौती है। महिलाओं की शिक्षा पर बल देते हुए विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग(1948)के ये ऐतिहासिक शब्द भी ध्यान देने योग्य है, जो निम्न है– "शिक्षित स्त्री के बिना पुरूष शिक्षित हो ही नही सकता। यदि पुरूषों और स्त्रियों में से केवल किसी एक के लिए सामान्य शिक्षा का प्रावधान करना हो तो यह अवसर स्त्रियों को दिया जाना चाहिए क्योंकि यह शिक्षा स्वयंमेव अगली पीढ़ी को प्राप्त हो जायेगी।"

सन्1963 के वनस्थली विद्यापीठ में भाषण देते हुए **पं0 जवाहर लाल नेहरू** ने भी इसी तथ्य को दोहराया था कि लड़के की शिक्षा केवल एक व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु एक लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है। उपरोक्त विवेचन से महिलायें के लिए शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व स्पष्ट होता है लेकिन स्त्री शिक्षा इतनी आवश्यक होते हुए भी उपेक्षित है इसलिए महिलाओं के सामने यह एक जटिल समस्या एवं चुनौती के रूप में उभरकर सामने आयी है। शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सभी दृष्टियों से महिलायें अभी भी पिछड़ी हुई है। कानूनी और संवैधानिक दृष्टि से अनेक अधिकार प्राप्त होने और योजनागत विकास कार्यक्रमों के प्रावधानों के बावजूद महिलाओं की परिस्थिति शोचनीय ही है। स्वामी विवेकानन्द के कथन के अनुसार कोई राष्ट्र तब तक अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता जब तक कि उसका प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के विकास में भागीदार नहीं बनते। इस प्रकार स्त्री एक अच्छे समाज और अच्छे राष्ट्र का स्रोत होती है। विद्या से ही व्यक्ति संकीर्ण मानसिकता और रूढ़िवादिता की जंजीरों को तोड़ सकता है। यदि स्त्री शिक्षित है तो पूरा परिवार शिक्षित होता है। शिक्षा ही हमें सामाजिक भेदभावों और ऊँच–नीच की भावनाओं से उबारने का काम करती है। इसलिए स्त्रियों का शिक्षित होना बहुत आवश्यक हो जाता है क्योंकि उसके विचार ही उसके बच्चे होते हैं। अगर वह अपने बच्चों को इन रूढ़िगत विचारों से दूर रखें और यह बताये कि कोई छोटा या बड़ा नहीं होता है, व्यक्ति के कार्य और विचार ही उसे छोटा या बड़ा बनाते हैं, यदि माता अपने बच्चों में धर्म–भेद या जाति भेद रहित विचारों का बीजारोपण करे तो आगे चलकर वह एक ऐसा वृक्ष बनेगा जिसमें सामाजिक समरसता से पूर्ण फल लगेंगे जो बिना किसी भेदभाव के छाया भी प्रदान करेगें। इस प्रकार एक शिक्षित स्त्री एक शिक्षित देश को जन्म देती है। यदि हम इतिहास

पर नजर डालें तो हमें ऐसी बहुत सी विदुशी स्त्रियों के नाम मिल जायेगें जिन्होंने अपने विद्धता का लोहा मनवाया था और इस प्रकार इतिहास में अपना नाम अमर करवा लिया। ऐसी स्त्रियों में अपाला, घोषा, गोपा, सावित्री, मैत्रेयी और गार्गी जैसी अन्य अनेक स्त्रियों के नाम मिलते हैं जिन्होंने विद्यार्जन कर स्त्रियों के अस्तित्व को गौरव प्रदान किया था। उनकी शक्ति भी उनकी विद्या थी लेकिन बाद के कालों में उनसे यह शक्ति छीनी जाने लगी उन्हें विद्या से रहित कर दिया गया और यही उनकी स्थिति की अवनति का कारण बना। देखा जाए तो वो आज भी वो स्थिति प्राप्त नहीं कर पाई हैं। हालांकि कुछ हद तक उसने अपने को उबारा है, लेकिन अभी भी पूर्णरूपेण उन्नति होना बाकी है। सामाजिक कुरीतियों का उसे शिकार बनाया गया। छोटी उम्र में विवाह प्रारम्भ हुए, फलस्वरूप उसका व्यक्तित्व कुंठित हो गया। बाल विवाह के कारण शिक्षा उससे छिन गई। पुरूष की संकीर्ण मानसिकता, स्त्री को शिक्षा से वंचित होना पड़ा जिसके कारण वह पर्दा–प्रथा, सती प्रथा, नियोग–प्रथा आदि अनके बुराइयों की बेड़ियां काटने में अस्क्षम हो गई क्योंकि उसका हथियार 'शिक्षा' उससे छीना जा चुका था। शिक्षा जो कि सिर्फ सर्वांगीण विकास ही नहीं करती बल्कि हमें समाज में व्याप्त बुराईयों से लड़ने की शक्ति भी प्रदान करती है, वो हमें अपने अधिकारों के प्रति सचेत करती है।

साहित्य अवलोकन : अनेक समाजशास्त्रियों जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों ने स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का अनुभवात्मक अध्ययन किया है तथा अपने विश्लेषण के द्वारा महिलाओं की सामाजिक, व्यवसायिक गतिशीलता तथा पुरूषों के समान शैक्षणिक व सामाजिक अधिकार, परिवार में निर्णय निर्धारक भूमिका तथा प्रदत्त परिस्थिति को नकारकर अर्जित परिस्थिति द्वारा अपनी क्षमता के नये आयामों को उद्घाटित करना के संदर्भ में विभिन्न मत प्रस्तुत किये गये हैं। यहाँ शोध आलेख से सम्बन्धित विभिन्न समाजशास्त्रियों, जनसंख्याविदों तथा शिक्षाविदों के साहित्य का अवलोकन किया गया है जिसमें इनके अध्ययन के निष्कर्षों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

गीनाक्षी मुखर्जी(1988) का मत है कि पुरूषों से स्वतंत्र स्त्रियों को गुलाम बनाने वाली संस्था नहीं है। समाज की प्रकृति ही ऐसी है कि जिसमें स्त्रियों के साथ अनादर रूप में व्यवहार किया जाता है।

मार्गेट कारमैक (1779) ने विश्वविद्यालय की 500 छात्राओं के अध्ययन के दौरान पाया कि लड़कियां कॉलेज जाना और लड़कों से मित्रता करना चाहती थीं लेकिन वे ये भी चाहती थीं कि उनका विवाह उनके माता–पिता तय करें। वे अपनी नव स्वतन्त्रता का भोग भी करना चाहती है लेकिन साथ ही साथ पुराने मूल्यों को भी बनाये रखना चाहती थी।

गोविन्द केलकर (1981) ने अपने अध्ययन में पाया कि हरित क्रान्ति वाले क्षेत्र पंजाब में स्त्रियों को दिन–भर कामकाज के बाद पति की सेवा भी करनी पड़ती है। स्त्री द्वारा उलटकर जवाब देना, ठीक तरह से भोजन न परोसना या कभी–कभी पारिवारिक मामलों में बोलना उनका अपराध माना जाता है और इसके लिए उनकी पिटाई भी होती है। कॉपर ने कानून की नजर में महिलाओं की स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। इस अध्ययन के आधार पर महिलाओं की संवैधानिक स्थिति, प्रभुता, अधिकार, सम्पन्नता, कानूनी शक्ति इत्यादि को समझा जा सकता है। वस्तुतः महिलाओं की परिस्थिति को उच्च बनाने की दृष्टि से इनके पक्ष में कानून निर्मित किये गये हैं किन्तु भारतवर्ष में पुरूष प्रधान समाज होने के कारण भारतीय महिलाओं का एक प्रमुख एवं विचारणीय भाग कानून के प्रावधान से अनभिज्ञ रह गया है। फिर भी भारतीय समाज की उच्च वर्गीय महिलाओं ने इसका लाभ उठाकर अपनी सामाजिक परिस्थिति को उच्च किया है।

मिश्र (1981) ने अपने अध्ययन के द्वारा यह बताने का प्रयास किया है कि जब तक सामाजिक सांस्कृतिक बाधायें समाप्त नहीं होगी तब तक भारतीय महिलाओं का सर्वांगीण विकास संभवन नहीं है। महिलाओं के प्रति पुरूषों की दृष्टि में परिवर्तन आवश्यक है। आज भी बहुत से ऐसे ग्रामीणजन है जो वासनात्मक निषेध के कारण अपनी बालिकाओं को घर के बाहर नहीं जाने देते और बाल्यावस्था में ही विवाह कर देते हैं। वस्तुतः आज भी महिलायें पुरूष की नजर में महिला और मात्र महिला है, इसके अतिरिक्त, ये और कुछ नहीं है, और पुरूषों का वासनात्मक लक्ष्य बनी हुई है। इस दृष्टि में परिवर्तन अपरिहार्य है।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी अपने रामचरित मानस के द्वारा इस तथ्य की पुष्टि की है। महिलाओं में अद्वितीय क्षमता पायी जाती है। इन्होंने भक्ति, साहित्य, राजनीति, शिक्षा, विज्ञान, तकनीक, चिकित्सा, सेना इत्यादि सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में जाकर अपनी अद्भुत प्रतिभा का अनोखा परिचय दिया है। आज महिलाओं को पहचानने की आवश्यकता है। ये सब कुछ कर सकती है। एक ओर बहुत अच्छी व्यवस्था कर सकती हैं तो दूसरी ओर समाज में क्रान्ति भी ला सकती है।

भारतीय महिलाओं की भूमिका के विभिन्न स्वरूप : विवाह मूलक परिवार में स्त्री की भिन्न–भिन्न परिस्थितियां होती हैं। उदाहरण के लिए बेटी, पत्नी, बहू, माँ, इत्यादि। इन परिस्थितियों से सम्बन्धित भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है एवं प्रत्येक भूमिका निर्वाह के समय उनसे समर्पण की भावना की अपेक्षा की जाती है। वहां भी उसे निम्न परिस्थिति प्राप्त होती है एवं उनका कोई पृथक व स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। इस प्रकार स्त्रियों की परिस्थितियों में उतार–चढ़ाव पाया गया है परन्तु यह परिस्थिति सम्बन्धी उतार–चढ़ाव अचानक परिलक्षित नहीं हुआ अपितु यह एक क्रमिक प्रक्रिया का परिणाम है। समाज में जैसे–जैसे परिवर्तन व बदलाव आते गये। वैसे–वैसे स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन होते गये। जब व्यक्ति की भूमिकायें अनेक हो जाती हैं तो उन भूमिकाओं में कभी–कभी संघर्ष की स्थिति आ जाती है। व्यक्ति अपनी सभी भूमिकाओं को पूर्ण और यथोचित निर्वाह नहीं कर पाता। जिन महिलाओं को घर के भीतर और बाहर रहना पड़ता है अपने दायित्वों का पूर्णरूपेण पालन नहीं कर पाती है। ग्रामीण समाज की शिक्षित लड़कियों के लिए उचित वर नहीं मिल पाता, जो मिलता भी है उसकी मांग इतनी अधिक होती है कि लड़की के पिता उन मांगों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं। वैवाहिक समस्या एक ज्वलंत समस्या है। आज की शिक्षित महिलायें जिसका शिकार हैं। इससे बड़ी कोई विडम्बना नहीं हो सकती कि पुरूष समाज ने समाज की इस आधी दुनिया की अत्याचारों की क्रूर जंजीरों में जकड़ने में कोई कसर नहीं छोड़ी है उसको कुचलने, मसलने और उसके उपभोग से भिन्न–भिन्न अस्तित्व को स्वीकारने के संदर्भ में पुरूषों को सदैव दोहरा मानदंड रहा है।

सन्दर्भ :

1. मुखर्जी, मीनाक्षी, 1884, रियलिटी एण्ड रियलिज्म इंडियन वूमन ऐज प्रोटेगनिस्ट्स इन फोर नाइटीथ सेंचुरी नॉवेल्स, इकोनामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली
2. आहूजा, राम, 2002, भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. केलकर, गोविन्द, 1881, इम्पैक्ट ऑफ ग्रीन रिवोल्यूशन आन वीमेन्स वर्क पार्टीसिपेशन एण्ड सैक्स, सेन्टर फॉर पोलिसी रिसर्च, नई दिल्ली,
4. कृष्णराज, मैत्रेयी, 1971, रिपोर्ट आन वर्किंग वीमेन साइटिस्ट्स इन बाम्बे, एस0एन0डी0टी0वीमेन यूनिवर्सिटी रिसर्च यूनिट आन वीमने स्टडीज, बम्बई
5. माथुर, दीपा, 1992, वूमेन, फैमिली एण्ड वर्क, रावत पब्लिकेशन, जयपुर
6. श्रीवास्तव, सुधीर, 1985, वूमेन, इमपावरमेंट, टाटा मैग्रोहिल प्रकाशन, नई दिल्ली
7. व्यास, मीनाक्षी, 2002, मिडिल एण्ड लोअर क्लास वर्किंग वूमेन, सीम्या पब्लिकेशन, मुम्बई
8. सिंह, सोरन, 1997, सिडियूल कास्ट इन इण्डिया एण्ड डाईमेन्शन ऑफ सोशल चेंज, ज्ञान पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
9. कुमार, नृपेन्द्र, 1982, पार्टीसीपेशम ऑफ वूमेन इन सोसाइटी, एशिया पब्लिकेशन हाउस, मुम्बई
10. कपूर, प्रतिमा, 1986, द स्टडी आफ एडजस्टमेंट ऑफ वर्किंग वूमेन इन इंडिया, आगरा पब्लिकेशन
11. अलटेकर, ए0एस0, द पोजिशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी

ISSN- 2394 - 2207
Impact Factor : 5.01

Unmesh

An International Half Yearly Peer Reviewed Refereed Research Journal
(Art & Humanities)

Published by : Jan Seva Evam Shodh Shiksha Sansthan, Pratapgarh

Ref. No Vol. X, No. I, November, 2023-April 2024 **Date- 30-06-2024**

CERTIFICATE OF PUBLICATION

This is to certify that the research paper given by अजय कुमार विक्रम, शोध छात्र, पी०के० विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म०प्र० entitled "भारतीय महिलाओं का शोषण : वैदिक काल से अब तक" had been published in **Unmesh : An International Half Yearly Peer Reviewed Refereed Research Journal(Art & Humanities)**-ISSN-2394-2207, Vol. X, No. I, November, 2023-April 2024 .

With best wishes,

You're sincerely

Shivendra

(Shivendra Kumar Maurya)
Editor

Reg. No. : N-1316/2014-15

ISSN 2394-2207
November, 2023 - April 2024
Vol. X, No. I
IIJ Impact Factor : 5.01

उन्मेष

Unmesh

An International Half Yearly
Peer Reviewed Refereed Research Journal
(Arts & Humanities)

प्रधान सम्पादक
डॉ० राधेश्याम मौर्य

सम्पादक
डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य

प्रकाशक : जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़, उ०प्र०

Reg. No. : N-1316/2014-15

IIJ Impact Factor : 5.01
ISSN : 2394-2207

उन्मेष
Unmesh

An International Half Yearly Peer Reviewed Refereed Research Journal (Arts & Humanities)

Vol. : X No. I November, 2023-April, 2024

प्रधान सम्पादक
डॉ० राधेश्याम मौर्य

सम्पादक
डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक
डॉ० मनोहर लाल
डॉ० मोती लाल
डॉ० अखिलेश कुमार
डॉ० रामचन्द्र रजक

प्रकाशक
जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. 1
November, 2023-April, 2024

Index

- हबीब तनवीर के नाटकों में लोक का समन्वय 1–3
  डॉ० ऋतु रानी
- बुद्ध निर्वाण का संत कबीर दर्शन में स्वरूप 4–6
  अजय कुमार सिंह
- सद्धर्म के प्रचार में बुद्धकालीन उपासिकाओं का योगदान 7–10
  डॉ० मोनिका रानी
- अशोक कालीन संस्कृति की एक झलक 11–12
  डॉ० अरविन्द त्रिपाठी
- डॉ० अम्बेडकर एवं गाँधी के विचारों की प्रासंगिकता : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 13–15
  डॉ० बबलु दास
- भारतीय सिनेमा और महिला सशक्तिकरण 16–19
  डॉ० धीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
- महिलाओं के लिए आत्मनिर्भर योजनाएँ : आर्थिक चुनौतियों का समाधान 20–24
  प्राची आदित्य
- शिवपूजन सहाय के कतित्व में लोक–जीवन 25–28
  उमेश सिंह
- हरिवंश राय बच्चन की कविताओं में मानवीय संवेदना 29–31
  सोनी त्रिपाठी
- महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा के संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन 32–33
  सुमित्रा कुमारी
- बाजारवाद के तलछट को काटती–छाँटती हुई कविताएँ 34–37
  प्रो० चंद्रकांत सिंह
- प्रेमचंद के उपन्यासों में राष्ट्रीय चेतना 38–41
  डॉ० अशोक कुमार सिन्हा
- राहुल सांकृत्यायन के उपन्यासों में बौद्धधर्म के आयाम 42–45
  प्रशांत कुमार
- बालिका शिक्षा को राह प्रदान करते कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय 46–50
  डॉ० अरविंद कुमार
- 'एक पति के नोट्स' और 'देवीशंकर अवस्थी' की आलोचना का विवेक 51–53
  उदय शंकर
- बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में दलित जीवन का हिन्दी साहित्य में चित्रण 54–55
  डॉ० संतोष कुमार
- काशीनाथ सिंह की कहानियाँ : एक विहंगम दृष्टि 56–59
  संजय सिंह

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. 1
November, 2023-April, 2024

- संस्कृत रूपकों में निरूपित भारतीय संस्कृति के संरक्षण में निम्नवर्गीय पात्रों की भूमिका 60–61
  डॉ0 सीताराम
- साहित्य में रस की महत्ता 62–65
  निधि जैन
- रविदास के काव्य में सामाजिक चेतना का प्रवाह 66–68
  डॉ0 प्रेम चन्द भार्गव
- शिवमूर्ति की रचनाओं में स्त्री की धार्मिक स्थिति 69–72
  रिंकी कुमारी
- इक्कीसवी सदी के दूसरे दशक में प्रकाशित प्रमुख आत्मकथाओं का परिचयात्मक अध्ययन 73–75
  कुमार सत्यम
- मीराँबाई के पदों का संगीतात्मक विवेचन 76–80
  डॉ0 संगीता घोष
- मुक्तिबोध की कविताओं में संघर्ष का सौन्दर्य 81–84
  डॉ0 अभिलाषा शर्मा
- अधिकारों के लिए युद्धरत भारतीय महिलाएँ–दशा और दिशा 85–87
  डॉ0 उर्मिला कुमारी
- हिन्दी साहित्य में नारी अस्मिता : एक अध्ययन 88–90
  डॉ0 वर्षा रानी, निशा
- मीराबाई की भक्ति भावना : एक साधना 91–94
  डॉ0 ममता कुमारी
- एनसीसी प्रमाण पत्र : महत्व और लाभ 95–97
  लेफ्टिनेंट (डॉ0) कौशलेन्द्र वर्मा
- भारतीय महिलाओं के अधिकार–संरक्षण हेतु डॉ. भीमराव अंबेडकर का योगदान 98–102
  रमेश कुमार भारती
- आमजन का राष्ट्रवाद : वर्तमान भारतीय परिदृश्य में 103–104
  रमेश कुमार
- भूमंडलीकरण की चुनौतियां और इक्कीसवीं शताब्दी की हिंदी कहानियां 105–108
  जीतेश्वरी, डॉ0 कैलाश शर्मा
- अलका सरावगी की कहानियों में चित्रीत बदलता जीवन–मूल्य 109–111
  पूजा
- मिथिला पुनर्जागरण के एकांत साधक : पंडित रामनंदन मिश्र 112–117
  सत्यनारायण प्रसाद यादव
- सतत एवं क्रमिक विकास : सामाजिक न्याय के साथ ग्रामीण विकास की पृष्ठभूमि पर 118–119
  विनय कुमार सिंह यादव
- पंचायतीराज व्यवस्था एवं महिलाएं : एक समाजशास्त्रीय विमर्श 120–123
  अवन्तिका, प्रो0 (डॉ.) माधुरी वर्मा

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. I
November, 2023-April, 2024

- डॉ0 भीमराव अम्बेडकर और शूद्रों का अस्तित्व 124–127
  डॉ0 अपर्णा
- काव्य की प्रथम शक्ति का माहात्म्य एवं स्थान 128–131
  डॉ0 सतरुद्र प्रकाश
- जीवन के विविध पक्षों के आलोक में शैलेश मटियानी का वैचारिक विमर्श 132–134
  डॉ0 आशा हर्बोला, प्रियंका बिष्ट
- भारतीय महिलाओं का शोषण : वैदिक काल से अब तक 135–136
  प्रो0 (डॉ0) महालक्ष्मी जौहरी, अजय कुमार विक्रम
- पउमचरिउ और रामचरितमानस की काव्य–भाषा का तुलनात्मक अध्ययन 137–140
  डॉ0 बीरेन्द्र कुमार शर्मा
- वैश्वीकरण को प्रोत्साहन देने में क्षेत्रीय संगठन की भूमिका 141–144
  बलराज कुमार, डॉ0 राजकुमार मिश्र
- श्रीराम शर्मा आचार्य के शिक्षा के तत्व : एक शैक्षिक अध्ययन 145–147
  रमाशंकर, डॉ0 सन्तोष कुमार सिंह
- भारत में जल संरक्षण की प्राचीन परम्परागत विधियाँ : एक भौगोलिक अध्ययन 148–151
  डॉ0 अखिलेन्द्र कुमार मिश्र

  भारतीय ज्ञान परंपरा में राष्ट्रीय शिक्षा नीति की व्यवस्थागत समस्याएँ व समाधान 152–154
  प्रो0 (डॉ0) भवभूति मिश्र
- ज्ञान दैत्यों की रचना है 155–158
  अमर सिंह
- संताल जनजातीय जीवन पद्धति और वैश्विक महामारी कोरोना 159–161
  डॉ0 धनेश्वर मांझी
- पालि साहित्य के पुनरूद्धारक : डॉ0 भरत सिंह उपाध्याय 162–165
  पुष्पाजंली कुमारी
- सचेतन कहानीकारों की कहानियों में नारी 166–168
  विरेन्द्र यादव
- रंगमंच और अभिनय पद्धति : एक अध्ययन 169–171
  जय प्रकाश तिवारी, डॉ0 आदीश कुमार वर्मा, संकेत कुमार
- हाशिए का समाज और मानवाधिकार 172–175
  सीमा यादव
- कबीर की प्रासंगिकता 176–178
  प्रो0 ज्योति किरण
- धूमिल का काव्य : आम आदमी की हित–चिंता का जीवंत आख्यान 179–182
  मृगेन्द्र कुमार

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

Impact Factor : 5.01
Vol. : X, No. I,
November, 2023-April, 2024
Pg. No. 135-136

भारतीय महिलाओं का शोषण : वैदिक काल से अब तक

प्रो० (डॉ०) महालक्ष्मी जौहरी*, अजय कुमार विक्रम**

*समाजशास्त्र विभाग, पी०के० विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म०प्र०

**शोधछात्र, पी०के० विश्वविद्यालय, शिवकुटी, म०प्र०

सारांश : समाज की यह बात यथार्थ रूप से बेमानी लगती है जिस समाज में नारी को देवी का ओहदा हासिल है वहीं नारी के साथ अत्याचारों की लम्बी कतार भी खड़ी दिखाई देती है। ये बात सही है कि पूर्वकाल में नारी का आधिपत्य था। नारी ही पुरूषों, बच्चों और बुजुर्गों का पालन–पोषण करती रही है। बच्चों की पहचान भी ममता के नाम से होती है। समय के परिवर्तन के साथ पुरूषों ने नारी के अधिकारों का दोहन कर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। अपने अधिकार छिन जाने के बाद नारी के इतिहास में तरह–तरह के उतार–चढ़ाव देखने को मिलते हैं।

मुख्य शब्द : वैदिक काल, उपनयन संस्कार, भारतीय संस्कृति, अभिजात्य वर्ग, पुरूषवादी समाज आदि।

वैदिक काल में समाज कहने पर यह है महिलाओं की स्थिति व भूमिका समाज में काफी ऊँची और पुरूषों के अधिकारों के समान दिखती है। और उन्हें अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। वे धार्मिक क्रियाओं में भाग ही नही लेती थीं बल्कि धार्मिक क्रियाएं कराने वाले पुरोहितों और ऋषियों का दर्जा भी उन्हें भी प्राप्त था। उस समय महिलाएँ धर्म शास्त्रार्थ इत्यादि में पुरूषों की तरह ही भाग लेती थी। उन्हें "गृहणी, अर्धागिंनी कहकर सम्बोधित किया जाता था। पुत्र–पुत्री के पालन–पोषण में कोई भेदभाव नहीं किया जाता था।" उपनयन संस्कार और शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी स्त्रियों को पुरूषों की भांति समान रूप से प्राप्त था। तत्कालीन युग में महिलाएँ सार्वजनिक जीवन में भाग लेती थी।" अस्पृश्यता, सती प्रथा, पर्दा प्रथा तथा बाल विवाह जैसी कुप्रथा का प्रचलन भी इस युग में नहीं था।" महिलाओं की शादी एक परिपक्व उम्र में होती थी, संभवतः उनको अपना जीवन साथी के चुनाव का पूर्ण अधिकार प्राप्त था यद्यपि विधवा पुनर्विवाह प्रचलित नहीं था लेकिन विधवाओं के साथ सम्मानजनक व्यवहार किया जाता था और उन्हें अपने पति की सम्पति पर अधिकार प्राप्त था। यूं कहा जा सकता है कि स्त्रियाँ, किसी भी क्षेत्र में पुरूषों से पीछे नहीं थी। भारतीय समाज के वैदिक काल में नारी को पुरूषों के समाज में शिक्षा, धर्म, राजनीति और सम्पति के अधिकार एवं सभी मामलों में समानाधिकार प्राप्त थे।" इसके बाद धीरे–धीरे नारी को प्रदत्त अधिकारों में ह्रास बढ़ता गया और नारी को प्रदान अधिकारों, शिक्षा, स्वतंन्त्रता, धार्मिक अनुष्ठानों आदि से वंचित किया जाने लगा जिससे वह पूर्ण रूप से पुरूषों पर आश्रित हो गयी। वही मनु ने कहा कि "नारी का बचपन में पिता के अधीन, यौवनावस्था में पति के आधिपत्य में तथा पति की मृत्यु के उपरान्त पुत्र के संरक्षण में रहना चाहिए। इसके बाद नारी की बची–खुची आजादी का भी हनन हो गया और नारी का स्तर दोयम दर्जे की ओर बढ़ता चला गया। भारतीय इतिहास का वास्तविक काल वैदिक सभ्यता से जुड़ा हुआ है। "चतुर्वेदों में ऋग्वेद को सबसे अधिक प्राचीन वेद माना है इसके बाद यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद को माना जाता है। ऋग्वेद में ब्रम्हज्ञानी पुरूषों के साथ–साथ ब्रम्हवादिनी महिलाओं का भी नाम आता है। इनमें विश्वधारा, लोपा मुद्रा, घोषा, इन्द्राणी, देवयानी आदि प्रमुख महिलाएँ हैं। एक तरफ जहाँ भारतीय संस्कृति में नारी को सदा ऊँचा स्थान मिला है। नारी को मर्यादा के क्षेत्र में पुरूषों से अधिक श्रेष्ठ माना जाता है तथा स्त्री और श्री में कोई भेद नहीं किया गया है।" वही उसी नारी के साथ अत्याचारों का सिलसिला शुरू हो चुका था। नारी के ऊपर तरह–तरह की बंदिशे जैसे पर्दे में रहना, पुरूषों की आज्ञा का पालन करना, प्रति उत्तर न करना, चारदीवारी में रहना आदि। इन सब बंदिशों ने नारी को नारी से भोग्या के रूप में परिवर्तित कर दिया। तब नारी मात्र संतान पैदा करने की वस्तु के रूप में जानी की जाने लगी। द्वापर में द्रौपदी के साथ जैसा हुआ वैसा किसी भी युग की नारी के साथ देखने को नही मिलता है। वह विवाहित हुई अर्जुन की, और पांच पाण्डवों में बटी और किसी वस्तु की तरह जुए में दांव में लगा दी गई, और हारने के उपरान्त दुर्योधन के हाथों में ऐसे सौंप दी गई जैसे किसी कसाई के हाथों में बकरी सौंप दी जाती है। हालांकि उत्तर वैदिक काल ईसा के 600 वर्ष पूर्व से लेकर ईसा के 300 वर्ष बाद तक का युग उत्तर वैदिक काल कहा जाता है। इस काल में महिलाओं की स्थिति में गिरावट आने लगी थी। उत्तर वैदिक काल में पिण्डदान इत्यादि के लिए पुत्र जन्म की कामना रहती थी लेकिन पुत्री के जन्म पर कोई विशेष आपत्ति नहीं होती थी। इस युग में महिलाओं में धार्मिक अधिकारों को सीमित कर दिया गया। इस काल में महिला को यज्ञादि कर्मो, बाल विवाहों को प्रचलन तथा विधवा पुनर्विवाह पर रोक लगाना शुरू हो गया था। "अनुलोम–प्रतिलोम विवाहों के प्रतिबंध, स्त्री शिक्षा को सीमित करना, उपनयन संस्कार की औपचारिकता, कर्मकाण्डों की जटिलता की शुरूआत इसी काल में हुई। मनु और याज्ञवल्क्य जैसे स्मृतिकारों के द्वारा महिलाओं पर प्रतिबंधात्मक निर्देश तथा पतिव्रत धर्म का पालन करना और पति को परमेश्वर के रूप में मानने की प्रथा प्रारम्भ हुई, माना जाता है, कि इस युग में वैदिक युग

का प्रभाव बना हुआ था। इस कारण से उनकी स्थिति विपरीत रूप से अधिक प्रभावित नहीं हो सकी। इससे केवल अशिक्षित और अल्प–शिक्षित तथा निम्न वर्ग की स्त्रियों ही प्रभावित हुई। अभिजात्य वर्ग की कुलीन महिलाएँ अपनी शिक्षा और सम्पन्नता के बल पर पुरूषों के साथ समानता का व्यवहार पाती थी। गौरतलब है कि 11वीं शताब्दी से 18 शताब्दी के काल को मध्यकाल कहा जा सकता है। इस काल को स्त्रियों की दृष्टिकोण में काला युग कहा जा सकता है। भारत में राजाओं की आपसी फूट का फायदा मुस्लिम शासकों ने उठाया और भारत देश पर अपना आधिपत्य कायम कर लिया। कुछ एक बादशाहोंने जोर–जबरदस्ती करके धर्म परिवर्तन करवाया तथा महिलाओं के साथ ज्यादतियों शुरू कर दी जिसके परिणामस्वरूप हिन्दुओं ने स्त्रियों पर अनके प्रतिबंधात्मक निर्देशों और स्मृतिकारों की मनगढन्त बातों को धार्मिक स्वीकृति प्रदान किया यह भी कहा गया कि स्त्री को कभी अकेले नहीं रहना चाहिए उसे किसी ने किसी के संरक्षण में ही रहना चाहिए। बाल्यावस्था में पिता के, युवावस्था में पति के और वृद्धावस्था में पुत्र के संरक्षण में रहने का विधान भी इसी युग में दिया गया। इस काल में नारी की दशा दयनीय हो गई। पर्दा प्रथा ने नारी को घर की 'चारदीवारी की कैद में रहने के लिए मजबूर कर दिया गया, और बाल विवाहों का बाहुल्य हो गया तथा शिक्षा के द्वार उसके लिए लगभग बन्द कर दिये गये। इसके साथ–साथ ही सती प्रथा भी अपने शिखर पर पहुंच गयी थी। इस काल में महिलाओं को घर के कामकाज तक ही सीमित कर दिया गया। पति परमेश्वर धर्म और पति के आदेशों पर महिलाओं को चलने का कड़ाई से पालन इसी काल में हुआ। वस्तुतः मध्यकाल में स्त्रियों की स्वतंत्रता सभी प्रकार से छीन ली गयी और उन्हें जन्म से मृत्यु तक पुरूषों के अधीन कर दिया गया। यदि इसे भारतीय नारी का दुर्भाग्य कहें या कुछ और कि उसे एक तरफ देवी बनाकर पूजा जाता है, तो दूसरी ओर सेविका बनाकर शोषण किया जाता है, एक युग था, जब नारी को पत्थर की मूर्तियों के भेंट चढ़ाया जाता था और अंत में वेश्यालयों में बेच दिया जाता था। पुरूष अपने स्वार्थो की पूर्ति के लिए नारी का उपयोग एक वस्तु की तरह करता आया है। पुरूष ने स्त्री मन में यह भावना संस्कार की तरह कूट–कूटकर भर दी है कि वह सिर्फ और सिर्फ शरीर है। शरीर के सिवा पुरूष किसी और पहचान से इन्कार करता है। वही कंकाल उपन्यास में प्रसाद ने स्वीकार किया है कि पुरूष नारी को उतनी ही शिक्षा देता है जितनी उसके स्वार्थ में बाधक न हो। कन्याओं को जन्म लेते ही मार दिया जाता था अब पुरूषवादी समाज ने विज्ञान की नई तकनीक का प्रयोग करके औरत को मारने तथा उसे जड़ से मिटाने के नये तरीके का प्रयोगकर रहा है। यदि भ्रूण को ही मार दिया जाए तो शिशु को मारने की नौबत नहीं आयेगी। एक भयानक सच यह भी है कि हमारे संभ्रान्त समाज में आज भी बेटियों को गला दबाकर मार दिया जाता है। बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में बेटी का जन्म होते ही उसे पैदा करवाने वाली स्त्री नवजात का गला दबाकर या आक का दूध पिलाकर बच्ची की जान ले ली जाती है। इसका एक मात्र कारण "समाज में औरतों को बराबरी का दर्जा न मिल पाना है क्योंकि पुरूष आज भी नही चाहता कि नारी उसके समक्ष आकर खड़ी हो। हमारे समाज में औरतों पर लगी पाबंदियाँ आज भी ज्यों की त्यों हैं। पुरूष चार जगह प्रेम करे या तीन शादियाँ, वह स्वतंत्र है। उसे समाज बहिष्कृत नहीं करता। उसे कुलटा और करमजली नहीं कहा जाता है। और यदि स्त्री अपना जीवन अपने अनुसार बिताना चाहे तो सारे नियम बदल जाते हैं। उसे तरह–तरह के नामों से सम्बोधित किया जाता है। जिसको नारी कभी सपने में भी नहीं सोच सकती, कि जिस पुरूष पर स्त्री अपना सब कुछ निछावर कर देती है, वही पुरूष उसके साथ अत्याचार करता है। और नारी की विवशता को अनुचित लाभ उठाने से भी नहीं चूकता। वर्तमन परिवेश में तो नारी पर दहेज के नाम पर, बलात्कार का शिकार बनाकर, मारपीट करके अपना गुलाम बनाना आम बात हो चुकी है। बहुत बार तो परिवारों में महिला को निकटतम सम्बन्धियों के यौन शोषण का शिकार होना पड़ता है जिनसे वो अपनी सुरक्षा की आशा लगाती है वो ही इज्जत को तार–तार करते रहते हैं जिसको अपना नसीब मानकर जुल्मों को बर्दाश्त करती है और ईश्वर से जरूर कहती है कि अगले जन्म में मोहे बिटिया न कीजौ।

सन्दर्भ :

1. श्रीवास्तव, के0सी0, प्राचीन भारत का इतिहास व संस्कृति
2. लता, डॉ0 मंजू, अनुसूचित जाति में महिला उत्पीड़न, पृ0 56
3. कौर, डॉ0 अजुमन दीप, कामकाजी नारी, उपलब्धि और संताप के दायरों में, पृ0 113
4. वर्मा, डॉ0 ओ0 पी0, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, विकास प्रकाशन, पृ0 132
5. यादव, राजेन्द्र, आदमी के निगाह में औरत, पृ0 83
6. मनीषा, हम सभ्य औरतें सामायिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 38
7. सिंह, चेतवन, चन्द्र, क्या अपराध है –औरत होना?, पृ0 92

****